प्रकाशक
चन्द्रराज भण्डारी,
संचालक—
ज्ञान-मन्दिर,
भानपुरा (इन्दौर-स्टेट)

विशेष धन्यवाद

कानपूरके सुप्रसिद्ध व्यवसायी और मिल ऑनर विद्या प्रेमी लाला पदम पतिजी सिंहानिया ने इस ग्रन्थके लिए कागजकी महंगीके इस सङ्कटपूर्ण समयमें विशेष सहायता पहुँचाकर हमारे मार्गको प्रशस्त किया है, इसलिए हम उनको कृतज्ञता पूर्ण हृदय से हार्दिक धन्यवाद देते हैं।

लेखक—

मुद्रक—
मथुराप्रसाद गुप्त,
ज्ञान प्रेस, करनघण्टा, बनारस।

PATRONS.

Rulers.

1—His Highness Maharajadhiraj Sir George Jiwaji Rao Scindia Alijah Bahadur G. C. I. E., Gwalior.

2—Late Lieutenant colonal His Highness Maharao Sir Ummed Singh Bahadur G. C. S. I. G. C. I. E. G. B. E. Kotah.

3—Lieutenant His Highness Maharaja Krishna Kumar Singh Bahadur. Bhawnagar.

4—Lieutenant colonal His Highness Maharaja Jam Sahab Sir Digvijay Singh Bahadur K. C. S. I., Nawanagar.

5—Lieutenant colonal His Highness Maharaja Lokendra Sir Govind Singh Bahadur G. C. S. I., K. C. S. I., Datia,

6—Lieutenant His Highness Maharaj Rana Rajendra Singh Badadur. Jhalawar.

7—Captain His Higanhss Maharaja Mahendra Sir Yadvendra Singh Bahadur K. C. S. I., K. C. I. E., Panna.

8—Rai Bahadur Devi Singh Diwan Rajgarh State. Rajgarh.

Bankers.

9—Lala Padampatiji Singhania Cawnpore.

10—Seth Magni Ramji Ram Kumarji Bangar Didwana.

11—Rai Bahadur Rajya Bhushan Danbir Seth Hiralalji Kashaliwal Indore.

12—Seth Sohanlalji Shubhakaranji Ratanlalji Dugar Fatehpur.

13—Seth Chunilal Bhaichand Mehta Bombay.,

स्मृति

स्व० सेठ कमलापतजी सिंहानिया कानपुर
की स्मृतिमें

विषय सूची

(१)

हिन्दी

विषय सूची

(२)

संस्कृत

विषय सूची

(३)

मराठी

विषय सूची

(४)

गुजराती

विषय सूची

(५)

वंगला

Index.

Latin Names.

विषय सूची

(७)

(रोगानुक्रम से)

इस विषय सूचीमें इस ग्रन्थमें आई हुई औषधियां जिन २ रोगों पर काम करती हैं उनमें से कुछ खास २ रोगोंके नाम और औषधियोंके नाम पृष्ठांक सहित दिये जारहे हैं। सब रोगोंके नाम इसमें नहीं आसके इसलिये उनका विवरण ग्रन्थके अन्दर ही देखना चाहिये। जिन रोगोंके अन्दर जो औषधियां विशेष प्रभावशाली और चमत्कारिक हैं उनपर पाठकों की जानकारीके लिये ऐसे फूल ❀ लगा दिये गये हैं:—

अतिसार

उन्माद हिस्टीरिया और माली खोलिया

उदरशूल, उदररोग और आफरा

उपदंश

कुष्ठ

कण्ठमाला

कृमिरोग

कर्णरोग

खांसी

गठिया, सन्धिवात और आमवात

चर्मरोग रक्तविकार विस्फोटक और दुष्टव्रण

ज्वर

जलोदर

दंतरोग

दाद

दमा

नेत्ररोग

नारू

नपुंसकता और वाजिकरण

पाण्डुरोग

प्लेग

पथरी और मूत्राघात

प्रदर

पीलिया और कामला

तिल्ली और यकृत सम्बन्धी रोग

मासिक धर्म सम्बन्धी रोग

पित्ती

पागल कुत्ते का विष

बंध्यत्व

बालरोग

बवासीर

मस्तकशूल और आधाशीशी

मृगी

स्थावर विष

मन्दाग्नि

लकवा या पक्षाघात

संग्रहणी

शस्त्रके जखम और दूसरे घाव

सर्प विष

स्कर्वी

सूजाक

सूजन

हृदयरोग

हड्डी का टूटना और मोच आना

हैजा

हिचकी

क्षय या राज यक्ष्मा

वनौषधि-चन्द्रोदय

(पाँचवां भाग)

वनौषधि-चन्द्रोदय

(पांचवां भाग)

तूतिया (नीला थूथा)

नाम:—

संस्कृत—तुत्थ, मयूर तुत्थ। हिन्दी—नीला थूथा, नीला तूतिया। बंगाल—तूतिया। गुजराती—मोर थूंथूं। करनाटकी—मयूर तुत्था। तेलगू—मेलतूतू। अंग्रेजी—Sulphate of copper, फ़ारसी—दूदिया। यूनानी—तूतिया। लेटिन—cuprum Sulphas (कुप्रम सल्फाज)

वर्णन—

यूनानी ग्रंथकारोंके मतानुसार तांबेको सफेद फिटकिरीके साथ जलाकर तूतिया तयार किया जाता है। डाक्टरों के मतानुसार तांबेका बुरादा गंधकके तेज़ाबमें डालकर आंच देने से नीला थूथा तयार होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे नीला थूथा चरपरा, नमकीन, कसेला, वमनकारक, हलका, शीतल, नेत्र रोग नाशक तथा कफ, पित्त, विप, पथरी और खुजलीको नष्ट करने वाला है।

नीला थूथा वमन, मंडल कुष्ट चित्र कुष्ट, दाद, और विषके विकारोंमें लाभ दायक है।

यूनानीमत—

यूनानी मतसे यह चौथे दर्जेमें गरम और खुश्क है। अधिक मात्रामें वमनकारक और कम मात्रामें काबिज है। बहुत अधिक मात्रामें यह जहर होता है और इससे वमन, मतली और आमाशय तथा पेशाबमें जलन होकर रोगीकी मृत्यु हो जाती है। इसके विषको नाश करनेके लिये घी, दूध, इत्यादि चिकनी चीजें मुफीद होती हैं।

अगर किसीने अफीम, धतूरा आदि विष खा लिया हो तो ५ ग्रेनसे १० ग्रेन की मात्रामें नीला थूथा देनेसे उल्टी होकर विषका प्रभाव निकल जाता है। कब्ज, पेटकी जलन और पेचिश की बीमारी जब पुरानी हो जाती है और रोगी बहुत कमजोर हो जाता है तब इसको पाव ग्रेन से लेकर १ ग्रेन तक की मात्रामें आधी या पाव ग्रेन अफीमके साथ मिलाकर दिनमें ३ बार दिया जाता है।

मिरगीकी बीमारीमें इसको चौथाई ग्रेनकी मात्रामें कुनेनके साथ देनेसे लाभ होता है। कम्पवात और हिस्टीरिया में भी यह लाभदायक है। पुराने सुजाककी बीमारीमें इसकी पिचकारी बहुत मुफीद है। मुंहके छालोंमें इसको १ रत्तीकी मात्रामें शहदके साथ मिलाकर लगाना चाहिये।

आंखकी पलकोंकी झिलीमें अगर कफकी वजहसे दाने पड़ गये हों तो उनपर इसको लगानेसे बड़ा लाभ होता है। पलकको उलटकर उसपर इसका लोशन लगाकर फौरन ठंडे पानीसे धो देना चाहिये।

उपदंशके कारण जब हलकमें जखम हो गये हों तो उनपर लगानेके लिये यह अद्वितीय दवा है। कमजोर जख्मोंपर नीले थूथेकी जगह इसका लोशन लगाना ज्यादा अच्छा होता है। इसका लोशन १ ग्रेन पानी में १ औंस नीला थूथा डालनेसे बनता है।

नीला थूथा सूजन और बद गांठको भी बिखेर देता है। कफको छांटता है। पेटके कीड़ोंको मारकर निकाल देता है। आंखके जालेको साफ कर देता है। आँखकी सुर्खीको दूर करके वेदना को शांत करता है।

नीला थूथा पूरा भुना हुआ और सुहागा आधा भुना हुआ इन दोनोंको समान भाग लेकर पीसकर मूंगके बराबर गोलियां बनाले जिस बच्चेको डब्बेकी बीमारी हो उसको १ से लेकर तीन तक गोली उसकी मां के दूधके साथ मिलाकर पिलावें इससे उल्टी और दस्त होकर रोग दूर हो जाता है।

दमेके रोगमें ४ रत्ती तक नीला थूथा गुड़में रखकर निगला देना चाहिये। इसके सेवनसे ३ दिनतक रोगीको गर्मी और बेचैनी बहुत रहती है। हर बार दवा खानेके बाद

उल्टी और दस्त होते हैं। बहुत उग्र चिकित्सा है। जो लोग सहन न कर सकें उनको यह नहीं लेना चाहिये। जो सहन कर सकें उनको बेचेनीसे घबराना नहीं चाहिये। अगर दस्त और उल्टी से ज्यादा घबराहट हो तो मूगकी खिचड़ीमें काफी घी मिलाकर खाना चाहिये। ३ रोजके बाद यह बेचेनी कम हो जाती है। खजाइनुल अदवियाके लेखकका कथन है कि २० वरस तकका दमा इससे जाता रहता है।

यूनानी हकीमोंके मतसे उपदंश, कोढ़, तथा फोड़े-फुन्सीके लिये नीला थूथा अनुभव सिद्ध औषधि है।

नीले थूथेको शुद्ध करनेको विधिः—

बिल्ली और कबूतर की बींठ समान भाग लेकर इन दोनोंके वजनके बराबर नीला थूथा और नीले थूथेका दसवां भाग सुहागा लेकर सबका खरलकर सराव सम्पुटमें रख थोड़ी आंचमें फूंक दें। ऐसे तीन आंच देकर फिर दही दूधके साथ अलग २ आंच देनसे नीलाथूथा शुद्ध हो जाता है।

नीले थूथे की भस्म बनाने की विधि—

शुद्ध नीले थूथे में शुद्ध गन्धक और शुद्ध सुहागा मिला कर कटहल के रस में खरल करके सराव सम्पुट में रख कर कुक्कुट पुट में १।२ बार आंच देने से बहुत उत्तम भस्म तैयार हो जाती है।

उपयोग—

अतिसार—पुराने आमातिसार और अतिसारमें चौथाई ग्रेन नीलाथूथा देनेसे लाभ होता है।

पित्ति—तांबे के जिन पैसों पर कीट आ गया हो उनको इमली की खटाइमें घण्टे दो घण्टे तक रखकर पित्ती वालेके शरीर पर मालिश करने से लाभ होता है।

विप विकार—नीले थूथे को मट्ठे पर छिड़ककर विप खाये हुए मनुष्य को पिलानेसे वमन होकर विप निकल जाता है।

(२) अफीम, धतूरा, कुचला, वच्छनाग, संखिया और दूसरी चीजों का विप उतारने के लिये नीले थूथे को २॥ रत्ती की मात्रामें कुनकुने जलके साथ देना चाहिये। अगर इससे आध घण्टेमें असर न हो तो उतनी ही मात्रामें फिर देना चाहिये।

मूत्रकृच्छ्र—७ माशे नीला थूथा और ७० माशे त्रिफला को कूट कर रात भर पानीमें भिगोंकर प्रातः काल उस पानी की पिचकारी देनेसे मूत्रकृच्छ्र मिटता है।

घाव- इसको महीन पीसकर घाव पर भुरभुराने से घावसे रुधिरका निकलना वन्द होकर घाव भर जाता है। मगर इससे जलन वहुत होती है।

दन्त पीड़ा—इसको अग्निपर चढ़ा कर लोहेके दस्तेसे महीन घोट कर फिर उतार कर दांतों पर मलनेसे दन्त पीड़ा दूर होती है।

नेत्र पीड़ा—इसका लोशन आंखोंमें डालने से नेत्र पीड़ा मिटती है।

नीला थूथा शुद्ध करने की दूसरी विधि :—

नीले थूथे को घी और शहद्में खरल करके मूसमें डाल कर आंच देना चाहिये। फिर उसको दहीके तोड़में ३ दिन तक भिगोंकर सुखा लेना चाहिये। इस क्रियासे इसका वमन-कारक प्रभाव कम हो जाता है।

कर्नल चोपराके मतसे नीले थूथे का रंग नीला, चमकदार तथा ठोस रहता है। वाजारू नीला थूथा अशुद्ध रहता है। पानीमें गलाकर इसको शुद्ध किया जाता है और फिर जमाया जा सकता है। हिन्दू वैद्योंने इसको शुद्ध करनेके लिये मुख्य तरीका इस प्रकार वतलाया है। बाजारू नीला थूथा शहद या घीके साथ घिसकर और कुछ समयके लिये धूपमें रखाजाता है। पश्चात् वह ३ रोज तक पानीमें रखा जाता है और फिर धूपमें सुखाया जाता है। रक्तातिसार और पुराने अतिसारमें इसकी पाव ग्रेनसे २ ग्रेन तक मात्रा फायदे मन्द होती है। अफीम, जहरी कुचला और संखियेके विषमें उपयोगमें लिया जाता है। दुष्ट विद्रधिमें भी इसका कमजोर लोशन उपयोगी सिद्ध होता है। नकसीर और दूसरे श्लेष्मिक रक्त श्रावमें ४ ग्रेन नीले थूथे को १ औंस पानीके साथ मिलाकर लोशन वनाना चाहिये।

तेज कम्पून

नाम—

काश्मीर— तालिसफ़र भकसूम। झेलम—नेरा, निचनी। नेपाल—धुपि। पंजाव—तालिसा, तालिशंग, तालिश्री, निचनि, कैफावन। लेटिन—Rhododendrov Antho pogon रोडोडेंड्रोन, एन्थो पोगोन।

वर्णन—

यह एक हमेशा हरी रहनेवाली झाड़ी है। इसका छिलटा कुछ खुरदरा होता है। इसके पत्ते लंव गोल व अण्डाहार होते हैं। ये शाखाओंके अंतमें अधिक लगते हैं। इसके फूल १.२ से २ संटी मीटरके आकारके होते हैं। इसकी फली लंव गोल होती है।

उत्पत्तिस्थान—यह हिमालयमें काश्मीरसे भूटान तक ११००० फीटसे १६००० फीटकी ऊंचाईतक होती है। यह मध्य और उत्तरीय एशियामें भी होती है।

गुणदोष और प्रभाव

इसके पत्ते सुगंधित होते हैं। कई बीमारियोंमें ये उपयोगी माने गये हैं। ये उत्तेजक गुणवाले होते हैं।

हानिंग बर्गरके मतानुसार इसके पत्ते छींक लानेके लिए सूंघे जाते हैं।

इस वृक्षकी एक जाति पूर्वी हिमालयकी ऊंचाइयोंपर होती है। भूतिया लोगोंका कहना है कि इसके सूंघनेसे सिर दर्द और वमन होता है।

कर्नल चौपराके मतानुसार—यह सुगन्धित और उत्तेजक होती है।

तेभ्रक

नाम—

काश्मीर—तेजक। इंग्लिश—Brooklime. Horse-Wel Grass। लेटिन—Veronica Beccabanga (व्हेरोनिका बेकाबंगा)।

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालयके पश्चिम भागमें काश्मीरसे रावलपिंडी तक पैदा होती है। इसका पौधा बालिश्त भर ऊंचा, मान्सल, रुएंदार और पोली डंडी वाला होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति धातुपरिवर्तक और रक्तशोधक होती है। रक्तदोष और स्कर्व्ही रोगमें इसका उपयोग किया जाता है।

इसके ताजा पौधेका रस पूरी मात्रामें मृदु विरेचन करता है। यह वनस्पति कंठ मालाकी सूजनको दूर करनेके लिये बहुत लोकप्रिय औषधि मानी जाती है। इसके पौधे को पीसकर दुष्ट फोड़ों और बवासीरको सूजनपर लेप किया जाता है।

तेजबल

नाम—

संस्कृत—तेजस्विनी, तेजवती, तेजन्या, लघुवल्कला, पारिजाता, इत्यादि। हिन्दी—तेजबल। बंगाल—तेजबल। मराठी—तेजबल, तिरपानी। गुजराती—तेजबल। अंग्रेजी—Toothache Tree टूथेक ट्री। लेटिन Zanthoxylum Hostile (झेन्थोक्सिलम होस्टाइल)।

वर्णन—

तेजबलके वृक्ष हरिद्वार और बद्रीनाथके वनोंमे पैदा होते हैं। इसकी लकड़ी बहुत सख्त होनेको वजहसे औषधि घोटनेके खरलके मूसले इससे बनाये जाते हैं। इस वृक्षकी छाल लाल मिरचके समान चरपरी होती है। इसके फल गोल मिरचके समान होते हैं। जो मछली मारनेके काममें लिये जाते हैं। औषधि प्रयोगमें इसकी छाल और जड़ काममें आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वैदिकमत—आयुर्वेदिकमतसे तेजबल कफ, हृदयरोग, मुखरोग, दंतरोग, हिचकी, मंदाग्नि, बवासीर और कंठरोगको नष्ट करता है।

निघंटु रत्नाकरके मतानुसार तेजबल चटपटा, गरम, कड़वा, अग्निदीपक, पाचक, रुचिकारक, कंठरोग नाशक तथा पित्त, खांसी, श्वास, हिचकी, मंदाग्नि, बवासीर और मुखरोगको नष्ट करता है।

यूनानी मत—यूनानी मतसे यह गरम तथा खांसी, बवासीर, कफ और वायुके रोग, जुकाम और दंत शूलमें फायदा पहुँचाता है। तेजबलको पानीमें पीसकर, उस पानीको १ प्याला भर पीनेसे अफीमका जहर उतर जाता है। इसके गोंदको पीसकर भुरभुरानेसे जखम भर जाते हैं।

दंतशूलको नष्ट करनेके लिये इस औषधिकी विशेष प्रशंसा है।

बनावटें :—

नपुंसकताहर पारद भस्म—४ तोला सरसों का तेल लेकर एक लोहेके चम्मचमें उसको डालकर कोयले की आंच पर गरम करना चाहिये। जब तेल अच्छी तरहसे गरम हो जाय तब उसमें १ तोला हींगलूसे निकाला हुआ शुद्ध पारा डालना चाहिये। उसके बाद उसको उतार कर एक पत्थर की खरलमें डाल देना चाहिये।

इसी अरसेमें एक दूसरी चम्मचमें १ तोला शुद्ध बंग रखकर कोयले की आंच पर तपाना चाहिये। जब वह पिघल जाय तब उसे भी उसी खरलमें डाल कर बहुत शीघ्रताके साथ अच्छी

तरह घोट लेना चाहिये। जव वंग और पारा दोनों अच्छी तरहसे मिलकर एक डलीके रूपमें हो जाय तव उस डली को तेलमें से निकाल कर एक साफ कपड़ेसे अच्छी तरह पोंछ लेना चाहिये। फिर तेजवल की ताजी छाल २० तोला लेकर उसको पीसकर उसकी लुग्दी वना लेना चाहिये और उस लुग्दीमें वंग और पारे की डली को रखकर उसके ऊपर सफेद कपड़े की २ सेर छिंन्दिये लपेट कर गेंद की तरह वना लेना चाहिये। फिर रात्रिमें किसी ऐसे एकान्त स्थानमें जहां हवा न लगती हो वहां उस गोलेको रख कर उसमें आग लगा देना चाहिये। तीसरे दिन उस गोलेके ऊपर का कपड़े का भाग हलके हाथसे दूर करके उसके अन्दर की भस्म को निकाल लेना चाहिये। इस क्रियामें वंग कच्ची रहकर अलग वैठ जाती है और पारद पतासे की तरह खिलकर अलग जम जाती है।

इस भस्ममें से १ रत्ती भस्म एक छुहारे को लेकर उसको वीचमें से चीर कर उसकी गुठली निकाल कर उसमें भर देना चाहिये और फिर छुहारे को ज्यों का त्यों जोड़ कर उसके ऊपर कच्चा सूत लपेट कर उसको गायके १ सेर दूधमें डोला यन्त्र की विधिसे पका कर जव दूध रवड़ी की तरह हो जाय तव उसमें तीन तोला देशी शक्कर डाल कर उतार लेना चाहिये। पारद भस्म वाली खारक को खाकर ऊपरसे यह दूध पी लेना चाहिये।

इस प्रकार २१ दिन तक इस प्रयोग को करना चाहिये। जव तक यह प्रयोग चले तव तक रोगी को स्नान, तेल, मिरची, खटाई और निमक का परित्याग करना चाहिये। साथमें घी दूध का सेवन विशेष करना चाहिये। इसके साथ ही नीचे लिखे हुए तेल का प्रति दिन रात्रिको इन्द्रियके ऊपर हलके हाथसे १५ मिनिट तक मालिश करना चाहिये और ऊपरसे नागर वेल का पत्ता गरम करके वांध देना चाहिये।

उत्तम कस्तूरी १ माशा, उत्तम केशर १ माशा, काली मिरच ५ माशा, जुंदवेदस्तर ५ माशा, उत्तम हीरा हींग ५ माशा, वीर वहूटी ५ माशा और विनौले की मगज ७ माशा। इन सव चीजों को अच्छी तरहसे खरल करके चमेलीके ५ तोले तेलमें मिला कर रख लेना चाहिये। इसमें से दस दस पन्द्रह पन्द्रह वूंद प्रतिदिन मालिश करना चाहिये। २१ दिन तक इन दोनों प्रयोगों को करनेके पश्चात् पूर्ण चन्द्रोदय सिद्ध मकरध्वजके समान कोई पौष्टिक रसायन का सेवन करनेसे कष्ट साध्य नपुंसकता भी दूर हो जाती है और रोगी की काम शक्ति अत्यन्त वेगवती हो जाती है।

तेजपात (तमालपत्र)

नाम—

संस्कृत—तमालपत्रा, तेजपत्र, गंधजात, सुरनिर्गन्ध, गोमेदक, पत्राख्य, छदन, अंकुश, इत्यादि। हिन्दी—तेजपात। गुजराती—तमालपत्र। मराठी—तमालपत्र। बंगाल—तेजपात। पंजाब—तमाल पत्र। तेलगू—आकुपत्री। द्राविड़ी—लवंग पत्रम्। फारसी—सादरसू। लेटिन—Cinnamomum Tamala (सिनेमोमम तमाल)।

बर्णन—

यह वृक्ष हिमालयमें ३ हजारसे ८ हजार फीटकी ऊंचाई तक और सिलहट तथा खासिया पहाड़ियोंमें ३ हजारसे लेकर ४ हजार फीटकी ऊंचाई तक पैदा होता है। इस वृक्षकी ऊंचाई २० फुटसे ४० फुट तककी होती है। इसकी छाल भूरे और पीले रंगकी होती है। इसकी कोमल डालियाँ चोकोर, कुछ भूरे रंगकी और चिकनी होती है। इसके फूल सफेद रंगके होते हैं इसका फल आधा इंच लंबा होता है जो पकने पर काला हो जाता है। वैशाखमें इसके नये पत्ते आते हैं। तब यह वृक्ष छोटे पत्तोंके गुलाबी और प्याजी रंगसे बहुत सुन्दर दिखने लगता है। इसके पत्तोंमेंसे एक प्रकारका रंग निकाला जाता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वैदिक मत—आयुर्वैदिक मतसे तेजपातके पत्ते कड़वे, मधुर, उष्ण, विषनाशक और वात तथा खुजलीमें लाभदायक है। ये बवासीर और गुदा द्वारकी दूसरी बीमारियोंमें तथा बड़ी आंतके अधोभागके विकारोंमें लाभ पहुँचाते हैं। त्रिदोष, हृदय रोग, पीनस और अरुचिमें भी ये लाभदायक हैं। इसके पत्ते तजके पत्तोंके समान होते हैं जो मसालेमें डाले जाते हैं।

तमालपत्रका उपयोग कफ और आम प्रधान रोगोंमें विशेष किया जाता है। अजीर्ण, उदर शूल, अतिसार, पाचन-नलिकाके, और गर्भाशयकी शिथिलता और सब प्रकारके कफ रोगोंमें यह उपयोगी वस्तु है। इसके लगातार सेवनसे गर्भपातकी आदत मिट जाती है।

यूनानीमत—यूनानीमतसे यह दूसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है। यह प्राणवायुकी रक्षाकरता है। वात, और पित्त कफके विकारोंको नष्ट करता है। आंतोंकी वायुको बिखेरता है। पेटको शुद्ध करता है। पेशाब, पसीना, दूध और मासिकधर्मको साफ करता है। गुर्दे और मसाने की पथरीको तोड़कर निकाल देता है। पेटकी खराबीसे मुंहमें जो दुर्गंध आती है, उसको यह मिटाता है। पीलिया, जलोदर,

तथा यकृत और आंतोंके रोगमें यह मुफीद है। भय जनित पागलपनमें भी यह लाभदायक है। इसकी धूनी देनेसे गर्भवतीके बच्चा शीघ्र पैदा हो जाता है। इसको हमेशा जबानके नीचे रखनेसे तोतलापन और हकलाहट मिट जाती है। इसको पीसकर आंखमें लगानेसे आंखका जाला और मुंद मिट जाती है। आंखमें होनेवाला नाखुना रोग भी इसके प्रयोगसे कट जाता है। इसको दांतों पर मलनेसे दांत मजबूत हो जाते हैं। और दांतोंमें कीड़ा नहीं लगता। इसके सेवनसे हृदयको शक्ति मिलती है और पागलपनमें लाभ होता है।

पंजाबमें इसके पत्ते संधिवातको दूर करनेके काममें लिये जाते हैं। ये उत्तेजक माने जाते हैं। उदर शूल और अतिसारमें भी इनका उपयोग किया जाता है। इसकी छाल सुजाक में लाभदायक मानी जाती है। प्रसूति के पश्चात इसका चूर्ण या काढ़ा देनेसे प्रसूता को होनेवाला रक्तश्राव कम होता है।

कर्नल चोपराके मतानुसार इसकी छाल पेटके आफरेको दूर करने वाली और इसके पत्ते बिच्छूके विषमें उपयोगी है। इसमें एक प्रकारका उड़नशील तेल पाया जाता है।

उपयोग—

संधिवात—इसके पत्तोंका लेप संधिवातको मिटाता है।

वायुगोला—इसकी छालको पीसकर फांकनेसे वायुगोला मिटता है।

पसीना लाना और पेटका फूलना—इसका काढ़ा पिलानेसे पसीना आता है और आंतों की खराबीसे पेटका फूल जाना, दस्त लग जाना वगैरह आराम हो जाते हैं।

ओकारियां और उबकाई—इसके चूर्णको फंकानेसे उबकाई और ओकारियां मिट जाती हैं।

तिल्लीकी सूजन और अंडकोपकी सूजन—इसकी छालका चूर्ण फंकानेसे तिल्लीकी सूजन और अंडकोपकी सूजन मिट जाती है। सीनेसे सम्बन्ध रखने वाली बीमारियाँ, गर्भाशयका दर्द, पेशाब और मासिक धर्मकी रुकावट वगैरह कई बीमारियोंमें, इससे लाभ पहुंचता है।

सांप और अफीमका जहर—इसकी छालके चूर्णको खिलानेसे सांपका और अफीमका जहर उतर जाता है।

खांसी और जुकाम—इसकी छाल और लींडी पीपल को पीस कर शहदके साथ चाटनेसे खांसी और जुकाम मिटता है।

दमा और श्वास—तेजपात और पीपरको अदरकके मुरब्बेकी चाशनी में चाटनेसे दमा और श्वास नालीका उपद्रव मिट जाता है।

गर्भाशयकी शुद्धि—इसके पत्तोंके काढ़ेसे गर्भाशयका खून और सब मैल वगैरह निकलकर

गर्भाशय शुद्ध हो जाता है।

सर्दीका पागलपन—इसके पत्तोंका हलवा बनाकर खानेसे सर्दीका पागलपन मिट जाता है।

मात्रा—इसकी मात्रा ४ माशेतक है।

तेजपत्र (२)

नामः—

संस्कृत—तेजपत्र, त्वचा, त्वक्पत्रा। लेटिन—Cinnamomum mac ocarpum (सिनेमोमम मेक्रोकारपम)।

वर्णन—

यह वनस्पति उत्तरी कनाड़ामें पैदा होती है। यह तेजपानकी ही एक उपजाति है। इसका वृक्ष मध्यम क़दका और इसका फल लंब गोल होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसकी जड़की छालसे प्राप्त किया हुआ तेल और इसके पत्ते संधिवातकी बीमारीमें बाहरी उपचारकी तरह काममें लिये जाते हैं।

तेजपात (३)

नाम :—

बंगाल—तेजपात, राम तेजपात, किंताने। कुमाऊं—फट घोली। आसाम—पतिचंदा। नेपाल—वरसिंगोली, भलेसिंकोली। लैटिन—Cinnamomum Optusi Folium (सिनेमोमम आप्टूसीफोलियम)।

वर्णन—

यह भी तेजपात की एक दूसरी उपजाति है।

गुणदोष और प्रभाव—

नेपालमें इसकी छाल अग्निमांद्य और यकृतके रोगोंमें काममें ली जाती है।

तेलिया कन्द

नाम :—

संस्कृत—तेल कन्द। हिन्दी—तेल कन्द, तेलिया कन्द। बंगाल—तेल कन्द। मराठी—तेल कन्द।

वर्णन—

पारे की गोली बांधने वाली तथा ताम्बे को सोने के रूपमें परिवर्तित कर देने वाली जो ६४ दिव्य औषधियां आयुर्वेदमें मानी गई हैं उनमें तेलकन्द भी एक है। यह वनस्पति बहुत प्रभावशाली है। मगर आयुर्वेदके किसी प्रमाणिक ग्रन्थमें इस वनस्पति की पहिचानके सम्बन्धमें कुछ भी वर्णन नहीं पाया जाता।

केवल राज निघण्टुमें इस औषधिका परिचय देते हुए लिखा है कि तेलिया कन्दके पत्ते कनेरके पत्तों की तरह और चिकने होते हैं। उनके ऊपर काले तिलके समान छींटे पड़े हुए रहते हैं वे पृथ्वी की तरफ झुके हुए रहते हैं। इस औषधि का कन्द बहुत बड़ा होता है।

गुणदोष और प्रभाव —

आयुर्वेदके मतानुसार तेल कन्द लोह को पतला करने वाला, चरपरा, गरम और वात, अपस्मार, और विषको नष्ट करने वाला है। यह पारे को बांध देता है तथा शरीर और धातुओं को सिद्ध करता है।

जंगलकी जड़ी बूटीके लेखक वैद्य शास्त्री शामलदास गौर लिखते हैं कि हमारी जगन्नाथ की यात्रामें एक परम तेजस्वी वृद्ध महात्माके साथ हमारा परिचय हुआ। उनके साथ दिव्यौषधियों पर वातचीत करते समय जव तेलिया कन्द का प्रसङ्ग आया तव उन महात्माने कहा कि आबू, गिरनार, विंध्याचल, हिमालय, वगैरह पहाड़ोंमें तेलिया कन्द पैदा होते हैं। यह वनस्पति बहुत चमत्कारिक है और भाग्यशाली मनुष्योंके ही हाथमें यह आती है। मेरे हाथमें यह औषधि नहीं आई पर बाल्यावस्थामें जब मैं अपने गुरुके साथ फिरता था तब एक बार बद्रीनारायणके रास्तेमें एक पहाड़ पर मेरे गुरु की दृष्टि अकस्मात एक पौधेके ऊपर पड़ी। उसके पत्ते मूलीके पत्तोंसे मिलते हुवे परन्तु रंगमें पीले थे और उनके ऊपर जैसे तेल चुपड़ा हुआ हो ऐसा दिखलाई देता है। यह पौधा ऊंचाईमें करीब २ फुट और घेरावमें लगभग १॥ फुट था। इस सारे पौधे पर करीब ३ पत्ते थे। इस पौधे का पिण्ड मुट्ठीमें आ जाय इतना मोटा था। इस पिण्ड की छाल आम की छालसे मिलती हुई थी और इस पर पीले रंगके फूल आये हुए थे। इस पौधेके नीचे की मिट्टी जैसे तेलमें भींगी हुई हो ऐसी दिखलाई देती थी। मेरे गुरु उस पौधे को देखते ही एकाएक रुक गये और आश्चर्य भरी

दृष्टि से उस पौधे को देखने लगे। कुछ देर बाद उन्होंने मुझे कहा कि बच्चा, काम हो गया। ऐसा कह करके उन्होंने अपनी झोलीमें से १० रुपये मुझे निकाल कर दिये और कहा कि पास हीके गांवसे १ कुदाली और १ बकरी खरीद कर ले आ। जब मैं दोनों चीजें लाया तब उन्होंने कुदालीसे उस पौधे की आसपास की जमीन को खोदा। जब उसके नीचे की गांठ दिखलाई देने लगी तब खोदने का काम बन्द करके उस बकरी को १ रस्सीसे उस पौधेके बांध दी और दोनों व्यक्ति एक झाड़ पर चढ़ गये। इधर बकरी उस बन्धन को छुड़ानेके लिये जोरसे खींच तान करने लगी। जिससे वह पौधा कन्दके साथ उखड़ गया और उस कन्दके नीचेसे फुफकार मारता हुआ एक अत्यन्त भयंकर सांप भी निकल आया। यह सांप इतना क्रोधित हो रहा था कि बकरी उस कन्द को लेकर २० हाथ भी नहीं पहुँची होगी कि इतने ही में उसको पकड़ कर १०।२० जगह काट लिया। बकरी तो देखते २ प्राण हीन हो गई। मगर वह सर्प इतना क्रोधित था कि मरनेके बाद भी उसको काटता रहा और जब तक बिलकुल हीनवीर्य नहीं हो गया तब तक उसे काटता रहा और अन्तमें उस बकरी पर फन को पछाड़ाते हुए खुद भी मर गया।

जब वह सर्प मर गया तब हम दोनों झाड़ परसे नीचे उतरे और उस कन्द को उठाया। इस कन्द का वजन करीब ४ सेर था और इसको दबानेसे तेलिया रंगका लाल रस निकलता था।

इस औषधिका किस प्रकार उपयोग किया जाता है इसको प्रकाशित करनेकी गुरुजी की आज्ञा नहीं होनेसे मैं इसको प्रकाशित नहीं कर सकता। फिर भी इतना कह सकता हूँ कि इस रससे पारेकी गोली बांधी जाती थी और उस गोलीके संयोगसे तांबा और चांदीके समान हलकी धातुएं सोनेके रूपमें बदल जाती थीं। इसके अतिरिक्त इस गोलीको आधा घंटे तक दूधमें रख कर उस दूधको पीनेसे दुसाध्य नपुंसकको भी पुरुषार्थ प्राप्त होजाता था। इसके सिवाय वायु, उन्माद, सूजन, जलोदर, इत्यादि रोगों पर भी यह औषधि बहुत अच्छा काम करती थी।

सुप्रसिद्ध वनस्पति शास्त्री रूपलालजी वैश्यने बूंटी दर्पण मासिक पत्रके सन १९२६ के अक्टोबरके अंकमें लिखा था कि श्रीभैय्यालाल पांडेयकी तरफसे तेलिया कंदके नामसे एक सारा पौधा मुझे मिला है। इस पौधेका चित्र भी इस अंकमें दिया जारहा है। चित्रसे मालूम होता है कि इस पौधेके पत्ते चिकने तो हैं मगर ये कनेरके पत्तोंकी तरह नहीं है बल्कि सूरणके पत्तोंकी तरह हैं। इसके पत्तोंके ऊपर काले तिलके समान छींटे नहीं है। परन्तु डंडीके ऊपर ऐसे छींटे अवश्य हैं। इसका कंद तेलिया रंगका और कुछ त्रिकोणाकार है। ऐसा कहा जाता है कि तेलिया कंदका कंद बहुत बड़ा होता है। मगर यह कंद तो साधारण आलूके बराबर ही है।

इससे ऐसा मालूम होता है कि यह पौधा बहुत छोटी ऊमरका है। भैय्यालाल पांडेयका कथन है कि इस पौधेके आसपासकी भूमि हमेशा तेलमें भींगी हुई रहती है और जहांसे यह कन्द निकाला गया था उसके आसपास कोई दूसरा पौधा देखनेमें नहीं आया।

अनुभूत योग मालाके सन १९३४ के अक्टोबर मासके अंकमें इस कंदका परिचय देते हुए लिखा था कि दक्षिण और मध्य भारतमें एक ऐसा विचित्र कंद पैदा होता है जो अत्यन्त दुर्गम पहाड़ी स्थानों पर होता है। जहां मनुष्यकी पहुँच बहुत कठिनतासे होती है। इस कंदको तेलिया कंद कहते हैं। इसमेंसे काले रंगकी तेलकी धार बहती रहती है। जो पृथ्वी और पत्थरों के ऊपर बहती हुई नजर आती है और उसी तेलकी चिकनाईसे यह पता चलता है कि इस जगह पर तेलिया कंद है। वृद्ध लोगोंका कथन है कि ताम्बे को अग्निमें गलाकर उसमें अगर तेलिया कंदका रस डाल दिया जाय तो वह सोना हो जाता है। अगर कोई मनुष्य इस कंदके रसका सेवन करे तो उसे कभी बुढापा नहीं आता।

इन सब बातोंमें सत्यका कितना अंश है यह कुछ भी नहीं कहा जा सकता। अभी तक यह वनस्पति, वनस्पति शास्त्रके विद्वानों और जन साधारणकी जानकारीमें नहीं आई है। फिर भी साधुसन्तोंके मुंहसे इसके विषयमें कई आश्चर्य जनक बातें सुननेमें आती हैं। इसी प्रकार रस ग्रंथोंमें भी इस वनस्पतिके सम्बन्धमें कई आश्चर्यजनक बातें पाई जाती हैं इससे मालूम होता है कि अवश्य ही यह चमत्कारिक वनस्पति है जो आधुनिक जन समाजके ज्ञानसे छिपी हुई है। ऐसी दिव्य वनस्पतिके सम्बन्धमें खोज करनेका भार प्रत्येक वैद्यको महसूस करना चाहिये।

तोड़

नाम:—

यूनानी—तोड़।

—वर्णन

यह वृक्ष समुद्रके किनारे पर पैदा होता है। इसका फल इमलीकी तरह होता है। जिसका स्वाद कुछ कसेला होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका फल दुधारू जानवरोंको खिलानेसे उनका दूध बहुत बढ़ जाता है। इस औषधिके सेवनसे कुष्ठमें भी लाभ होता है। (ख० अ०)

तोड़ी

नामः—

यूनानी—तोड़ी। तेलगू—दूटीकारा।

वर्णन—

यह एक प्रकारकी बेल होती है। जो तरकारी बनानेके काममें आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह गरम और खुश्क है तथा कफ, वायु और पीलियाके रोगोंमें लाभदायक है। (ख० अ०)

तोड़ा मारम

नाम—

लेटिन—मलयलम—तोड़ा मारम। मद्रास—चारावू। तामील—मदना गमेसुवरि। अंग्रेजी Ohina Fern polm चाइना, फर्न, पाम। Cycas Rumphii साइकास रंफी।

व० विवरण इसका वृक्ष १-८ मीटरके आकार का होता है। इसके पत्ते ६ से १.८ मीटर तक लम्बे होते हैं। इसके पत्र बृन्त चौकोर और जाड़े रहते हैं। इसके बीजे फिसलने होते हैं।

उत्पत्तिस्थान—चीन, दक्षीणी जापन, फारमोसा, टाकिंग। यह वनस्पति भारतवर्षके बगीचोंमें भी बोई जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति कफ निस्सारक और पौष्टिक मानी जाती है।

कर्नल चोपराके मतानुसार—इसका गोंद दुष्ट व्रणोंपर लगानेके काममें लिया जाता है। यह वेदना शून्यता लानेवाला है।। इसका छिलका वेदना शून्यता लानेवाले गुणके कारण अधिक मशहूर है।

कुर्जके मतानुसार—इसका गोंद दुष्ट व्रणोंपर लगाने काममें लिया जाता है। यह बहुत कम समयमें ही मवाद पैदा कर देता है।

कम्बोडियामें इसकी वगैर पत्तिदार गठान पानीमें पीसली जाती है। ये चांवलके पानीके साथ अथवा पानीके साथ भी पीसकर छान ली जाती है। इसे पके हुए घावोंपर, सूजी हुई ग्रन्थियों पर और फोड़ों पर लगाते हैं।
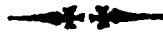
तोदरी सफेद

नाम—

पंजाब—तोदरी सफेद। हिन्दी—तोदरी सफेद। युनानी और उर्दू—तोदरी सफेद। लेटिन—Mathiola Incana (मेथिओला इनकेना)।

वर्णन—

इस वनस्पतिका मूल उत्पत्ति स्थान पश्चिमी यूरोप और भूमध्य सागरका प्रान्त है। मगर अब यह भारतवर्षके बगीचोंमें भी बोई जाती है। इसका पौधा ३० से लेकर ६० सेंटि मीटर तक लंबाहोता है। इसके पत्ते लंबे, और फूल बैंगनी तथा लाल होते हैं। इसकी फलियां८से लेकर १० सेंटिमीटर तक लंबी होती हैं जिनमें मसूरके दानोंके समान छोटे, चपटे और चौड़े बीज भरे हुए रहते हैं। ये बीज तीन जातियोंके होते हैं। लाल, पीले और सफेद। सफेद बीज लाल और पीले बीजोंसे कुछ बड़े होते हैं। गुणमें पीले रंगके बीज अच्छे होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जेमें गरम और तर हैं। कोई २ इसे खुश्क भी बतलाते हैं। इसके बीज काम शक्ति वर्धक, धातुको पुष्ट करने वाले और शरीर को मोटा बनाने वाले होते हैं। इनके सेवनसे कामेंद्रियमें बहुत उत्तेजना होती है। गालोंका रंग निखर जाता है। आवाज साफ

होजाती है। खांसी मिटती है। इनको पानीमें पीसकर लेप करनेसे सूजन बिखर जाती है। तथा शहदमें मिलाकर चाटनेसे फेफड़ेमें जमा हुआ कफ निकल जाता है।

इनको पोटलीमें बांधकर गायके दूधकी कढ़ाहीमें लटकाकर उस दूधको उबालकर पीनेसे कामोत्तेजना होती है। इसके बीजों को ६ माशेकी मात्रामें लेकर उसमें ६ माशे शक्कर मिलाकर देनेसे स्त्रियोंके स्तनोंमे बहुत दूध बढ़ता है। गृध्रसी और पोलियामें भी यह मुफीद है।

साहिबे कामिलके मतसे यह बदनमें तरी पैदा करती है। आमाशय और आंतोंकी सरदी को मिटाती है। हाजमें को बढ़ाती है। इसको पीसकर लेप करनेसे कारबंकल अथवा पीठपर होनेवाले फोड़ेकी सूजन और अंडकोषकी सूजन भी मिट जाती है। इसको शहदमें पीसकर आंखमें लगानेसे आंखका जखम अच्छा होता है और मैल साफ होजाता है। इसका काढ़ा शराबके साथ पीनेसे विषके उपद्रव मिटते हैं।

मुजिर—इसको अधिक मात्रामें अधिक दिनों तक सेवन करनेसे पेटके भीतरी अंगों को नुकसान पहुँचता है।

दर्पनाशक—इसका दर्पनाशक जरे शक है।

प्रतिनिधि—इसके प्रतिनिधि बहमन सुर्ख और बहमन सफेद है।

मात्रा—इसकी साधारण मात्रा ६ माशेसे ९ माशे तक है। मगर जहरके उपद्रवोंको दूर करनेके लिये इसको मात्रा १० माशेसे १५ माशे तक है।

इमर्सनके मतानुसार इसके पत्ते नासूरकी बीमारीमें अन्तः प्रयोगमें काममें लिये जाते हैं। इनको शराबके साथ मिलाकर देनेसे जहरीले जानवरोंका जहर दूर होता है।

कर्नल चोपराके मतानुसार इसके बीज कामोद्दीपक, उत्तेजक, कफ निस्सारक और विष नाशक होते हैं।

तोदरी सुर्ख

नाम—

हिन्दी—तोदरी सुर्ख। बंगाल—खुएटी। यूनानी—तोदरी सुर्ख। लेटिन—Cheiranthus Cheiri (चिरेंथस चेरी)।

वर्णन—

इन वनस्पतिका मूल उत्पत्ति स्थान मध्य और उत्तरी यूरोप है मगर अब यह भारतके

बगीचोंमें भी बोई जाती है। यह एक बहुशाखी झाड़ी होती है। इसके पत्ते बरछी आकारके रहते हैं। इसके फूल बड़े, हलके पीले और लाल रंगके रहते हैं। इसकी फली ४ से ६ सेंटिमीटर तक लंबी होती है। जिसमें बीज भरे रहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके बीज पौष्टिक, मूत्रल, कफनिस्सारक, अग्निवर्द्धक और कामोद्दीपक होते हैं। ये सूखी खांसी, ज्वर, और आंखोंकी बीमारीमें लाभदायक हैं।

इसके फूल हृदयको पुष्ट करनेवाले, ऋतुश्रावनियामक और पक्षाघात तथा नपुंसकताको दूर करनेवाले होते हैं।

रासायनिक विश्लेषण—इसके पत्तों और बीजोंमें चेरीनाइन नामक उपक्षार पाया जाता है और इसके फूलोंमें क्वर्सिटिन (quercetin) नामक पदार्थ पाया जाता हैं।

कर्नल चोपराके मतानुसार यह वनस्पति ऋतुश्राव नियामक है।

थन

नाम :—

बरमा—थन। लेटिन—Terminalia oliveri (टर्मिनेलिया ओली व्हेरी)।

वर्णन—यह एक मध्यम कदका वृक्ष होता है जो उत्तरी बरमामें पैदा होता है। इसके पत्ते गोलाकार और फूल छोटे होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—केस और महस्करके मतानुसार इसकी छाल हृदय को पुष्ट करने वाली और मूत्रल होती है।

थिट्टो

नाम :—

बरमा—थिट्टो। तामील—सेवाइ। तेलगू—सेवामनु। लेटिन—Sandoricum Indicum (सेण्डोरिकम इण्डिकम)।

वर्णन—

इस वनस्पतिके वृक्ष की ऊंचाई १२ से लेकर २४ मीटर तक की होती है और इसके पिण्डकी गोलाई ४५ से ५० सेंटिमीटर तक होती है। इसके पत्तों की लम्बाई २३ से लेकर ४५ सेंटिमीटर तक होती है। इस वनस्पति की खेती वरमामें बड़े पैमाने पर होती है। इसके अतिरिक्त पेगू और टेनेसेरिमके जंगलोंमें तथा सीलोनमें भी यह वनस्पति पाई जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका पौधा सुगन्धित, अग्निवर्धक और आक्षेप निवारक माना जाता है। जावा और फिलिपाइन्सके अन्दर यह एक जोरदार सङ्कोचक द्रव्य की तरह काममें लिया जाता है।

रंफियसके मतानुसार इसका पौधा जो कि कड़वा होता है जलके साथ घिस कर एक शान्तिदायक पदार्थके रूपमें दिया जाता है। अतिसार (Dysentry) और पतले दस्तों को (डायरिया) रोकनेके लिये भी इसका उपयोग किया जाता है।

थूहर तिधारा

नामः—

संस्कृत—त्रिधारस्नुहि, त्रियस्त्रः, धारास्नुहि, वज्रकण्टक, त्रिधारक, वज्री। हिन्दी—थूहर तिधारी, आंगलिया थूहर। गुजराती—तरधारो थोर। मराठी—तिधारी निवडुङ्ग। बंगाल—तेकांटा, सिज। तामील-चतुर कल्ली। अंग्रेजी—Triangular Sponge। लेटिन—Euphorbia Antiquorum (इफोर्बिया एण्टीकोरम)। उर्दू—झकुम।

वर्णन—

तिधारा थूहर एक प्रसिद्ध वनस्पति है जो सारे भारतवर्ष के सूखे स्थानों में अक्सर पाई जाती है इसकी डालियां तिधारी और पचधारी होती है। इसके बहुत छोटे २ पत्ते लगते हैं। किसी २ झाड़के नहीं भी लगते हैं। औषधिमें इसकी जड़ें, डालियां और दूध काममें आता है। थूहर वर्ग की औषधियाँ बहुत उग्र स्वभाव की होती हैं। इसलिये इनका उपयोग बिना किसी योग्य वैद्य की सलाहके नहीं करना चाहिये।

गुणदोष और प्रभाव

तिधारी थूहर कफ नाशक, ज्वरघ्न, रेचक और रक्त को शुद्ध करने वाली होती है। इसके सेवनसे कफ पतला होकर मुँह या गुदाके रास्तेसे निकल जाता है।

तीनधारी थूहरको बच्चोंके कफ रोग अर्थात् खांसी वगैरहमें देनेका बहुत रिवाज है। ऐसे रोगोंमें यह अडूसेके साथ अथवा सुहागी और शहदके साथ दी जाती है। तेलगू लोग इसकी जड़ों के काथ को जीर्ण आमवात और उपदंशमें देते हैं।

मात्राः—इसकी डालियोंको भाँजकर उनका रस निकाला जाता है। यह रस बच्चोंको तीन माशेतककी मात्रामें देते हैं।

इसकी जड़ोंको हींगके साथ पीसकर एक पट्टी तयार की जाती है। इस पट्टीको बच्चोंके पेटपर रखनेसे पेटके कृमि नष्ट हो जाते हैं। इसकी जड़की छाल विरेचक होती है। इसकी लकड़ीका काढ़ा संधिवातमें उपयोगी माना जाता है।

इसकी शाखाओंमेंसे निकलनेवाला दूधिया रस एक तीव्र विरेचक पदार्थ है। यह स्नायु-मंडलकी बीमारियां, जलोदर और बहरेपनमें उपयोगी होता है। बाह्य प्रयोगके अंदर इसका उपयोग करनेसे जलन पैदा होती है। इसको कमर पर लगानेसे कमरका दर्द मिटता हैं। संधिवात और दांतोंके दर्दमें भी यह उपयोग में लिया जाता है।

इसका रस अधिक समय तक पार्यायिक ज्वर आनेके कारण पैदा हुए जलोदर रोगमें तथा विस्फोटक रोगोंमें काममें लिया जाता है।

बंबईमें इसकी जड़को देशी शराबके साथ मिलाते हैं जिससे कि यह ज्यादा नशीली हो जाती है। इसको घावोंके कृमियोंको नष्ट करनेके लिये और कानके दर्दको मिटानेके लिये काममें लेते है।

उपयोग—

डाढ़का दर्द—इसके दूधमें रूइका फोया भिगोकर उस फोयेको घी में जलाकर डाढ़में रखनेसे डाढ़का दर्द मिटता है।

जलोदर—इसके दूधको किसी औषधिमें मिलाकर खिलानेसे तीव्र विरेचन होकर जलोदरमें लाभ होता है।

बहिरापन—इसके दूधमें तेलको सिद्ध करके उस तेलको कानमें टपकाते रहनेसे कानका बहिरापन मिटता है।

कृमिरोग—इसकी जड़ और हींगको पीसकर पेटपर लेप करनेसे बच्चोंकी आंतोंके भीतरके कीड़े मर जाते हैं।

जोड़ोंका दर्द—इसकी डालियोंको औटाकर पिलानेसे छोटे जोड़ोंकी पीड़ा मिटती है।

(२)—इसके ताजे रसकी मालिश करनेसे भी जोड़ों की पीड़ा मिटती है।

खांसी—इसके रसमें अडूसेके पत्तोंको पीसकर छोटी २ गोलियाँ बनाकर चूसनेसे खांसी मिटती है।

बिजलीका गिरना—ऐसा कहा जाता है कि जिस घरकी छतपर तिधारी थूहरके गमले पड़े रहते हैं उसपर बिजली नहीं गिरती।

नोटः—विरेचनके लिये इसके दूधको बहुत छोटी मात्रामें देना चाहिये क्योंकि यह बहुत उग्र स्वभावी होता है।

थूहर घोटा

नाम—

संस्कृत—स्नूही, सुधा, समन्तदुग्धा, नागद्रु, बहु दुग्धिका, महावृक्ष, वज्रा, सेहुँड़, दंड वृक्ष, इत्यादि। हिन्दी—थूहर, घोटा थूहर, सेहुँड, कांटा थूहर। बंगाल—मनसा गाछ, सिजवृक्ष। मराठी—निवडुंग, वइनिवडुंग, फणीचे निवडुंग। गुजराती—थोरदांडलियो, कंटालो थोर, नानो परदेशी। तेलगू—अपुजे मृदु, अकोकुल्लि। तामील-इलैकल्लि। लेटिन—Euphorbia Nerifolia (इफोर्बिया नेरिफोलिया)।

वर्णन—

यह भी थूहरकी एक जाति होती है। इसका पौधा १० फुट तक ऊंचा बढ़ता है। इसकी डालियां लंबे २ डंडोंके रूपमें रहती है। जिन पर बड़े तीक्ष्ण कांटे होते हैं। ये डालियाँ पोली होती हैं। इसके पत्ते ६ इंच तक लंबे और दो ढाई इंच तक चौड़े होते हैं। इस पौधेका कोई भी हिस्सा तोड़नेसे उसमेंसे दूध निकलता है।

गुणदोष और प्रभाव—

(आयुर्वैदिक मत)—आयुर्वेदिक मतसे थूहर रेचक, तीक्ष्ण, अग्निदीपक, कड़वी, भारी तथा उदर शूल, आफरा, कफ, गुल्म, उन्माद, मूर्छा, कुष्ट, बवासीर, सूजन, मेदरोग, पथरी, पांडुरोग, व्रण, शोथ, ज्वर, प्लीहा और विषको दूर करती है।

थूहर का दूध उष्णवीर्य, स्निग्ध, चरपरा और तीव्रविरेचक होता है और प्राचीन उदर रोगमें इसका जुलाब हितकारी होता है।

थूहरके पत्ते तीक्ष्ण, अग्निको दीपन करनेवाले, रुचिकारक और खांसी, ..., उदर शूल, सूजन और उदररोग को दूर करनेवाले होते हैं।

इस थूहर का दूध बहुत तीव्र विरेचक पदार्थ है। इससे वमन और पानीके समान दस्त होते हैं। इसकी डालियों का रस भी विरेचक होता है। इसके पत्तों का रस मूत्रल और जड़ों का रस विरेचक होता है। उदर रोगोंके अन्दर, काली मिरचों को इसके दूधमें डुबो कर सुखा लेते हैं और तीव्र रेचन की आवश्यकता पड़ने पर उन मिरचोंमें से एक या दो दाने खिला देते हैं। सूतिका ज्वर और साँपके विषमें इसकी जड़ों को काली मिरचके साथ पीसकर देते हैं। इसके दूध को चमड़े पर लगानेसे जलन पैदा होकर छाला उठ जाता है। प्राचीन आमवात और सन्धिवातमें इसके रसको नीमके वीजोंके तेलके साथ मिला कर मालिश किया जाता है। संकोच विकास प्रधान दमेमें इसके पत्तोंका स्वरस दिया जाता है। इसके पत्तों को गरम करके उनका रस निकाल कर छोटे बच्चों को खांसी दूर करने के लिये दिया जाता है।

इसके रसको गरम करके कानोंमें डालनेसे कान का दर्द दूर होता है।

कोमानके मतानुसार इस वनस्पति का रस शर्वतके साथ मिलाकर १० से २० बूंद तक की मात्रामें दमें की वीमारीमें दिनमें तीन वार पिलाया गया। इससे उन दमेके वीमारों को काफी आराम मिला।

कर्नल चोपराके मतानुसार इसके पौधे पर चोट लगानेसे जो दूध निकलता है वह कानके दर्दमें बहुत लाभ पहुँचाता है। इस दूध को जलोदर और सूजन की वीमारीमें भी काममें लेते हैं। यह एक तीव्र विरेचक पदार्थ है। इसकी जड़ कृमिनाशक और सांप तथा बिच्छूके विषपर उपयोगी मानी जाती है।

उपयोग—

जलोदर—हरड़, पीपल और निसोथ आदि रेचक औषधियोंको इसके दूधमें तर करके खिलानेसे तीव्र विरेचन होकर जलोदर सूजन व आफरा मिट जाता है।

सांपका विष—इसकी जड़को काली मिर्चके साथ पीसकर पिलानेसे और दंश स्थानपर लेप करने से सांपका विष उतर जाता है।

मस—त्वचाके ऊपर जो मस और दूसरे कठोर फोड़े फुन्सी होजाते हैं वे इसके दूधको लगानेसे मिट जाते हैं।

पागल कुत्तेका विष—थूहरके डंडेका गूदा और अदरक मिलाकर खिलानेसे पागल कुत्तेके विषमें लाभ होता है।

कानका दर्द—थूहरके रसकी कुछ बूंदे कानमें डालनेसे कानका दर्द मिट जाता है।

नेत्ररोग—थूहरके रसमें मीठे तेलके काजलको खरल करके, सुखाकर, आंखमें आँजनेसे आंखका दुखना और गीड़का आना बंद होजाता है।

खांसी—थूहरके पत्तोंको आगपर गरम करके मसलकर रस निकालकर देना चाहिये। दो पत्तोंके रसमें थोड़ासा नमक मिलाकर पीनेसे खांसी आराम हो जाती है।

फोड़े फुन्सी—इसको मक्खन या घीके साथ मिलाकर बिगड़े हुए फोड़ों पर लगानेसे बड़ा लाभ होता है। इसके रसको घीमें मिलाकर मालिश करनेसे खुजली भी मिट जाती है।

मांस पेशियोंकी सूजन—मांस पेशियोंकी सूजन पर इसका दूध लगानेसे सूजन बिखर जाती है।

खांसी और दमा—थूहरका चार निकालकर उसको खिलानेसे खांसी और दमेमें लाभ होता है।

कामेंद्रियकी शिथिलता—थूहरके दूध और प्याजके अर्कमें महीन मलमलके कपड़ेको तीन बेर भिगो २ कर सुखाले फिर उसे अलसीके तेलमें ८ प्रहर तक पड़ा रक्खे। उसके बाद कामेंद्रिय पर सुपारी वाले हिस्सेको छोड़कर और मक्खन लगाकर उस कपड़ेको लपेट दें। इस पट्टीको तीन घंटे तक बंधी रखकर खोल दें। इस प्रयोगसे कामेंद्रियकी शिथिलता नष्ट होकर वह पुष्ट होती है।

मात्रा—इसके जड़के चूर्णकी मात्रा २ से ४ रत्ती तक, रसकी मात्रा २ से ५ बूंद तक और दूधकी मात्रा १ रत्ती तककी है।

थूहर खुरासानी

नाम

संस्कृत—बहुक्षीरा, दंडाश्रुता, दंडेरी, वज्रद्रुमा, त्रिकुंटका। हिन्दी—थूहर, वारकी थूहर, सिर थूहर। बंगाल—लंकासिज, लटदवना। गुजराती—डांडलियो थोर, परदेशी थोर, खरसाणी थोर। मराठी—शेर, निवली, निरवल। पोरबंदर—खारसनी थोरा। बंबई—निवल, मेहुँड, शेर। फारसी—भकुनियाँ हिन्दी। अरबी—अजफर भुकम। तामील—कल्लि, किरि, तिरुवर्ती।

तेलगू—चेमुढु, कल्लि । लेटिन—Euphorbia Tirucalli (इफोर्बिया टिरुकल्लि) ।

वर्णन—

यह भी थूहरकी एक जाति है। इसकी डालियाँ पतली, गोल, लंबी और हरे रंगकी होती हैं। इन डालियोंको तोड़नेसे बहुत दूध निकलता है। इसके पत्ते और फूल कोमल शाखाओं के ऊपर आते हैं। यह वनस्पति गुजरातके अन्दर बहुत पैदा होती है। वहांके खेतों और वाड़ियोंके आसपास इसी पौधेकी बाड़ लगाई जाती है। इस वनस्पतिका मूल उत्पत्तिस्थान पूर्वी आफ्रिका है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतानुसार यह वनस्पति गरम और पित्त, कुष्ट तथा धवल रोगमें उपयोगी है। इसका दूध विषनाशक, पेटके आफरेको दूर करने वाला और वात रोगोंमें लाभ पहुँचाने वाला होता है।

यूनानी मत—यूनानी मतसे इसका रस विरेचक और पेटके आफरे को दूर करने वाला है। यह सुजाक, खांसी, दमा, जलोदर, कोढ़, तिल्लीका बढ़ना, अग्निमांद्य, पीलिया, उदर शूल और पथरीमें लाभदायक है। संधिवातके ऊपर इसके दूधकी एक चर्मदाहक पदार्थके रूपमें मालिशकी जाती है। उपदंश रोगके अन्दर यह एक उत्तम धातु परिवर्तक औषधि मानी जाती है। स्नायु रोगमें भी इसकी मालिशसे लाभ होता है।

इसका दूध एक अत्यन्त दाह जनक पदार्थ है। इसको एक रत्तीकी मात्रामें चनेके आटेमें मिलाकर गोली करके देनेसे तीव्र विरेचन होता है।

मात्रा—इसकी मात्रा खानेके लिये एकसे लेकर दो बूंद तक है।

गुजरातके अन्दर इस वनस्पतिके दूधको संधिवात की पीड़ापर चुपड़नेका बहुत रिवाज है और इससे बहुत लाभ होता हुआ भी देखा जाता है।

थूहर नागफनी

नाम:—

संस्कृत—बहु दुग्धिका, कंथारी, कंटसे, वज्रहुशला, दोंद वृक्षका, नागफना, शाखाकंटा वज्र कंटका । हिन्दी-नागफनी थूहर, थापा थूहर, हत्ता थूहर । बंगाल फणी मनसा, त्रिदर

नागफना, गुजराती—थोर हाथलो। मराठी—फणी निवडुंग, चपल, नागफना। तामील—नाग-तालि, नागदली। तेलगू—नागदली नागजेमुदु। अंग्रेजी—Prickly pear प्रिकली पेअर। लेटिन—Opuntia Dillenii (ओपंटिया डिलीनाई)

वर्णन:—

नागफनी थूहरकी झाड़ी प्रायः सब दूर प्रसिद्ध है। इसके पत्ते हाथके पंजेकी तरह या नागके चौड़े फनकी तरह होते हैं। उन पत्तोंके ऊपर बहुत तीक्ष्ण कांटे लगे रहते हैं। इस वन-स्पतिका कांटा बहुत तीक्ष्ण और घातक होता है। इसके फूल पीले और नारंगी रंगके और फल सुर्ख लाल रंगके होते हैं। इन फलोंके ऊपर भी कांटे रहते हैं। इन फलोंका रस अत्यंत स्वादिष्ट और मीठा होता है। पहिले इस वनस्पति की झाड़ी जहांपर पैदा होती थी वहांसे अत्यंत प्रयत्न करनेपर भी नष्ट नहीं होती थी और बढ़ती जाती थी। मगर कुछ दिनोंसे सफेद रंगके एक ऐसे छोटे कीड़ेका आविष्कार हुआ है जिसने ४।५ वर्षोंके अन्दर ही इस वनस्पतिका सारे देशसे मूलोच्छेद कर दिया है। अबतो कहीं कहीं पर ढूंढने खोजने से यह वनस्पति प्राप्त होती है।

गुणदोष, और प्रभाव:—

आयुर्वेदके मतसे यह वनस्पति कड़वी, उष्ण मृदु विरेचक, अग्निवर्धक, पेटके आफरेको दूर करनेवाली, ज्वर नाशक और विष शामक है। पित्त, जलन, धवलरोग, वात, मूत्रसम्बन्धी शिकायतें, अर्बुद, जलोदर, बवासीर, प्रदाह, रक्ताल्पता, पथरी, व्रण और तिल्लीमें यह उपयोगी है। इसके फल बहुत स्वादिष्ट और अग्निवर्धक होते हैं। ये प्रदाह, जलोदर, अर्बुद और उदर शूलमें लाभदायक हैं। इसके फूल खांसी और दमें को दूर करते हैं। इसके पत्तोंका रस गरम, विष-नाशक तथा जलोदर, धवलरोग और उपदंशमें लाभ दायक है।

यूनानी मत—यूनानी मतसे यह वनस्पति कड़वी, पाचक, पेटके आफरे को दूर करनेवाली, मूत्रल और विरेचक होती है। इसको देनेसे बच्चोंका वायुनलियोंका प्रदाह मिटता है। धवलरोग, तिल्ली, नेत्ररोग, यकृतरोग, कटिवात और प्रदाहमें भी यह लाभदायक है। इसका रस कानोंके दर्दको दूर करनेके काममें लिया जाता है।

यूनानी हकीम इसकी २ जातियां मानते हैं एक मीठी और दूसरी खट्टी। खट्टी जातिके पत्तोंको कांटे वगैरह साफ करके टुकड़े करके पानीमें तर करके रातको ओसमें रख दें सवेरे उनको मल छानकर मिश्री मिलाकर पीनेसे खून बढ़ता है। इन पत्तोंको साफ करके जरा हलदी लगाकर बवासीर पर बांधनेसे बवासीरमें लाभ होता है। इसके दूधकी १० बूंद शक्करमें मिलाकर खानेसे खूब दस्त आते हैं। इसके फलका गूदा ३॥। माशे शर्बतमें मिलाकर संदलके तेलके १० बूंद डालकर पिलानेसे सुजाकमें लाभ होता है। इसके पंजेका गूदा आंखपर बांधनेसे आंखका

दुखना बंद हो जाता है। इसके पंचांग को तिलके तेलमें तलकर उस तेलको छानकर दर्दके स्थानपर मालिश करनेसे सब प्रकारका दर्द आराम हो जाता है। इसके बीजोंका तेल अत्यंत काम शक्ति वर्धक है। इसको कामेंद्रिय पर मालिश करनेसे बहुत उत्तेजना और सख्ती पैदा होती है।

रासायनिक विश्लेषण:—इसके पके हुए फलोंमें शक्कर ३० प्रतिशत, मान्सजन्य द्रव्य ६। प्रतिशत वसा, ३॥। प्रतिशत और पानी २६ प्रतिशत होताहै। इसको जलाकर इसकी राखमेंसे चार निकाला जाता है। यह चार पानीके अन्दर घुलनशील होता है।

सन्याल और घोषके मतानुसार इस वनस्पतिमें मेगनेशिया, मेलिक एसिड, शक्कर, साइट्रिक एसिड, मोम और कुछ राल पाई जाती है। उसमें उपचार नहीं पाये जाते।

डाक्टर देसाईके मतानुसार इसके फलोंका रस दाहशामक, कफ नाशक और संकोच विकास प्रतिबन्धक होता है। इसके लेनेसे :पित्तश्राव अधिक होता है और पेशाबका रंग कुछ लाल होजाता है। इसके पंचांगसे निकाला हुआ चार आनुलोमिक और मूत्रल होता है। इसकी जड़ें रक्त शोधक होती हैं। इसका दूध विरेचक होता है। इसके पंचांगका स्वरस हृदयके लिये बलदायक पदार्थ है। हृदयके ऊपर इसकी क्रिया साधारणतया डिजिटेलिस की तरह होती है।

इसके फलोंका शरबत या उनका रस दमा और हूपिंग कफमें लाभदायक होता है। इससे कफ पतला होकर छूट जाता है और खांसीका वेग कम होजाता है। जीर्ण कफ रोगों में इसको देनेसे कफकी उत्पत्ति कम होजाती है। जिससे खांसीका कष्ट भी घट जाता है। इसके फलका रस या शरबत गर्भवती स्त्रियोंको भी दिया जा सकता है।

हृदयोदरके अन्दर इसके पंचांगकी राखको देनेसे दस्त और पेशाब होकर हृदयकी क्रिया सुधर जाती है। इसके पंचांगका रस देनेसे हृदयकी शीघ्रगामी धड़कन बन्द होकर हृदयकी गति सुव्यवस्थित होजाती है।

सन्याल और घोषके मतानुसार इसके फलका शर्बत खांसी और दमेकी उत्तम दवा है। यह दिनमें ४ चार बार चायके १ चम्मचकी मात्रामें दिया जाता है। इसका शरबत उत्तम बैंगनी रंगका होता है। यह कफ निस्सारक होता है और खांसीमें लाभ पहुँचाता है। एक दमेके केसमें जब सभी इलाज नाकामियाब हो चुके थे, इसके प्रयोगसे काफी लाभ हुआ। दवाके बन्द करते ही दमा फिरसे चालू हो गया। मगर अन्तमें इसके लगातार सेवनसे वह बिलकुल मिट गया। जुकामकी वजहसे होने वाले वायु नलियोंके प्रदाह और कुक्कुर खांसीमें भी इससे काफी लाभ होता है। २४ घंटेमें ही खांसीके अन्दर लाभ दिखलाई देने लगता है।

के. एल. देके मतानुसार इसका फल शांतिदायक और ज्वर निवारक व कुक्कुर खांसीमें लाभदायक होता है।

लिम्बोआके मतानुसार इसका फल शांतिदायक है यह सुजाकमें उपयोगी है। दक्षिणमें इसके फलको भूंजकर आक्षेप युक्त खांसीको दूर करनेके काममें देते हैं।

टेलरके मतानुसार इसके दूधिया रसकी १० बूंदें थोड़ी सी शक्करके साथ मिलाकर विरेचक वस्तु की तौर पर दी जाती है।

प्राचीन आमवात और सन्धि शोथमें इसकी जडका काढ़ा दिया जाता है और सूजे हुए जोड़ोंपर इसके पत्ते को बीचमें से चीर कर भीतर की तरफ कुछ हलदी और सेंधा निमक लगा कर गरम करके बांध देते हैं जिससे सूजन उतरकर दर्द कम हो जाता है। इसके पत्तों का गूदा निकाल कर उसको गरम करके उसका पुल्टिस बांधनेसे नारू और उससे पैदा हुई विद्रधिमें बड़ा लाभ होता है।

कर्नल चोपराके मतानुसार इसका फल कुक्कुर खांसी और दमेमें उपयोगी है। इसे पित्त निस्सारक औषधिके रूपमें काममें लेते हैं।

उपयोग :—

पित्त की सूजन—इसके पत्तों को कूटकर पुल्टिस बना कर बांधनेसे दाह और पित्त की सूजन मिटती है।

कुक्कुर खांसी—इसके फलको भूनकर उसका रस निकाल कर पीनेसे कुक्कुर खांसी मिटती है।

पित्त विकार—इसके फलका शरबत दिन में ३।४ बार चार २ माशे की मात्रा में लेनेसे पित्त विकार शान्त होता है।

विरेचन—इसके दूध की १० बूंद शक्करमें मिलाकर देनेसे विरेचन हो जाता है।

मूत्र कृच्छ्र—इसके फलके पौने चार माशे शरबतमें चन्दनके तेलकी १५ बूंद डालकर पिलानेसे मूत्रकृच्छ्र मिटता है।

नेत्र रोग—इसके पत्ते का गूदा आंख पर बांधने से आंखका दुखना मिटता है।

मसूड़ोंके रोग—इसके पत्तोंके गूदाके पुल्टिस को गरम करके बांधनेसे मसूड़ोंके असाध्य रोग भी मिट जाते हैं।

बनावटें :—

नागफनी का शरबत—नागफनीके पके फलोंका रस आधा सेर, स्वच्छ उत्तकी रवेदार शक्कर १। सेर, इन दोनों को मिलाकर हलकी आंच पर पकाना चाहिये। जब शरबत की चाशनी हो जाय तब उसको उतार कर किसी ढक्कनदार बर्तनमें बन्द करके

वारह घण्टे तक पड़े रहने देना चाहिये। उसके बाद उस बरतन को बिना हिलाये शरबत को ऊपरसे नितार कर बोतलमें भर लेना चाहिये और नीचे जमी हुई गाद को फेंक देना चाहिये। इस शरबत को ६ माशेसे लेकर १ तोले तक की मात्रामें दिनमें चार बार लेनेसे सब प्रकार की कुक्कुर खांसी और दमेमें बहुत लाभ होता है।

थूनेर

नाम :—

संस्कृत—स्थौणेयक, विकीर्णसंग्य, हरित, शुकपुच्छक। हिन्दी—थूनेर। मराठी—थुणेर। बंगाल—ग्रन्थि पर्ण भेद।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—राजनिघण्टुके मतानुसार थुनेर कफपित्त नाशक, सुगन्धित, चरपरा, कडुआ, पित्तके प्रकोप को शान्त करने वाला और पौष्टिक है।

भाव प्रकाशके अनुसार थूनेर चरपरा, स्वादिष्ट, कडुआ, स्निग्ध, त्रिदोपनाशक, मेधा जनक, वीर्यवर्धक, रुचिकारक और राक्षस बाधा, ज्वर, कृमि, कोढ़, रुधिर विकार, दाह, दुर्गन्ध और शरीरके तिलों को नष्ट करने वाला है।

थूहर पचकोनी

नाम:—

संस्कृत—रात्रिप्रफुल्ल, उत्तम पुष्प, महापुष्प, विसर्पिन,। हिन्दी—थूहर पचकोनी। मराठी—पाँचकोनी निवडुंग। कनाडी—कल्लि। अंग्रेजी—Cactus (केकटस)। लेटिन—Cereus Grandi florus (सेरियस ग्रेंडिफ्लोरस)।

वर्णन—

यह जंगली थूहरकी एक मोटी जाति है। यह खुश्क जमीनोंमें पैदा होती है। इसकी बाजूमें जड़ें होती हैं और यह जड़ोंके बराबर ही फैलती जाती है। इसकी डालियोमें जगह २ पर जोड़ होते हैं और उनके किनारोंपर कांटे होते हैं। इसके पत्ते नहीं होते। इसके फूल

अत्यंत सुन्दर और खुशबूदार होते हैं। ये रात्रिमें खिलते हैं और दिन ऊगनेपर मुर्फा जाते हैं। खिलने पर इनका दिखाव तारोंकी तरह हो जाता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति मूत्रल और हृदयके लिये बलदायक है। हृदयपर इसकी क्रिया साधारणतया डिजिटेलिसकी तरह होती है। इससे हृदयकी धड़कन स्वाभाविक रूपमें हो जाती है।

थूनिया लोथ

नाम—

हिन्दी—थूनियालोथ, भूरीलोथ। लेटिन—Combrotum Pilosum (कंब्रेटम पिलोसम)।

वर्णन—

यह एक झाड़ीनुमा पौधा होता है। इसके पत्तोंका काढ़ा एंथलमेंटिक (Anthelmontic) वस्तुकी तरह काममें आता है।

थेकल

नाम—

हिन्दी—थेकल। मराठी—थेकल। लेटिन—Garcinia Pedunculata (गार्सीनिया पेडनक्यूलेटा)

वर्णनः--

यह एक ऊंची जातिका वृक्ष होता है। जो बंगालके पूर्व और उत्तरी भागोंके जंगलोंमें और सिलहट जिलेमें पैदा होता है।

इसके फूल जनवरीसे लेकर मार्च महिने तक आते हैं। फल मार्च से लेकर जून महीनेतक पकते हैं। इसके फल पीले, गोल, मुलायम और संतरेके बराबर मोटे होते हैं। ये खानेके लायक स्वादिष्ट होते हैं। इसके फल का गूदा अमचूरकी तरह खटाई देनेके काममें लिया जाता है। इसके

फलोंको कतर कर उन्हें सुखाकर उन टुकड़ोंको बाजारमें बेचते हैं। ये टुकड़े अम्लवेतस के नामसे बाजारमें बिकते हैं। मगर यह असली अमलवेतस नहीं है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पतिका उपयोग कोकम या अम्सूलकी तरह किया जाता है।

थेंगन

नामः—

बरमा—थेंगन। लेटिन—Hopea odorata (होपिया ओडोरेटा)।

वर्णन—

यह एक हमेशा हरी रहनेवाली झाड़ी है जो बरमामें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

बरमाके लोग इसमें पाई जानेवाली रालका चूर्ण करके उस चूर्णको रक्तस्रावरोधक औषधिकी तरह काममें लेते हैं। कंबोडियाके लोग इसकी छालको मसूड़ेकी सूजन दूर करनेके काममें लेते हैं।

थेलु

नामः—

पंजाब—थेलू, वेटर, चुच, फुलू। सीमाप्रान्त-अगेनी, भेदारा, झोरा, फुलू। नेपाल-तुपी। लेटिन—*Juniperus Excelsa* (जुनिपेरस एक्सेल्सा)।

वर्णन—

यह हमेशा हरा रहनेवाला वृक्ष हिमालय के सूखे प्रदेशोंमें नेपालके पश्चिममें पैदा होता है। इसकी छाल पतली, उदी रंगकी, लकड़ी सुगंधित, फल गहरे भूरे रंगके और काले होते हैं। औषधि प्रयोगमें इसके फल और कोमल डालियां काममें आती हैं। यह वनस्पति हाउबेर की ही एक जाति है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति मूत्रल और उत्तेजक होती है। इसके दूसरे गुण हाउवेर ही की तरह होते हैं काश्मीरमें इसकी हरी लकड़ीका धुम्रपान एक जोरदार वमनकारक पदार्थ माना जाता है।

दपोली

नाम :—

बम्बई—दपोली। बङ्गाल—भुतियालता। लेटिन Oldenlandia Auricularia (ओल्डेनलेंडिया एरिक्युलेरिय) Hedyoris Auriculaiia (हिडिओरिस एरिक्युलेरिया)

वर्णन—

यह वनस्पति सारे भारतवर्षमें और सीलोनमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव —

इस वनस्पतिके अन्दर स्निग्ध तत्व पाये जाते हैं। यह अतिसार और हैजेमें उपयोगी है।

दबी दारिया

नाम :—

यूनानी—दबीदारिया।

वर्णन—

कुछ यूनानी हकीमोंके मतसे यह हिन्दुस्तानमें पैदा होने वाला एक तेज और चरपरा घास होता है और कुछ यूनानी हकीमोंके मतसे यह छोटासा हिन्दुस्तानी वृक्ष है जो १ गज के करीब ऊंचा होता है। इसकी पिड सख्त होती है। इसकी शाखाओंमें कांटे होते हैं। पत्ते छोटे छोटे और हरे होते हैं। सर्दीमें इस पौधे पर कपास की तरह फल आते हैं। फूल नहीं आते। इसकी फलियोंमें गोल गोल बीज होते हैं। इन बीजों का रंग खाकी होता है। चवानेसे इनमें बहुत तेज खुशबू, तेज स्वाद और कुछ कड़वा पन अनुभवहोता है।

गुणदोष और प्रभाव :—

यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है। इसके लेपसे सन्धियों का ढीलापन मिटता है। लकवे और फालिजमें भी यह मुफीद है। मेदे को ताकत देता हैं। पाँवकी उङ्गलियोंके बीचमें सर्दी और नमींसे जो खराश पैदा हो जाती है उसको दूर करनेमें यह बेजोड़ है। इसके खानेसे मिरगी और सन्यास रोगमें फायदा होता है। इसकी लकड़ीका दतून करनेसे मुंहके विषैले दोष निकल जाते हैं और मसूड़ोंमें ताकत आती है। इसको शहदके साथ खानेसे सीने और फेफड़ेके रोग मिटते हैं। सिरके साथ खानेसे मेदेको लाभ होता है और उसको ताकत मिलती है। दूधके साथ खानेसे गुर्दे और मसाने की पथरी निकल जाती है, कामशक्ति बढ़ाती है और दस्त बन्द हो जाते हैं। इसकी खुशबूसे आंखमें जलन पैदा होती है और अधिक सूंघनेसे पलकोंके वाल झड़ जाते हैं।

मुजिर—इसका सेवन गरम प्रकृति वालों को हानिप्रद है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नष्ट करनेके लिये बबूल का गोंद, मीठे बादाम का तेल और कासनी मुफीद है।

मात्रा—इसकी मात्रा तीन माशे तक की है।

दम धोका

नाम—

लखीमपुर—दमधोका, करियाबीजल। लेटिन—Impatiens Tripetala (इंपेटियन्स ट्रिपेटेला)।

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालयमें सिकिमके पास २ हजार से ५ हजार फीटकी ऊंचाई तक और आसाममें खासिया पहाड़ियों पर ३ हजार फीटकी ऊंचाई तक पैदा होती है। इसका वृक्ष ४५ से लेकर ६० सेंटिमीटर तक ऊंचा होता है। इसके पत्ते ५ से लगाकर २० सें० मीटर तक लंबे होते हैं। इसकी फली लंबगोल होती है। इन फलीमें कई बीज रहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

कार्टरके मतानुसार इसकी जड़का रस पेशाबके साथ खून आनेकी बीमारीको दूर करनेके

काममें लिया जाता है। इस काममें इसके १ तोला रसको १ तोला जलके साथ मिला करके देते हैं।

दमन पापरा

नाम:—

संस्कृत—पर्पट। हिन्दी—दमन पापड़ा। बंगाल—खेत पापड़ा। गुजराती—पर्पट। मराठी—परिपाठ। गोआ—कमुरी, पोपटो। लेटिन—Oldenlandia Corymbosa (ओल्डेनलेंडिया कोरिम्बोसा)।

वर्णन:—

यह एक नाजुक जातिका पौधा होता है जिसकी ऊंचाई फुटभरके करीब होती है। वर्षा ऋतुके अंदर इसके पौधे खेतों वगैरामें पैदा होते हैं। इसके पत्ते २ से लगाकर ४-५ सें० मीटर तक लंबे होते हैं। इसके पौधों धनियेके पौधोंकी तरह दिखाई देते हैं। इसके पत्ते लंबे और फल पीले रंगके होते हैं जो सूखनेपर काले पड़ जाते हैं। इनकी रुचि कुछ खारी और कड़वी होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मतसे यह औषधि शीतल, ज्वर नाशक, दाह शामक, कफघ्न, कटु पौष्टिक और कुछ स्तम्भक है।

संस्कृतके लेखक इसको ज्वरमें एक प्रकारकी शीतल औषधि मानते हैं। जो ज्वर वात और पित्तकी विकृतिसे होता है उसमें यह अधिक उपयोगी मानी जाती है। ऐसे पार्यायिक ज्वरोंमें जिनमें कि पाकस्थलीके अन्दर जलन और स्नायु मंडलके अन्दर अवसन्नता रहती है, यह विशेष लाभदायक है।

कोकणके अन्दर वात और पित्त प्रधान ज्वरोंमें इस औषधिको देनेका और हथेलियां और पैरके तलवोंमें मालिश करनेका बड़ा रिवाज है क्योंकि इसएक ही औषधिमें शरीरके अन्दर ज्वर को वजहसे जो २ उपद्रव पैदा होते हैं उन सबको दूर करनेकी शक्ति पाई जाती है। इससे पसीना होता है, शरीरकी गर्मी कम होती है, तृषा शमन होती है, पेशाब अधिक होता है और घबराहट कम होती है। पित्त ज्वर में इसको पित्त पापड़ा के साथ मिलाकर देते हैं।

अविराम ज्वर में जब रोगीको दस्त और उल्टी होने लगती है, भ्रम पैदा हो जाता है, और शरीर में शिथिलता पैदा हो जाती है तब इस औषधिको ब्राम्ही, तुलसी, चंदन, सुगंध बाला, नागरमोथा, गिलोय और हंसराजके साथ मिलाकर, काढ़ा बनाकर देते हैं। दमन पापड़ा, गुड़वेल, नागरमोथा चिरायता और चंदन इन ५ वस्तुओंका काढ़ा पंचभद्र क्वाथके नामसे प्रसिद्ध है जो सब प्रकारके ज्वरोंमें दिया जाता है। गर्मीके फोड़ोंको दुरुस्त करनेके लिये भी इसका काढ़ा पिलाया जाता है।

यह वनस्पति पीलिया और यकृत की बीमारियों में कृमिनाशक वस्तु की तौर पर दी जाती है।

गलेकी सूजन और श्वास नलीकी सूजनमें इसका थोड़ा सा सूखा चूर्ण चिलममें रखकर पीनेसे कफ ढीला होकर आसानीसे निकल जाता है। श्वास नलिकाके संकोच विकासकी वजह से पैदा हुए दमेमें इस औषधिको पीपर, मुलेठी और शहदके साथ मिलाकर देते हैं और चिलम में रखकर पीते भी हैं।

कर्नल चोपराके मतसे यह वनस्पति पार्यायिक ज्वर, पाकस्थली की जलन और स्नायु मंडलकी अवसन्नतामे उपयोगी है।

दरदार

नाम—

यूनानी—दरदार।

वर्णन—

यह एक बड़ी जातिका वृक्ष होता है। जो पानीके नजदीक ठंडी और तर जमीनों में पैदा होता है। इसके पत्ते कटी हुई किनारोंके, फूल सफेद और फल बारीक आवरण में ढंकाहुआ चिड़ियाकी ज़बानकी तरह होता है। कई लोग इसको गूलरका झाड़ बतलाते हैं मगर यह गूलरके झाड़से भिन्न दूसरी वस्तु है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह वनस्पति पहले दर्जेमें सर्द और खुश्क है। इसका फल गरम और तर है। इस वनस्पतिका पंचांग कब्जियत पैदा करने वाला होता है। इसके कच्चे फलका रस चेहरे पर लगानेसे चेहरेके दाग़ मिट जाते हैं। इसकी ताजा छालको सिरके के साथ पीसकर लगानेसे सब प्रकारके चर्म रोग और सफेद दाग़ मिट जाते हैं। चोट, मोच या जख़मके ऊपर

इसकी छालको पीसकर लेप करनेसे लाभ होता है। इसके पत्तोंको सिरकेमें पकाकर लगानेसे तर खुजली मिट जाती है। इसके फलका रस पीनेसे पुरानी खांसी और क्षयरोग जाता रहता है। इसकी छालको सिरकेमें पीसकर आंखमें लगानेसे आंखका जाला कट जाता है और रोशनी तेज होजाती है। इसकी जड़के एक मुंहको आगमें रखनेसे उसके दूसरे मुंहमें से एक प्रकारका तरल पदार्थ टपकता है। इस तरल पदार्थको कुनकुना करके कानमें टपकानेसे कानकी सूजन और वहरापन दूर होता है।

इसके ताजा पत्तोंको चवानेसे दांत और मसूड़ोंमें ताकत आती है।

मुजिर—अधिक मात्रामें यह खूनको जलाता है और वायु पैदा करता है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नाश करनेके लिये शक्कर मुफीद है।

मात्रा—इसकी मात्रा ४ माशेकी है। (ख० अ०)

दरियास

नाम :—

यूनानी—दरियास।

वर्णन—

यह एक छोटी जातिका पौधा होता है। जिसकी लम्बाई १ बालिश्तके करीब होती है। इसकी डंडीमें बहुतसी शाखाएं फूटती हैं। इसके पत्ते बेरके पत्तोंकी तरह होते हैं जो गहरे हरे रंगके होते हैं। इसका फूल पीला, कुछ गोल, चौड़ा, छोटा और बदबूदार होता है। इसका बीज छोटी काली मिरचके बराबर होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है मगर गरमीके साथ २ इसमें कुछ सरदी की तासीर भी है। यह वनस्पति बहुत नशीली होती है। यह कफ और बातको बिखरती है। इसके सेवनसे शरीरकी झुर्रियां मिटकर चमड़ा तन जाता है। पीलिया और वायु रोगमें भी यह लाभदायक है।

इसके ताजा पत्ते या बीज १० माशाकी मात्रामें खानेसे बहुत तेज नशा पैदा होजाता

है। कभी २ इसके खानेसे जहरबाज निकल कर आदमी मरजाता है। इसके विषको शमन करनेके लिये वही प्रयत्न करना चाहिये जो धतूरेके विषको दूर करनेके लिये किये जाते हैं।

दरूंज अकरबी

नाम :—

पंजाब—दरूंज अकरबी। उर्दू—दरूंज। लेटिन—Doronicum Roylii (डोरोनिकम रोयली)।

वर्णन—

यह वनस्पति पश्चिमी हिमालयमें काश्मीरसे गढ़वाल तक दस हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है। स्याम और अफ्रिकामें भी यह बहुत पैदा होती है। यह एक सीधी और हमेशा हरी रहने वाली वनस्पति है। इसके पत्ते गोलाकार, तीखी नोक वाले और १० से लगाकर १२ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूलोंके सिर पीले रंगके होते हैं। इसकी जड़ गांठदार और छोटी होती है। इसका रंग ऊपरसे खाकी और भीतरसे सफेद होता है। यह कुछ सख्त और वजनदार होती है। इसकी शकल बिच्छू की दुमके समान होती है। इसीलिये इसे दरूंज अकरबी कहते हैं। इसके पत्ते जमीन पर बिछे हुए रहते हैं। इनकी शकल बादामके पत्तों की तरह कुछ पीलापन लिये हुए होती है। इन पत्तोंके बीचमें से एक डण्डी निकलती है जो दो गजके करीब लम्बी होती है। यह अन्दरसे पोली होती है। इस डण्डीपर ५।७ पत्ते लगे रहते हैं। इसके फूल का रंग पीला होता है। इसकी जड़ दस वर्ष तक खराब नहीं होती। यह रूमी और फारसीके भेदसे दो जाति की होती है। रूमी जो कि कड़वी और खुशबूदार होती है उत्तम मानी जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसकी जड़ कड़वी, हृदय को बल देने वाली, अग्निवर्धक, पेटके आफरे को नष्ट करने वाली व छातीके रोगोंमें लाभदायक और विषनाशक होती है। खांसी, सीने की जलन और सिर दर्दमें भी यह उपयोगी है।

वेडन पावेल का कथन है कि पहाड़ की ऊंचाई पर चढ़नेसे कई लोगों को चक्कर आने लगते हैं। ऐसे लोग अगर इसकी जड़ का सेवन करें तो चक्कर आना बंद हो जाते हैं।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है। कफ और वायुको नष्ट करती है।

पेटके आफरे को मिटाती है। ज्ञानेन्द्रिय को शक्ति देती है। हृदय को बहुत ताकत और प्रसन्नता देती है। हाजमा, तिल्ली और मेदे को शक्ति पहुँचाती है। जहरके दर्प को नष्ट करती है। गर्भ की रक्षा करती है। माली खोलिया और पागलपनमें लाभ दायक है। अगर पागलपनमें गर्मी ज्यादा हो तो इसके साथ थोड़ा कपूर भी मिला देना चाहिये। प्रसूतिके समय इसको गर्भवती स्त्री की जांघ पर बांधने से बच्चा आसानीसे पैदा हो जाता है। गर्भाशय की पीड़ा को भी यह दूर करती है। बिच्छू और दूसरे विषैले जानवरोंके विषमें भी यह लाभ पहुँचाती है। प्लेग की गठान पर अंजीरके साथ इसको पीसकर लेप करनेसे बड़ा लाभ होता है। जिस घरके दरवाजे पर इसको लटका दी जाय वहां प्लेग का असर कम होता है।

खजाइनुल अदवियाके लेखक का कथन है कि एक बार हमारे शहरमें बहुत जोर का प्लेग फैला। लोगोंने मेरे कहनेके मुताबिक दरूंज अकरबी को दरवाजों पर लटकाया, गलोंमें लटकाया और कुछ खाते रहे। ये सब लोग प्लेगसे सुरक्षित रहे।

इसको सिर पर बांधने बुरे स्वप्न दीखना बन्द हो जाते हैं। इसके सेवनसे गुर्दे और मसाने की पथरी नष्ट हो जाती है। इसको गर्भाशयमें रखनेसे गर्भाशय दर्द दूर हो जाता है।

मुजिर—यह गरम प्रकृतिवालोंके लिये हानिकारक है। उनमें सिर दर्द और वहम पैदा करती है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नाश करनेके लिये सोफ, मिश्री और गेहूँ का निशास्ता * मुफीद है।

प्रतिनिधि—इसके न मिलने पर इसके बदलेमें मीठी कूट, अकरकटा, सुरंजान नरकचूर या लौंग इनमेंसे कोई वस्तु दे सकते हैं।

मात्रा—इसकी मात्रा ३ माशेसे ७ माशे तक है।

---

* नोट—गेहूँ को पानीमें भिगोकर सुबह सिलपर पीसकर पानीके साथ कपड़ेमें छानकर चूल्हे पर धीमें सेंकना चाहिये। सेंकते समय इसमें ककड़ी, खरबूजा, तरबूज और बादाम की मगज को भी पीसकर डाल देना चाहिये। जब खुशबू आने लगे तब मिश्री का रस डालकर हलका बना लेना चाहिये इसीको निशास्ता कहते हैं।

दंती

नाम—

संस्कृत—दंती, शीघ्रा, निकुंभा, रक्तदंती, श्वेत घंटा, नागदंती, विशल्या, उदुम्बरपर्णी, गुणप्रिया, इत्यादि। हिन्दी—दंती, तिरिफल। गुजराती—दंतीमूल। मराठी—दंती, दांतरा। तामील–कट्टमनक्कू, निरदिमुत्तु। तैलगू—कोंद मुदुम, नेलजिदि। बंगाल—दंती, हकुम। कच्छ—दंतीमूल। अरबी—हब्बुलतिनेबरी. हब्बुल सल्तनेसहरो। फारसी—बेदनजीरे खटाई। लेटिन—Crotan-polyandrum (क्रोटन पोलीएंड्रम), Baliospermum Montanum (वेलियोसपरमम मोंटेनम)।

वर्णन—

दंती यह जमाल गोटेके वर्गकी एक औषधि है। इसकी दो जातियाँ होती हैं। एक छोटी और एक बड़ी। छोटी दंतीका पौधा करीब ३।४ हाथ ऊंचा, झाड़ीनुमा होता है। इसके पत्ते बरछी आकारके गूलरके पत्तोंकी तरह होते हैं। इनकी लंबाई १५ से लगाकर ३० सेंटिमीटर तक होती है। ये पत्ते रुएंदार और कटी हुई किनारोंके होते हैं। इसके फूल पीले होते हैं और फली ८ से लेकर १३ मिली मीटर तक लम्बी और गोल होती है। यह भी रुएंदार होती है। इसके बीज एक रत्ती वजनके और बिलकुल अरंडीके छोटे बीजोंके समान होते हैं। इसकी जड़की छाल खाकी रंगकी होती है। बाजारके अन्दर दंतीमूलके नामसे लाल अरंडीकी जड़ें भी लोग बेचते हैं। इसलिये इसको लेते समय सावधानी रखना चाहिये।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे दोनों प्रकारकी दंती तीव्र विरेचक, रस और पाकमें चरपरी, जठराग्नि को दीपन करनेवाली और तीक्ष्ण, गरम तथा पथरी, शूल, बवासीर, कुष्ट, दाह, कफ, सूजन, उदर रोग और कृमिरोग को नष्ट करने वाली है। छोटी दंतीका फल रस और पाकमें मधुर, शीतल, मल तथा मूत्रको निकालने वाला और विष, सूजन और कफ रोगको नष्ट करने वाला होता है।

दंतीके बीज जमाल गोटेके समान तीव्र रेचक होते हैं। अधिक मात्रामें लिये जाने पर ये प्राणघातक होजाते हैं। इसके बीज उत्तेजक और चर्म दाहक पदार्थकी तरह भी काममें लिये जाते हैं। सन्धिवातकी पीड़ामें इसकी छाल उपयोगी होती है।

मेडानका मत है कि सतलजके पूर्वमें इसके पत्ते घावोंको दुरुस्त करनेके काममें लिये जाते हैं। इसका रस लोहे को गलानेके काममें आता है। जलोदर, सर्वाङ्गीण शोथ और पीलियामें इसकी जड़ उपयोगी होती है। इसके पत्तेका काढ़ा दमेकी बीमारीमें लाभदायक है।

ज्वरके नुस्खोंमें भी दन्ती मूलका कॉफी प्रयोग होता है। इससे यकृतकी क्रिया सुधर कर दूषित पित्त दस्तकी राहसे बाहर निकल जाता है। जलोदर, हृदयोदर, यकृतोदर और मूत्र पिंडोदर वगैरह रोगोंमें दन्तीमूलका जुलाब दिया जाता है। इसके पत्तोंका काढ़ा देनेसे दमेमें लाभ होता है। शरीरकी जीवन विनिमय क्रिया बिगड़ जानेसे कई प्रकारके दोष इकट्ठे होकर तरह २ के चर्म रोग पैदा होते हैं उनमें भी दन्तीमूल का काढ़ा दिया जाता है।

यूनानीमत—

यूनानी मतसे यह वनस्पति अत्यन्त गरम है। कफ और वायुकी बीमारियोंको यह दूर करती है। जलोदरमें फायदा पहुँचाती है। सूजनको उतारती है। मेदेमें गर्मी बढ़ाती है और तेजी लाती है। कोढ़, गठिया और खूनके उपद्रवोंको नष्ट करती है। इसके पत्तोंका लेप करनेसे जख्म भर जाते हैं। इसकी जड़ दस्तावर है। इसकी जड़के चूर्णकी फक्की देनेसे पीलिया मिट जाता है। पत्तोंके काढ़ेसे दमा ठीक होता है। इसकी जड़का धूम्र पान करनेसे कफकी खांसी मिट जाती है।

कर्नल चोपराके मतानुसार इसकी जड़ और बीज विरेचक होते हैं। सर्प विषमें ये उपयोगी माने जाते हैं। इसके पत्ते दमेमें काममें लिये जाते हैं।

दंती बड़ी (मुगलाई एरंड)

नाम :—

संस्कृत—बृहद्दन्ती, गुच्छफला, दुग्ध गर्भा, विरेचनी, विषभद्रा, इत्यादि। हिन्दी—बड़ी दन्ती, मुगलाई एरंड। मराठी—मोंगली एरंड, थोरदंती। अंग्रेजी—The physic nut फिजिक नट। फारसी—शकार दुजवा। अरबी—अब्बुखलसा। लेटिन—Jatropha Multifidus (जेटरोफा मल्टीफिडस), Jatropha Curcas (जेटरोफा करकस)।

वर्णन—

इस वनस्पतिका वृक्ष अरंडीके वृक्षकी तरह होता है। इसकी छाल भूरे रंगकी होती है। इसकी लकड़ी बिलकुल पोली होती है। इसके पत्ते त्रिशूलकी तरह और मोटे होते हैं। इसके फल हरे रंगके होते हैं। इसके बीजोंमें तेल रहता है। इसके पत्तोंका डंठल तोड़नेसे उसमेंसे दूधिया रस निकलता है। औषधि प्रयोगमें इसका यह रस और इसकी जड़ें काममें आती है।

गुणदोष, और प्रभावः—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मतसे बड़ी दन्ती चरपरी, गरम, पाचन शक्तिको शुद्ध

करनेवाली तथा ववासीर, घाव, पथरी, शूल और चर्म रोगों को दूर करने वाली होती है, इसके वीज रस और पाकमें भारी, मधुर. स्निग्ध, रेचक, वीर्यवर्धक, वलदायक, कफ, पित्त कारक, वमन लाने वाले और दाह जनक हैं।

इस वनस्पतिका दूधिया रस रक्तसंग्राहक और व्रणरोपक होता है। इसकी जड़ वायु-नाशक और पाचक होती है। इसके वीजोंका तेल अत्यन्त तीव्र विरेचक होता है। इससे पानीके समान दस्त होते हैं। विरेचक पदार्थ को तरह इसे उपयोगमें नहीं लेना चाहिये क्योंकि यह वहुत उग्र है।

ताजे जख्मोंके ऊपर इसके चीप या दूधिया रसको लगानेसे रक्तश्राव वन्द होकर जखम जल्दी भर जाते हैं। व्रणोंके ऊपर इसको लगानेसे उनका संकोचन होता है और उनके ऊपर लगा हुआ चीप सूख कर कोलोडियन की तरह एक पतले परदेके रूपमें वदल जाता है। जिससे हवा और हवामें रहने वाले कृमि व्रण को नुकसान नहीं पहुँचा सकते। इन दोनों कारणोंसे व्रण जल्दी भर जाता है। दादके ऊपर भी इस रसको लगाने से फायदा होता है। इस रसके लगानेसे किसी प्रकारके नुकसान का खतरा नहीं। इसकी ताजा लकड़ीसे दतून करनेसे मसूड़ोंसे वहने वाला खून वन्द होकर दांत मजवूत होते हैं। इसके पत्तों को गरम करके स्तनों पर वांधने से दूध वढ़ता है।

दरे ओरसा

नाम:—

संथाल—दरे ओरसा। लेटिन—Commelina Swifruticosa (कोमिलिना सफ्रूटीकोसा)।

वर्णन—

यह वनस्पति हिन्दुस्तानमें नेपाल से सिकिम तक और वंगालसे मध्यभारत तक होती है। इसके पत्ते वरछी आकारके और तीखी नोक वाले, फूल नीले और सफेद और वीज वादामी रङ्गके रहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

कैंपवेलके मतानुसार संथाल लोग इसकी जड़ को छालों पर लगानेके काममें लेते हैं।

दरिया का नारियल

नाम—

हिन्दी—दरियाका नारियल। बंबई—जहरी नारियल। गुजराती—दरियानू नारियल। मराठी—दरिया चां नारेल। फारसी—नारगिले वहारी। तामील—कदत तेंगई। तेलगू—समुद्र पुतंगकया। लेटिन—Lodoicea Seychellarum. (लोडोइसिया सिचेलेरम)।

वर्णन—

यह एक जातिका जहरीला नारियल होता है। इसका वृक्ष नारियलके वृक्ष के समान ही होता है। इसका फल लम्बा और जुड़मा होता है। हिन्दुस्तानी नारियलमें जिस तरह खोपरा निकलता है। वैसाही इसमें भी निकलता है। इसका खोपरा बहुत सख्त और दो उङ्गल मोटा होता है। इसका फल साधारण नारियलसे बहुत बड़ा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जेमें गरम और खुश्क होता है किसी २ के मतसे समशीतोष्ण होता है। जितना यह ज्यादा पुराना होता है उतनी ही इसकी गर्मी और खुश्की बढ़ जाती है।

यह शरीरकी शक्तिकी रक्षा करनेवाला और जहरको उतारनेवाला है। वमन, मतली और हैजेमें इसको गुलाबजलमें घिसकर देनेसे लाभ होता है। इससे प्राणवायुको शक्ति मिलती है। शरीरमें संचित खराब दोषोंको यह निकाल देता है। अगर किसीने जहर खा लिया हो तो नारियल दरियाईको देनेसे उसी वक्त वमन होने लगती हैं और जबतक शरीर में जहरका असर रहता है तब तक बराबर वमन होती रहती है। जबतक वमन होती रहे तबतक इसको देते रहना चाहिये। अगर किसीने अफीम या बछनाग खाई हो तो ताजा दूधके साथ नारियल दर्याईको देना चाहिये। कफज्वरके आनेके पहिले अगर इसको एक दो रत्तीकी मात्रामें पीसकर दे दिया जाय तो रोगीको बड़ी शान्ति मिलती है अर्क वेद मुश्कके साथ इसको देनेसे हृदयको ताक़त मिलती है और अनारके रसके साथ यह यकृतको शक्ति देता है।

तोफ़तुल मोमनीमें हकीम महमदने लिखा है कि दरियाई नारियलको हफ्तेमें एक दो बार एक रत्तीसे ८ रत्ती तककी मात्रामें संग समाक नामक पत्थरकी खरलमें गुलाब जलके साथ रगड़ कर खालिया करें तो बुखार, इकांतरा, पाली, फालिज, लकवा, गठिया, इत्यादि रोगोंके हमलेसे आदमी बचा रहता है। क्योंकि यह खराब दोषोंको और खराब जहरको शरीरके अन्दरसे

खींचकर वमनके द्वारा बाहर फेंक देता है। अगर शरीरमें खराब दोष न हो तो यह विलकुल वमन नहीं लाता है।

बम्बई में यह पौष्टिक और ज्वर निवारक माना जाता है। अतिसार, वमन और हैजेकी बीमारीमें यह लाभदायक समझा जाता है। यह अक्सर बच्चोंको दिया जाता है। इसके हरे फलका पानी या उसका नरम गूदा पित्त नाशक और पेटके अन्दरके खट्टे पनको दूर करने वाला माना जाता है। भोजनके बाद लिये जाने परही यह अपने गुणोंको दिखलाता है।

मात्रा—इसकी साधारण मात्रा २ रत्तीसे ४ रत्ती तक है।

उपयोगः—

मोती जरा—इसकी गिरी को स्त्रीके दूधमें घिस कर दिनमें दो बार देनेसे मोतीजरा मिट जाता है।

बच्चों का उदर शूल—इसको कुचलेकी जड़के साथ पीस कर पिलानेसे बच्चों का उदर शूल मिटता है।

हैजा—इसको पानीमें घिसकर पिलानेसे हैजेके दस्त और उल्टी बन्द होती है।

विष विकार—इसको १ माशा गिरीको पीसकर पिलानेसे हर तरहका विष विकार दूर होता है।

उपदंश—उपदंशके जख्मों पर इसका लेप करनेसे लाभ होता है।

पित्तकी बीमारियां—इसके कच्चे फलका पानी पीनेसे या कच्ची गिरीको खानेसे पित्तके विकार नष्ट होते हैं।

दलबूस

नाम—

यूनानी—दलबूस।

वर्णन—

यह एक जातिकी जंगली सोसनकी जड़ है जो स्वादमें कड़वी और आकारमें प्याजके समान होती है। इसकी सूखी गठानोंको पीसकर बगदाद की स्त्रियां अपने गालों पर लाली लानेके लिये गालों पर मलती है। अरब और ईराकमें यह वनस्पति विशेष तौरसे पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क है। इसकी बड़ी गठान काम शक्ति-वर्धक, स्वादिष्ट, शरीरको मोटा करने वाली और सूजनको नष्ट करने वाली होती है। इसकी जड़को सुखाकर, पीसकर ३ मारोकी मात्रामें शहदके साथ खानेसे ववासीरके मस्से सूखकर गिर जाते हैं। इसको गर्भाशयमें रखनेसे ऋतुश्राव जारी होजाता है और चेहरे पर मलनेसे चेहरे पर सुर्खी आजाती है।

मात्रा—इसकी मात्रा ७ माशे तक है।

—

दही

नाम

संस्कृत—दधि, पयसि, मंगल्य, घनेतर, क्षीरज, क्षीरोद्भव, दिग्ध, तक्रजन्य। हिन्दी—दही। बंगाल—दही। मराठी—दही। गुजराती—दहि। करनाटकी—मसरू। तेलगू—पेरुगु। फारसी—दोग। अरबी—जुगरात। अंग्रेजी—Curd कुर्ड। लेटिन—Coagulated Milk (कोग्यूलेटेड मिल्क)।

वर्णन—

जमे हुए दूध को दही कहते हैं। आयुर्वेद के मतसे यह पाँच प्रकार का होता है। मन्द, मधुर, मधुराम्ल, अम्ल और अत्यम्ल। जो दूध जमकर कुछ गाढ़ा पड़ गया हो और जिसमें खट्टा मीठा किसी प्रकार का स्वाद मालूम न हो उस दही को मन्द कहते हैं। जो जमकर गाढ़ा हो गया हो और जिसमें मीठा रस तो प्रगट हो मगर खट्टा रस प्रगट नहीं हुआ हो उस दही को मधुर या स्वादु दही कहते हैं। जो दही खट्टा और मीठा दोनों रसों से युक्त हो उसको मधुराम्ल या स्वादु अम्ल दही कहते हैं। जिस दही में मधुरता नष्ट होकर खट्टापन तेज हो गया हो उसको अम्ल दही कहते हैं। जो दही अत्यन्त खट्टा हो, जिसके खानेसे दांत खट्टे हो जाँय और शरीर में रोमांच होजाय उसको अत्यम्ल दही कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदके मत से दही अम्ल, भारी, वातके विकार को दूर करनेवाला मलरोधक, मूत्रल, बलकारक, कफनाशक, रुचिवर्धक, जलन को दूर करनेवाला, तथा खांसी, श्वास, पीनस, विषमज्वर और शीत ज्वर में लाभदायक है।

मदनपाल निघण्टुके मतानुसार दही गरम, अग्निदीपक, स्निग्ध, कुछ कसैला. भारी, पचनेमें खट्टा, मलरोधक तथो रक्त पित्त, सूजन, मेद और, कफ को बढ़ानेवाला होता है। मूत्र कृच्छ, जुकाम, शीत और विषम ज्वर, अतिसार, अरुचि और दुबलेपन में दही हितकारी है।

मन्ददही—मन्ददही मलमूत्र और दाह को पैदा करनेवाला होता है।

मधुर या स्वादु दही—वीर्य्यवर्धक, मेदजनक, कफकारी, वातनाशक, पचनेमें मीठा और रक्त पित्त को कुपित करनेवाला होता है।

स्वादाम्ल दही—इसके गुण सामान्य दही के समान होते हैं।

अम्ल दही—दीपन और रक्त पित्त तथा कफ को पैदा करनेवाला होता है।

अत्यम्ल दही—रुधिर विकार, वात और पित्त को पैदा करनेवाला होता है।

पथ्य के अन्दर हमेशा मीठा दही काम में लेना चाहिये। क्योंकि मीठा दही रोगनाशक और अत्यंत खट्टा दही रोगकारक होता है।

गाय का दही—गाय का दही अत्यन्त पवित्र, बलकारक, शीतल, पचने में स्वादिष्ट. रुचिकारक, अग्निवर्धक, पौष्टिक और कफनाशक होता है। सब प्रकार के दही में-गाय का दही अधिक गुणकारी होता है। यह अरुचि, पीनस, खांसी, मूत्रकृच्छ्र, शीतज्वर, विषमज्वर, बवासीर और संग्रहणी रोग में हितकारी है।

भैंसका दही—भैंसका दही रक्त पित्त को कुपित करनेवाला, वीर्यवर्धक, स्निग्ध, मधुर, शोधक, कफकारक, भारी, बलकारक, वीर्यवर्धक और पित्त, वात तथा श्रम को दूर करता है।

बकरी की दही—बकरी का दही—कफ पित्त और वात नाशक, गरम, वीर्यवर्धक, पौष्टिक, कान्तिकारक, बलवर्धक, अग्नि दीपक, तथा बवासीर, श्वास, खांसी और अतिसारके रोगों में उत्तम पथ्य है।

वर्षाऋतु का दही—वर्षा ऋतु का दही पित्त कारक, वात निवारक, कफ को कुपित करनेवाला तथा गुल्म, बवासीर, कुष्ट और रक्त पित्त रोगमें अपथ्य है।

शरद ऋतु का दही—भारी, खट्टा, रक्त पित्त वर्धक तथा सूजन, तृषा और ज्वरसे पीड़ित मनुष्यके लिये कुपथ्य है।

हेमन्त ऋतु का दही—भारी, स्निग्ध, मधुर, कफकारक, बलवर्धक, वीर्यजनक, बुद्धिवर्धक, पौष्टिक और तृप्ति दायक है।

शिशिर ऋतु का दही—वीर्यवर्धक, बलकारक, पित्त जनक, भयनाशक, गाढ़ा, खट्टा और भारी होता है।

वसन्त ऋतु का दही—वात कारक, मधुर, स्निग्ध, किंचित् खट्टा, कफकारक, पौष्टिक, और वीर्यवर्धक होता है। वसन्त ऋतुमें दही का खाना श्रेष्ठ नहीं है।

ग्रीष्म ऋतु का दही—हलका, खट्टा, अत्यन्त गरम, रक्त पित्त कारक तथा शोष, भ्रम और प्यास को पैदा करने वाला होता है।

मक्खन निकाला हुआ दही—मक्खन निकाले हुए दूध का दही मलरोधक, शीतल, वात कारक, हलका, अग्निदीपक और संग्रहणीरोग को दूर करनेवाला होता है।

शरद, ग्रीष्म और वसन्त ऋतुमें दही हानिकारक होता हैं और हेमन्त शिशिर तथा वर्षा ऋतुमें दही हितकारी होता है।

बिना नियमके दही को खानेसे ज्वर, रक्तपित्त, विसर्प, कुष्ट, पाण्डु, भ्रम, कामला, इत्यादि अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

दहीमें त्रिकुटे का चूर्ण, सेंधा निमक और राई का चूर्ण मिला कर हेमन्त और शिशिर ऋतुमें खानेसे कफ और वात दूर होते हैं। अग्निको प्रदीप्त होती है। यह शरीर को दृढ़ करता है और अंगोंमें कान्ति पैदा करता है। यह एक उत्तम पथ्य है।

दही की मलाई—दही की मलाई स्वादिष्ट, भारी, वीर्यवर्धक, वात नाशक, जठराग्नि को मन्दकरने वाली, वस्ति रोग नाशक और पित्त तथा कफ को बढ़ाने वाली होती है।

दही का तोड़—कृमि नाशक, बलकारक, रुचिवर्धक, शरीर के श्रोतों को शुद्ध करने वाला, आनन्द दायक, कफ नाशक, तृषानिवारक, वातनाशक, तृप्तिजनक और शीघ्र ही मल के संचय को भेदने वाला है।

यूनानी मत—यूनानी मत से तह दूसरे दर्जेमें सर्द और तर है। मक्खन निकालने पर सर्द और खुश्क हो जाता है। यह शरीरमें तरीको बढ़ाता है। गरम प्रकृति वालों की काम शक्ति को बढ़ाता है। वीर्य वर्धक है, देर से हजम होता है। इसको सिर पर मलने से दिमाग़में तरी आकर नींद आ जाती है। इस कार्यमें यह तुख्म कद्दूके रोगनसे भी जल्दी फायदा करता है। दही को चेहरे पर मलनेसे चेहरे की खुश्की, स्याही और छाजन दूर हो जाती है। दही के साथ चांवलों को खिलानेसे अतिसारमें लाभ होता है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन शरीरमें बुरे और खराब दोष पैदा करता है। सर्द प्रकृति वालोंके मेदे को भी यह नुकसान पहुँचाता है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नाश करने के लिये नमक, सोंठ, पोदीना, जीरा, गुलकन्द और अदरक का मुरब्बा मुफीद है।

उपयोग :—

बवासीर—दही का अथवा मट्ठे का लगातार सेवन करते रहनेसे बवासीर से खून बहना बन्द हो जाता है।

रतौंधी—दहीके तोड़में थूक मिलाकर अञ्जन करनेसे रतौंधी मिटती है।

जमाल गोटे की दस्तें—दहीमें दो माशे कतीरा गोंद मिलाकर पिलाने से जमाल गोटे की दस्तें बन्द होती हैं।

दाद और खुजली—आंवला, पंवार के बीज और कथे को दहीके साथ पीस कर लेप करने से दाद और खुजली मिटती है।

जायफल का नशा—जायफल का मद उतारने के लिये दही में शक्कर मिलाकर खिलाना चाहिये।

दाह—दहीमें से टपके हुए पानी का लेप करनेसे दाह मिटती है।

प्रवाहिका—दहीके तोड़में शहद मिलाकर चटानेसे प्रवाहिका मिटती है।

अतिसार—पके हुए चांवलों को दही में मिलाकर खिलाने से अतिसारमें लाभ होता है।

दही पलाश

नाम—

हिन्दी—दही पलाश, देवास, धागन, धेन, धेमन, धामन, ढेंगन। मराठी—भोटी, देवास, धेम, धामन। मेरवाड़ा—गोंदेला। राजपुताना—गोंदू। संथाल—जुगिया। तामील—पेलडेकु। तेलगू—बोटेकू। लेटिन—Cordia Macleodii (कोर्डिया मेकलिआडी)।

वर्णन—

यह गूंदा या लिसोड़ेकी जातिका एक वृक्ष होता है। इसका झाड़ ९ से १२ मीटर तक

ऊंचा होता है। इसके पिंडकी गोलाई ६० सेंटिमीटर तक होती है। इसकी छाल नरम, चिकनी और सफेद होती है। इसके पत्ते ५-१५ सेंटिमीटर लम्बे होते हैं। इसके फूल गूंदेके फूलकी तरह ही आते हैं। यह वनस्पति छोटा नागपुर सेंट्रल इंडिया, राजपूताना, करनाटक और दक्षिणमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

केंप बेलके मतानुसार संथाल लोग इसकी छालको पीलिया और कामला रोग दूर करनेके लिये काममें लेते हैं।

दाक

नाम—

पंजाब—दाक। लेटिन—Ribes Rubrum (रायबिस रुबरम)।

वर्णन—

यह एक छोटी जातिकी वनस्पति होती है। इसके पत्ते अनारके पत्तोंकी तरह मुलायम और हलके हरे रंगके होते हैं। इसका ताजा फल गोल, चिकना, तोड़नेसे भीतर गहरा नीला, स्याही माइल और बाहरसे सब्जी माइल लाल रंगका होता है। इसके पौधे अकसर करके सेब, नासपाती और बलूतके झाड़ोंकी जड़ोंके पास पैदा होते हैं। इसके फलके अन्दर चेंप व चिकनाई होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जे में गरम और पहले दर्जे में खुश्क होता है। कोई २ इसको गरम और तर मानते हैं। यह सूजनको उतारने वाला, सर्दीको दूर करने वाला और शक्तिदायक होता है।

इसको गरम पानीमें भिंगोकर छिलके और बीज दूर करके अखरोट या अरंडकी मगज के साथ खानेसे शरीरमें संचित दूषित वायु और कफ निकल जाते हैं। सरदीकी सूजन पर इसका लेप करनेसे सूजन बिखर जाती है। कफकी वजहसे उछली हुई पित्तीको यह दूर कर देता है। इसके लेपसे जोड़ोंका दर्द और चेहरेके काले धब्बे मिट जाते हैं। मेंहदीके साथ इसको लगानेसे सिरकी गंज मिट जाती है। रोगन गुलमें इसको मिलाकर बालों पर लगानेसे बाल लंबे होजाते हैं। चूनेके पानीके साथ इसको मिलाकर तिल्लीकी सूजन पर लेप करनेसे सूजन मिट जाती है। इसका लेप भीतरके खराब मवादको खींचकर निकाल देता है।

मुजिर—इसको अधिक मात्रामें लेनेसे सिर दर्द, पेटमें मरोड़ और एंठन पैदा हो जाती है तथा हृदयको बहुत नुकसान पहुँचाता है। इसलिये इसको तीन माशेसे अधिक मात्रामें कभी नहीं लेना चाहिये। अगर कभी अधिक मात्रामें लेलिया गया हो तो पानी और शहद पिलाकर वमन कराना चाहिये। एनेमा लगाना चाहिये और उसके बाद शिकंजबीन पिलाना चाहिये। बिल्ली लोटन, गाव जबां और नरकचूर भी इसके दर्पको नष्ट करते हैं।

दाजी

नाम:—
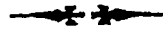
यूनानी—दाजी।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का पौधा है जो फारस के पहाड़ों में पैदा होता है। इसकी ऊंचाई १ बालिश्त से कुछ ज्यादा होती है। इसका फूल गहरे नीले रंग का और खुशबूदार होता है। इसका बीज जौ के समान लंबा और बारीक होता है। इसका रंग मैला तथा स्वाद कड़वा और तेज होता है। इसकी एक जाति और होती है जो रूम में पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह पहले दर्जे में गरम और दूसरे दर्जे में खुश्क होता है। यह विष को नष्ट करनेवाला, काबिज और नशीला होता है। इसके लेप से सख्त सूजन मुलायम हो जाती है। इसको शहद में मिलाकर चाटने से मुँह से लार पड़ना बन्द हो जाता है। इसकी मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक है। ज्यादा मात्रा में इसको नहीं लेना चाहिये क्योंकि इससे सिर में चक्कर आकर आदमी पागल हो जाता है। कभी २ मर भी जाता है। इसके विकार को शांत करने के लिये जुलाब देना चाहिये और ताजा दूध पिलाना चाहिये।

दाँतिरा

नाम:—

मराठी—दांतिरा, दात्री, ऊंबर। गुजरात—ऊंबर। देहरादून—छंद्दरी। तामील—अलवलंगी, इरदगम, इरली। तेलगू—कोदमजुवी, तेन्जवरिकम्। लेटिन—Ficus Gibbosa फायकस गिब्रोसा)।

वर्णन—

यह गूलर की जाति का एक वृक्ष होता है। इसका पौधा झाड़ी नुमा होता है। इसकी शाखाएं पिण्ड के पास ही जाल की तरह फैली हुई रहती हैं। पुरानो दीवालों और कुओं के ऊपर भी यह वृक्ष पैदा होता हुआ देखा जाता है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसकी जड़ का काढ़ा अग्निदीपक और मृदुविरेचक पदार्थ है। इसमें उपचार पाये जाते हैं।

दाद मर्दन

नाम :—

संस्कृत—दद्रुघ्न, द्वीपगास्ति। हिन्दी—दादमर्दन। बंगाल—दादमर्दन। बम्बई—विलायती आगटी। कनाड़ी—शीमे अगसे। मराठी—दादमर्दन। उड़िया—जदुमारी। तामील—वेंडुकोल्लि। तेलगू—शीम अविशी। लेटिन—Cassia Alata (केसिया एलेटा)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जातिकी झाड़ी होती है। भारतवर्षमें इसकी खेती की जाती है। इसके पत्ते ३० से लेकर ६० सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल छोटे पुष्प व्रन्त पर लगते हैं इसकी फलियां चमकीली और पीली रहती हैं। हरएक फलीमें ५० या इससे अधिक वीज होते हैं। ये फलियां १० से लेकर २० सेंटिमीटर तक लम्बी और १-६ सेंटिमीटर चौड़ी होती हैं। इस वनस्पतिकी रुचि सनायके समान होती है। औषधि प्रयोगमें इसके पत्ते विशेषरूपसे काममें आते हैं।

गुणदोष और प्रभाव

आयुर्वेदके मतानुसार इसके वीज तूरे, वातनाशक और खुजली, खांसी, दमा, दाद और चर्मरोगोंमें लाभदायक होते हैं। ये कृमिनाशक भी होते हैं।

दादमर्दन सनायके समान रेचक, कसौंदीके समान कफनाशक और कुछ मूत्रल होता है। यह कुष्ठनाशक भी है। इसके पत्तोंको कूटकर नीमके रसके साथ लेप करनेसे दाद खुजली इत्यादि रोगोंमें अच्छा लाभ होता है। नवीन वीमारीमें ये शीघ्र गुण वतलाते हैं। इसके पत्ते

और फूलोंका काढ़ा श्वासनलिकाकी सूजन और दमेमें देनेसे घबराहटकी कमी होती है, कफ छूटने लगता है, दस्त होते हैं और पेशाब ज्यादा होता है।

इस वनस्पतिके पत्ते दादके लिये एक बहुत उत्तम औषधि माने गये हैं। दूसरे चर्मरोग और सर्प विष पर भी यह औषधि लाभदायक मानी गई है।

आजतक जो भी अन्वेषण इस विषयमें किये गये हैं, उनसे यह पता लगता है कि दाद के ऊपर यह एक उत्तम औषधि है। इसे उपयोगमें लेनेका उत्तम तरीका यह है कि इसके पत्तों को पीसकर, नीबूके रसमें मिलाकर लगाये जाते हैं। इसके पत्तोंमें विरेचक गुण भी होते हैं।

डाक्टर अमेदका लिखना है कि एक्झिमाकी बीमारीमें जिसमें कि लाल २ फुन्सियां होती हैं इसके पत्ते और फूलोंको पानीमें उबालकर उस पानीसे खुजलीके स्थानको बार २ धोने से काफी लाभ होता है। इसको छालमें भी यही गुण है। वायुनलियोंके प्रदाह और दमें पर भी उपरोक्त डाक्टर साहबने इसके पत्ते और फूलोंका काढ़ा कईबार दिया। इसके देनेसे पीड़ामें कमी हो जाती है, दूसरे लक्षण भी मिट जाते हैं और कफ निकलनेकी मात्रा बढ़ जाती है। आंतों पर भी यह वनस्पति अपना अनुकूल प्रभाव दिखलाती है।

इंडोचायना और फिलिपाइन द्वीपसमूहमें इसके पत्ते दादकी बीमारीमें बहुत लाभदायक माने जाते हैं। इसकी लकड़ीका काढ़ा मृदुविरेचक औषधिकी तौर पर काममें लिया जाता है।

गोल्डकास्टमें इसके पत्तोंको पीसकर काली मिर्चके साथमें धोबी—खुजली नामकी बीमारी पर लगाया जाता है। ये सिर और चमड़ेके दाद पर भी लाभदायक हैं। जिस स्थानपर पीड़ा हो उसे पहले इतना रगड़ना चाहिये कि वहां पर कुछ खून आजाय फिर इसके पत्तोंको हथेलीमें लेकर मसलकर उस स्थान पर लगा देते हैं इससे जल्दी फायदा होता है। देशी दवाइयोंमें यह एक उत्तम दवा है। प्रसूतिकालमें इसके पत्तोंको उबालकर स्त्रियोंको पिलाते हैं जिससे कि प्रसूतिमें किसी प्रकारकी तकलीफ नहीं होती और बच्चा जल्दी पैदा हो जाता है।

कोमानने इसके पत्तोंकी लुग्दी दादसे पीड़ित कई व्यक्तियों पर अजमाई और इससे लाभ पहुँचा। किंतु पुरानी दादकी बीमारी पर इससे सफलता प्राप्त न हो सकी।

सांपके काटने पर इसके ताजा पत्तोंको पीसकर पिलानेके काममें लेते हैं। बिच्छूके विष पर इस वनस्पतिके पंचांगकी लुग्दी बनाकर काटे हुए स्थान पर लगाते हैं।

केस और महस्करके मतानुसार यह वनस्पति सांप और बिच्छूके काटने पर बिलकुल निरुपयोगी है।

कर्नलचोपराके मतानुसार इस वनस्पतिमें "कोरिसोफेनिक अम्ल" पाये जाते हैं। यह सांपके विषके ऊपर भी उपयोगी मानी जाती है।

उपयोग :—

दाद—सुहागा और हरड़ के साथ इसकी जड़को पीस कर लेप करनेसे दाद मिट जाता है। इसके ताजे पत्तों का लेप करने से भी दाद नष्ट होता है। इसके पत्तों को नमकके साथ लेप करनेसे दाद तुरन्त मिट जाता है।

मुंह के छाले—इसके पत्तों का काढ़ा बनाकर उससे कुल्ले करने से मुंह के छाले मिट जाते हैं।

खांसी—इसके और अडूसे के पत्तोंको चूसने से सूखी खांसी मिट जाती है।

एक्जिमा—कागजी नीबूमें इसके पत्तों को पीसकर लगानेसे एक्जिमामें लाभ होता है।

कब्ज—इसके पत्तोंके चूर्ण को फांकने से कब्ज मिट जाती है।

दादमारी

नाम :—

संस्कृत—दादमारि। हिन्दी—दाद मारी, दविदुवा। बंगाल—चिने घास, दावीदूब, देचि दुब्ब। मलयालम—कोचिलचि। लेटिन—Xyris Indio। (झाइरिस इण्डिका)।

वर्णन :—

यह बनस्पति बंगाल, बरमा, आसाम, दक्षिणी कोकण और पश्चिमी प्रायद्वीपमें पैदा होती है। यह एक वर्ष जीवी वनस्पति है। इसके पत्ते लम्बे और सीधे रहते हैं। इसके फूल गहरे या लाल बादामी रंगके और चमकीले होते हैं। इसका फल गोल तथा इसके बीज छोटे तथा अण्डाकार रहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

राक्स वर्गके मतानुसार बंगाल और मलाबारमें इस वनस्पति की बड़ी प्रशंसा है। वहां पर यह वनस्पति दाद और खाज की एक बहुत ही सरल और शर्तिया दवा मानी जाती है।

रासायनिक विश्लेषण—इस बनस्पतिमें क्रायसोफेनिक एसिड की तरह एक लाल द्रव्य पाया जाता है जो शराबमें घुल जाता है।

कर्नल चोपराके मतानुसार यह वनस्पति दादमें बहुत लाभदायक है।

दामर

नाम :—

नेपाल—दामर । सिलहट—केटि । लेटिन—Dalbergia TamarindiFolia (डलवेर्गिया टेमेरिण्डीफोलिया) ।

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालय, इण्डोचायना और मलाया में पैदा होती है । यह एक पराश्रयी झाड़ीनुमा लता होती है । इसके पत्ते १० से लगाकर १५ सेंटिमीटर तक लम्वे होते हैं । इनके दोनों तरफ रुएं रहते हैं । इसके फूल गुच्छोंमें लगते हैं । इसकी फली हरे रंग की और चमकीली होती है ।

गुणदोष और प्रभाव—

इण्डोचायनामें इसकी जड़ एक कृमिनाशक पदार्थ की तरह उपयोगमें ली जाती है । स्तनों की पीड़ामें भी इसे काममें लेते हैं ।

दारू हलदी

नाम—

संस्कृत—दारु हरिद्र, दारुपित्ता, दारुनिशा, दर्वा, द्वितीया आभा, हेमवती, हरिद्र, हेम कांति, कामिनि, कष्टा, पीतदारु, पीत चन्दना, इत्यादि । हिन्दी—दारु हलदी, कष्मल । नेपाल—चित्रा, कष्मल । गुजराती—दारुहल्दर । मराठी—दारुहलद । कुमाऊ—किल मोरा । कनाड़ी—मरदर्शिना । वंगाल—दारुहरिद्रा । लेटिन—Berberis Aristata (बरबेरिस एरिस्टेटा) ।

वर्णन—

दारुहलदी का वृक्ष कांटेदार और झाड़ीनुमा होता है । इसकी ऊंचाई १५ फीट तक होती है । हिमालयमें नेपाल, धून और कुनुवारमें यह वृक्ष बहुत पैदा होता है । हिमालयमें पैदा होने वाली दारुहल्दी की छह जातियां होती हैं । जिनको लेटिनमें क्रमसे, वरवेरिस एरिस्टेटा, वरबेरिस एसियाटिका, बरबेरिस कोर्सिया, बरबेरिस लिसियम, बरबेरिस नेपलेंसिस और वरबेरिस व्हलगेरियस कहते हैं । इन्हीं को क्रमसे हिन्दीमें दारुहलदी, किलमोरा, कष्मल, चित्रा, चिरोर और झरेक कहते हैं ।

कष्मल नामक जाति राजपुरसे मसूरी तक और नानसे चूर पर्वत पर साधारण ऊंचाई पर पैदा होती है। इसके पत्ते और डालियां फीके रंगकी होती हैं। इसमें कांटे बहुत होते हैं। अप्रैल महीनेमें इसके फूलोंके झुमके आते हैं। इसके फल अधिक मांसल नहीं होते। गढ़वाल और सिर मौरमें इस वृक्षके द्वारा रसोत तैय्यारकी जाती है।

इसकी चित्रा नामक जातिका वृक्ष कष्मलकी अपेक्षा अधिक ऊंचाईपर पैदा होताहै। इसकी डालियां खाकी रंगकी, पत्ते अखंड और फूल कष्मलके फूलों की अपेक्षा बड़े आकारके होते हैं। ये भी झूमकों में लगते हैं। इसके फल विशेष मांसल होते हैं और वे सुखाये जाने पर काली द्राक्षके समान दिखलाई देते हैं। ये फल बाजारमें जरेशकके नामसे बिकते हैं. इन बीजोंका स्वाद कुछ खट्टापन लिये हुए स्वादिष्ट होता है। नेपालके अन्दर इस वनस्पतिके पंचांगको उबालकर रसोत तैयारकी जाती हैं। दारुहल्दीकी एक जाति नीलगीरि पर्वत पर भी होती है, मगर उत्तम जातिकी दारुहल्दी उत्तर हिन्दुस्तान से ही सब दूर जाती है।

इसकी उत्पत्ति कम होने की वजह से गंधी लोग इसके बदले में विधायरा और समुद्र शोष की लकड़ियों को हलदी में उबाल २ कर दे देते हैं। इसलिये दारु हलदी को खरीदते समय उसकी असलियत का ध्यान रखना चाहिये। दारू हल्दी के टुकड़े मुड़ नहीं सकते और न चोट मारने से आसानी से टूटते हैं। इसकी लकड़ी अत्यंत चीठी और कठिनाई से टूटनेवाली होती है। टूटने पर इसकी बुकनी हलदी की बुकनी की तरह दिखलाई पड़ती है। इस लकड़ी को चाहे कितना ही उबाला जाय पर इसका पीलापन दूर नहीं होता।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मत ने दारूहल्दी कड़वी, चरपरी. गरम तथा व्रण, प्रमेह, कंडू, विसर्प, त्वचा के दोष, विष विकार, कर्णरोग. नेत्ररोग. मुखरोग, गर्भाशय के रोग और ज्वर में गुणकारी है।

यूनानी मत—यूनानी मतसे यह पीलिया, आँखों के व्रण, दांत के दर्द और दमें पर लाभदायक है। अच्छे नहीं होनेवाले व्रणों को भी यह सुखा देती है। इसका लेप प्रदाह और सूजन को मिटाता है। मलयागिरि चन्दन के साथ इसका उपयोग करने से धातु का जाना बन्द हो जाता है। टूटी हुई हड्डी पर अण्डे की सफेदी के साथ इसका लेप करने से हड्डी जुड़ जाती है। चोट की जगह पर इसका लेप करने से खून नहीं जमता। शक्कर के साथ इसको खानेसे स्तम्भन होता है। खराब नासूर भी इसके उपयोग से भर जाता है। तर और सूखी खुजली, जहरबाज और पेट के कीड़े भी इसके उपयोग से नष्ट हो जाते हैं।

रासायनिक विश्लेषण—दारू हल्दी के अन्दर प्रधान वस्तु इसके अन्दर पाया जानेवाला

बरबेराइन नामक पीले रंग का कड़वा उपक्षार होता है। इसी द्रव्य की वजह से इस औषधि की इतनी प्रशंसा है। यह इसकी जड़ और छिलके में काफी फैला हुआ रहता है।

औषधि शास्त्र में बरबेराइन की उपयोगिता—

बरबेराइन विषैला उपक्षार नहीं है। इसके सब कुटेनियस इंजेक्शन दिये जाने पर यह शरीर की क्रिया में जल्दी ही मिल जाता है। मुँह से दिये जाने पर इसका रंग बहुत जल्दी पेशाब के अन्दर दिखाई देने लगता है।

बरबेराइन पाकस्थली और बड़ी आँत की गति पर अपना उत्तेजक प्रभाव दिखलाता है।

हृदयके ऊपर भी इस उपक्षारके प्रभाव काफी होते हैं। इसके देनेसे हृदय का भार कम हो जाता है। रक्त की नलियों का फैलाव होता है। हृदय की आरिकल्स और वेन्ट्रिकल्स में ढीलापन आता है और इसका प्रभाव हृदयके विस्तार में होता है।

श्वास क्रिया प्रणाली पर बरबेराइन का प्रभाव—

इसके देनेसे श्वास क्रिया प्रणाली पर भी प्रभाव पड़ता है। सम्भव है कि यह रक्त भार कम होनेके कारणसे ही होता हो। जब इसे अधिक मात्रामें दे दिया जाता है तब शुरू शुरू में इससे उत्तेजना होती है। लेकिन बादमें श्वास के केन्द्र ढीले हो जाते हैं जिससे श्वास रुक जाने की वजहसे कभी २ मृत्यु भी हो जाती है।

बरबेराइन और चर्मरोग—

बरबेराइन का सबसे अधिक उपयोग ओरियन्टल सोअर याने पूर्वी देशके फोड़ों पर किया जाता है। जाली ने सन् १९११ में सबसे पहले रसोत को इस उपयोग में लिया और उसके परिणाम भिन्न २ नजर आये। सन् १९२७ में वर्माने बरबेराइन सल्फेट को ओरियन्टल सोअर के उपयोगमें लिया और उनको काफी सफलता प्राप्त हुई। उसी वर्ष कर्म चंदानी ने इन फोड़ों पर अनेक प्रकारसे बरबेराइन को अजमाया और उन्होंने बतलाया कि बरबेराइनके इंजेक्शन इन फोड़ों को दूर करने में बहुत सफल सिद्ध हुए हैं। दास गुप्त और दीक्षितने सन् १९२६ में बरबेराइन को इन फोड़ोंसे पीड़ित बीमारों पर और चूहोंके जख़मों पर अजमाया और वे इस नतीजे पर पहुँचे कि इस बिकार को नष्ट करनेमें इस वनस्पति का काफी प्रभाव है। इसी वर्ष लक्ष्मीदेवीने भी पूर्वीय फोड़ोंसे पीड़ित कई बीमारों पर इसको अज़माया जिसमें उन्हें काफी सफलता मिली। इन सब अनुसंधानोंसे सिद्ध हो चुका है कि ऐसे चर्म रोगोमें जिनमें जखम हो जाते हैं, बरबेरिन सलफाइड बहुत सफल उपाय है।

इसका एक सप्ताहमें एकहीं इंजेक्शन देना काफी होता है। पूरी बीमारी को दूर करनेके

लिये तीनसे अधिक इंजेक्शनों की अक्सर आवश्यकता नहीं होती। फोड़ों का साधारण ड्रेसिंग करते रहना चाहिये।*

मलेरिया ज्वर और वरवेराइन—

वरवेराइन और इसके साथके अन्य पदार्थ ज्वर निवारक गुणवाले माने गये हैं। भारतीय वैद्य मलेरियाके इलाजमें बहुत समयसे इसे इलाजमें काममें लेते हैं। कर्नल चोपराने वरवेराइनको मलेरियासे पीड़ित बीमारों पर अजमाया। उन्होंने इसे ३ से लेकर ५ ग्रेन तककी मात्रामें दिनमें तीन बार लगातार ३ दिन तक दिया। मगर मलेरियाके कीटाणुओं पर कुछ भी असर नहीं होने पाया। जांच करने पर यह पाया गया कि मलेरियाके परोपजीवी कीटाणु इससे नष्ट नहीं होते।

करीब ६ मलेरिया के बीमारों पर दूसरी बार फिर इसे अजमाया गया। मगर फिर भी इस उपचारका कोई भी असर दिखलाई नहीं दिया। क्विनाइन देनेपर मलेरियाके कीटाणुओं पर उसका असर फौरन दिखलाई दिया। इसलिये कर्नल चोपरा इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि ऐसा विश्वास करना कि वरवेराइन मलेरियामें उपयोगी है, बिलकुल निराधार है।

यद्यपि यह मलेरिया पेरेसाइट (कीटाणुओं) को नष्ट नहीं करता है फिर भी पेरेसाइट को रक्तकी गतिमें ले आता है। जिससे रोगका निदान करनेमें बड़ी मदद मिलती है। वरवेराइन लेनेके पहिले जो खून की फिल्म बिना पेरेसाइटके दिखलाई देती थी, वरवेराइन देनेके बाद उसी खूनकी फिल्म मलेरिया पेरेसाइटसे युक्त पाई गई।

यद्यपि कर्नलचोपराके मतसे यह वनस्पति मलेरिया ज्वरमें निरुपयोगी पाई गई है तथापि हिन्दू और मुसलमान दोनों ही चिकित्सकोंके द्वारा एक सुदीर्घकालसे यह वनस्पति ज्वरनिवारक, अग्निवर्धक कटुपौष्टिक और धातुपरिवर्तक औषधिके रूपमें काममें ली जा रही है। पार्यायिक ज्वरोंमें भी वे लोग इसका उपयोग करते आये हैं। वे इसे कोढ़, पीलिया, सांपका काटना और गर्भावस्थाकी मतलीको दूर करनेके काममें भी लेते हैं। इसका फल (जरेशक) बच्चोंको मृदु विरेचकके रूप में दिया जाता है। इसका तना ज्वरनिवारक और मृदुविरेचक माना जाता है और यह संधिवातमें भी काममें लिया जाता है। इसकी जड़का छिलका कटु रसोंसे युक्त रहता है। यह पौष्टिक और ज्वरनिवारक पदार्थके रूपमें काममें लिया जाता है। इसका प्रभाव कुनैनकी ही तरह जोरदार होता है। इसकी जड़से जो काढ़ा तैयार किया जाता है वह ज्वरको उतार देता है। इसकी जड़के सूखे सतको रसोत कहते हैं।

* नोट—मेसर्स मे एण्ड बेकर ने ओरिसोल के नाम से वरवेराइन के पेटेण्ट इंजेक्शन्स तैयार किये हैं।

रसोत या रसांजन

रसोत बनाने की विधिः—वर्षाके आखिरमें इसके झाड़को काट कर उसके पचांगको कूटकर उसका घन क्वाथ बना लिया जाता है उस को रसोत कहते हैं। कहीं २ इसकी जड़ों को ४ तोला लेकर उनके पतले २ टुकड़े करके उनको आधा सेर पानीमें उबालते हैं और जब ८ तोला पानी रह जाता है, तब इसमें ८ तोला बकरीका दूध मिलाकर फिर उबालते हैं और गाढ़ा होने पर ठंडा कर लेते हैं। यही रसोत कहलाता है। बाजारू रसोतमें लकड़ी पानी, लाल मिट्टी, वगैरह कचरा मिला हुआ रहता हैं। इसलिये इसको शुद्ध किये बिना काममें नहीं लेना चाहिये। इस रसोत को दसगुने गरम पानीमें मिलाकर कपड़ेमें छानना चाहियें और फिर उसको सुखाकर काममें लेना चाहिये।

रसोत यह एक मूल्यवान औषधि है। ज्वरके अन्दर इस औषधिको देनेका बहुत रिवाज है। विषम ज्वरको उतारनेके लिये रसोतको १५ रत्तीकी मात्रामें ठंढे पानीमें मिलाकर दिनमें तीन बार देना चाहिये। इससे पेटमें कुछ गरमी उत्पन्न होती हुई मालुम होती है। भूख लगती है, अन्न पचता है और दस्त साफ होता है। विषम ज्वरमें सब प्रकारसे यह लाभ पहुँचाती है और प्लीहाको दुरुस्त करती है। कुनेनसे जिस प्रकार सिर दर्द, बहिरापन और कब्ज होजाती है वैसी इससे नहीं होती। मगर इसमें एक दोष भी है वह यह कि अगर रोगीको रोगके पूर्व कभी रक्त आँवकी शिकायत हुई हो तो वह फिरसे पैदा हो जाती हैं। विषम ज्वरकी चिकित्सामें रसोतको देनेके पूर्व रोगीको जुलाब देना चाहिये और खाली पेट इसकी पूरी मात्रा देना चाहिये। उसके पश्चात रोगीको अच्छी तरहसे ओढ़ाकर सुला देना चाहिये। कभी २ रोगीको बहुत प्यास लगती है और उसका जी घबराने लगता है मगर उसको पानी नहीं देना चाहिये। १ घंटेके बाद रोगीका पसीना छूटने लगता है और उसको कमजोरी आने लगती है। उस समय रोगीको थोड़ा दूध पीनेको देना चाहिये। इसके बाद रोगी अक्सर सोजाता है और सोकर उठनेके बाद उसकी तबियत अच्छी होजाती है।

चालू ज्वरके अन्दर अगर पित्तकी प्रधानता हो और रोगीको जंभाइयाँ, दस्त, उल्टी, सिर दर्द और थकावट मालूम होती हो तो ऐसे समयमें दारुहल्दीका क्वाथ बनाकर देना चाहिये। ज्वरके साथ यदि कब्जियत हो तो दारुहल्दी को चिरायतेके साथ देना चाहिये।

ज्वर के अनन्तर होने वाली कमजोरीमें दारू हल्दी से बड़ा लाभ होता है। मलेरिया के विषसे अथवा आमाशय की शिथिलता से होनेवाले अग्निमांद्यमें अथवा आंतोंके रोगमें दारू हल्दी का क्वाथ देनेसे आमाशय की शुद्धि होकर आन्तों की शक्ति बढ़ती है। इन रोगों में दारू हल्दी को छोटी मात्रामें सुगन्धित द्रव्योंके साथ देना चाहिये।

डॉक्टर ओशगनेसीने बुखारके करीब ३६ रोगियों पर रसोत को अजमाया। इनमें से कईके तिल्ली की तकलीफ भी थी। रसोत शुरू करनेके बाद तीन दिनमें बुखार मिट गया। चौथैया ज्वर से पीड़ित ८ बीमारों पर इसे अजमाया गया। जिसमें से ६ बीमार अच्छे हो गये। उन्हें सिर दर्द और कब्जियत भी नहीं हुई। इसको कपूर और मक्खन के साथमें मिला कर एक मलहम तैय्यार किया जाता है। इस मलहम को फोड़े फुन्सियों पर लगानेसे बड़ा लाभ होता है।

बोस और कीर्तिकरके मतानुसार रसोत आधे ड्राम की मात्रामें पानीके साथमें ज्वर दूर करनेके काममें दी जाती है। इसको दिनमें तीन चार देते हैं। इससे कुछ गरमी मालूम पड़ती है, भूख बढ़ती है, पाचन शक्ति दुरुस्त होती है और दस्त साफ हो जाता है।

सन्याल और घोषके मतानुसार रसोत को अफीम फिटकरी और जलके साथ पीस कर आंखों पर लेप करनेसे आंखों का दुखना बन्द हो जाता है। इसको दूध के साथ मिला कर आंखोंमें टपकानेसे भी आंखें अच्छी हो जाती हैं। प्रादाहिक सूजन पर भी रसोत को अफीम, फिटकरी, सेंधानमक और पानी के साथ पीसकर लेप करने से शान्ति मिलती है।

अतः प्रयोगमें इसकी लकड़ी और इसकी जड़का छिलका, एक उत्तम कटु पौष्टिक और ज्वर निवारक वस्तु है। इसे दूसरे कड़वे और सुगन्धित पदार्थों के साथ में ज्वर उतारने के लिये देते हैं। इसके परिणाम हमेशा ही लाभदायक सिद्ध हुए हैं। पित्त की विशेषता होने पर यह विशेष लाभदायक होता है।

इसकी जड़का छिलका पौष्टिक, पसीना लाने वाला और ज्वर निवारक है। ज्वर दूर करनेके लिये कुनेन और सिनकोना से इसमें कुछ अच्छाइयां भी हैं। कुनेनके अधिक सेवन से रोगी की श्रवण शक्ति कमजोर हो जाती है, वह इससे नहीं होती। कुनेन चढ़े हुए ज्वर में नहीं दी जाती मगर यह चढ़े हुए ज्वरमें भी दिया जा सकता है। यह अत्यधिक रजः स्रावमें भी काममें लिया जाता है और इसके परिणाम सन्तोष जनक होते हैं।

हूक्स बूलरके मतानुसार इसके पत्ते बलूचिस्तान में पीलिया की बीमारीमें काममें लिये जाते हैं।

खूनी बवासीरके ऊपर भी रसोत बाह्य और अन्तः प्रयोग, दोनों कामों में ली जाती है और उससे अच्छा फायदा होता है। बवासीर को दूर करने के लिये रसोत, निम्बोली की मग़ज और मुनक्का के साथ गोली बना कर दी जाती है और उससे अच्छा लाभ होता है। इसके साथ ही रसोत को मक्खन के साथ मिलाकर बवासीर पर लगाई भी जाती है।

तीव्र नेत्राभिष्यंद रोगमें इसको फिटकरी और मक्खन के साथ मिला कर आंखों के ऊपर लेप करते हैं।

शारिरिक श्राव और मल की अधिकता होने पर दारूहल्दी को देने का बहुत रिवाज है। इससे श्लेष्मा और पीव की कमी होती है। त्वचा और त्वचा के अन्दर की रस ग्रन्थि की विनिमय क्रिया दारु हल्दी को देने से सुधरती है। इस कारण उपदंश, गण्डमाला, नासूर, भगन्दर, व्रण, और विसर्प रोगों में इसको खिलाने से और इसका लेप करने से अच्छा लाभ होता है। प्रदर और गर्भाशय की शिथिलतासे होने वाले अत्यार्तव में इसको उपयुक्त अनुपान के साथ देनेसे लाभ होता है।

दारू हल्दी से पेशाव की शुद्धि भी होती है। इसलिये वस्तिशोथ में दारू हल्दी को आंवले के साथ देना चाहिये।

सूजन पर रसोत का लेप करने से सूजन मिट जाती है। कण्ठ माला पर रसोत और कपूर को मक्खनके साथ मिला कर लगाने से फायदा होता है। जखम के ऊपर रसोत का लेप करनेसे जखम जल्दी भर जाता है। नेत्राभिष्यंद में इसका लेप आंखों पर करने से आंखों की सूजन उतर जाती है। मुख रोगोंम दारू हल्दीके क्वाथके कुल्ले करने से लाभ होता है। खूनी ववासीर में पांच रत्ती रसोतको ५ रत्ती नीम के बीजों के साथ मिलाकर, मक्खन में मिलाकर देनेसे और १ ड्राम रसोत को ३ औंस पानीमें मिलाकर उससे ववासीर को धोने से अच्छा लाभ होता है।

साँप और विच्छू के विष को दूर करने के लिये भी इस औषधि की अच्छी तारीफ है। मगर केस और महस्करके मतानुसार इस वनस्पति की जड़, गोंद, शाखाएं, इत्यादि सभी अंग सांप और बिच्छू के विप पर बिलकुल निरुपयोगी हैं।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार दारूहल्दी कड़वी, उष्ण, कटुपौष्टिक, पार्यायिक ज्वर को दूर करनेवाली, पसीना लानेवाली, कफनाशक और चर्म रोगों को दूर करनेवाली है। इससे बनाया जानेवाला रसोत सूजन को दूर करनेवाला, कफनाशक, पार्यायिक ज्वर को दूर करने वाला और ज्वर नाशक होता है। इसका फल जरेशक शीतल, खट्टा और रोचक होता है। छोटी मात्रामें दारू हल्दी कटुपौष्टिक, दीपक और सौम्यग्राही होती है। इसका कटुपौष्टिक धर्म, कलंब की जड़ और कड़ू (Gentiana Kursoa) के समान होता है। बड़ी मात्रा में यह एक जोरदार पसीना लानेवाली और उत्तम ज्वरनाशक औषधि हो जाती है। मात्रा और अधिक होनेसे इससे पेटमें मरोड़ी चलकर दस्त होने लगते हैं। इसका ज्वरनाशक धर्म सिनक्कोना के धर्म के समान है। मगर सिनकोनासे होनेवाली प्रतिक्रियाएं इससे नहीं होतीं।

मलेरिया ज्वर का दूर करनेके लिये यह औषधि कुनैन की अपेक्षा हलके दर्जे की है। जीर्ण ज्वर में बढ़ी हुई तिल्ली को यह कुनेनके समान ही संकुचित करती है। इसमें पाया जानेवाला बरबेराइन नामक पीला तत्व पेशाब और त्वचा के रास्तेसे बाहर निकलता है। पेशाबके मार्ग से बाहर निकलते समय यह पेशाब का रंग पीला कर देता है और मूत्र पिंड की सूजन या दूसरी बीमारियों को मिटा देता है। त्वचाके रास्ते बाहर निकलते समय यह त्वचा की विनिमय क्रिया को सुधार देता है।

चक्रदत्तके मतानुसार इसकी छाल का ताज़ा रस शहदके साथ प्रातःकाल लेनेसे पीलिया की बीमारी में लाभ होता है।

उपयोगः—

ज्वर—दारु हल्दी की जड़ १५ तोला, १ सेर पानी में डालकर उबालें। जब आधा सेर पानी रह जाय तब इसको छानकर १ औंस से २ औंस की मात्रा में देने से ज्वर में लाभ होता है।

बवासीर—रसौत ५ ग्रेन, नीम के फलों की गिरी २ ग्रेन, मुनक्का १० ग्रेन। इन तीनों की तीन गोलियां बना लें। इन गोलियों को सोते वक्त लेने से बवासीर में लाभ होता है।

गठिया—इसकी डालियोंको औटाकर उनका काढ़ा पिलानेसे पसीना और दस्त होकर गठियामें लाभ होता है।

वायुका दर्द—इसकी जड़की छालका गुड़के साथ काढ़ा बनाकर पिलानेसे पेटमें होने वाला वायु का दर्द मिट जाता है।

दस्त—दारुहल्दी की जड़की छाल और सोंठ समान भाग लेकर पीसकर दिनमें २।३ बार लेनेसे दस्त बन्द होजाते हैं।

दांतोंका दर्द—इसके फलका काढ़ा बनाकर उससे कुल्ले करनेसे दांतों और मसूड़ोंका दर्द जाता रहता है। और मसूड़े मजबूत होते हैं।

ज्वर—ज्वरको रोकने और उतारनेमें यह कुनेनके बराबर है। इसकी जड़की लकड़ीके उपयोगसे सूजन वाला बुखार उतर जाता है। हमेशा बने रहने वाले बुखारमें इसका काढ़ा पिलानेसे वह बुखार उतर २ कर आने लगता है। इसका ढाई तोला काढ़ा दो २ तीन २ घंटेके फासलेसे बुखारको बारीके दिन देनेसे बहुत पसीना होकर बुखार छूट जाता है। खराब हवा या जंगली हवासे होने वाले बुखारमें अगर कुनेन और आर्सेनिकके प्रयोगसे भी लाभ नहीं हुआ

हो तो इसका प्रयोग करके देखना चाहिये। तिल्ली और यकृतके बढ़जानेमें भी इसका काढ़ा फायदा पहुँचाता है। इसका काढ़ा बनानेकी विधि प्रयोग नम्बर १ में लिख दी गई है।

पीलिया—इसके काढ़ेमें शहद मिलाकर पिलानेसे पीलियामें लाभ होता है।

अंड वृद्धि—इसके काढ़ेमें गौमूत्र मिलाकर पिलानेसे अंड वृद्धि मिट जाती है।

दारुहल्दी का फल (जरेशक)

वर्णन—

दारुहल्दीके फलको जरेशक कहते हैं। यह फल कुछ लम्बाई लिये हुए गोल होता है। इसका रंग कच्ची हालतमें हरा, पकनेपर लाल और सूखनेपर काली दाखकी तरह काला हो जाता है। यद्यपि यह फल हिमालय पहाड़में भी पैदा होता है, मगर इसकी विशेष आमद ईरान, खुरासान, शीराज, स्याम और इस्पहानसे होती है। ईरानी जरेशक सबसे अच्छा होता है। सुर्ख़ माइल काले रंगका जरेशक सबसे उत्तम माना जाता है और पीलापन लिये हुए लाल रंगका जरेशक घटिया माना जाता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी चिकित्साके अन्दर यह एक प्रसिद्ध और घरेलू औषधि मानी जाती है। यह दूसरे दर्जेमें सर्द और खुश्क है। इसकी जड़की छाल पहले दर्जेमें गरम और खुश्क है। यह पित्तको बिखरे देता है और उसको तकलीफ और तेजीको कम करता है। दिल (हृदय), जिगर और मेदाको ताक़त देता है। बवासीर और श्वेत प्रदरमें इसको दालचीनी और शहदके साथ देनेसे लाभ पहुँचाता है। मासिक धर्मकी अधिकताको भी यह कम करता है। जलोदरमें लाभदायक है। कफसे पैदा होनेवाले बुखार और अतिसारमें भी यह लाभदायक है। जिगर और मेदेकी खराबीसे जो दस्त होते हों उनको भी यह दूर करता है। इसका लेप सूजन की सख्तीको बिखेर देता है।

जरेशक और शहद और चौथाई कागजी नीबूका रस लेकर उसकी शक्करके साथ चाशनी करे। गाढ़ा होजाने पर उतारले। यह दवा हर प्रकारके जहरके उपद्रवों में लाभ पहुँचाती है।

जिसके हृदयमें गर्मी की वजहसे बेचैनी हो उसमें जरेशकको देनेसे बड़ा लाभ होता है। पित्तकी वजहसे होनेवाली दस्तोंको भी यह दूर करता है।

दालचीनी

नाम—

संस्कृत—बहुगंधा, भृङ्ग, विज्जुल, चोल, गुड़त्वचा, दारुसिता, रामवल्लभा, रामेशठा, शकला, सुरभिवल्कला, इत्यादि। हिन्दी—दालचीनी, दारचीनी, कलमी दारचीनी। मराठा—दालचीनी, दारचोनी। गुजराती—तज, दालचीनी। पंजाब—दालचीनी, किरफा। बंगाल—दालचीनी। बंबई—तज। दक्षिण—दालचीनी। फारसी—दालचीनी। तामील-इल्वंगम्। लेटिन—Cinnamomum zyeylanicum (सिनेमोमम भेलेनिकम)।

वर्णन—

यह वनस्पति हिमालय, सीलोन और मलाया प्रायः द्वीपमें पैदा होती है। यह एक मभले कदका हराभरा वृक्ष होता है। इसकी छाल कुछ मोटी, फिसलनी और फीके रंगकी रहती है। इसके पत्ते ७.५से २० सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। ये लंब गोल और बरछी आकारके रहते हैं। इसका फल १.३ से १.७ सेंटीमीटर तक लंबा होता है। यह गहरे बैंगनो रंगका रहता है। दालचीनीके नामसे बाजारों में चार भिन्न २ प्रकारके वृक्षोंकी छाल विकती है।

(१) चीनो दालचीनी—चीनी दालचीनी की छाल चीनसे यहां आती है। इस दालचीनी की जूड़ियां बंधी हुई रहती हैं। जो करीब एक २ रतलकी होती हैं। इसके टुकड़े फीके खाकी रंगके और तेल पूर्ण रहते हैं। इस दालचीनामें से तेल भी निकलता है और औषधिके काममें भी आती है।

(२) तज—इसके पेड़ दक्षिणी और पश्चिमी हिन्दुस्तानमें पैदा होते हैं। इसकी सिर्फ छाल ही औषधि प्रयोगमें काममें आती है। इसमेंसे तेल नहीं निकाला जाता है।

(३) सिहल द्वीपकी दालचीनी—इस नामकी दालचीनी सिंहल द्वीपसे आती है। वहां पर इसके लगाये हुए झाड़ोंकी छंटनीके समय जो कोमल डालियां काटी जाती हैं। उन्हीं की यह अन्तर छाल होती है। यह दालचीनी पतली, लाल और भूरे रंगकी और तीव्र सुगंधित रहती है। इसमेंसे तेलभी निकाला जाता है और औषधि प्रयोगमें भी यह काममें आती है।

(४) तमाल वृक्षकी छाल अथवा तेज पानकी छालको भी दालचीनी कहते हैं।

इन चारों प्रकारकी दालचीनियों में चीनी दालचीनी और सिंहलद्वीपकी दालचीनी उत्तम होती है।

बाजारमें ये दालचीनियां पत्री दालचीनी, लकड़ी दालचीनी और पहाड़ी दालचीनीके नामसे बिकती हैं। पत्री दालचीनी चीनी दालचीनीको कहते हैं। लकड़ी दालचीनी तज और

तमालकी छालको कहते हैं और पहाड़ी दालचीनी जंगली दालचीनीको कहते हैं। सिंहलद्वीपकी दालचीनी हिन्दुस्तानमें नहीं मिलती।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत —आयुर्वेदके मतानुसार इसकी छाल कड़वी, तीक्ष्ण और सुगन्धित रहती है। यह कामोद्दीपक, कृमिनाशक, पौष्टिक और वात, पित्त, प्यास, गलेका सूखना, वायुनलियोंका प्रदाह, अतिसार, खुजली और हृदय तथा गुदाद्वारकी बीमारियोंमें लाभदायक है। इसका तेल रक्तस्राव रोधक, पेटके आफरेको दूर करनेवाला और अरुचि, वमन और दस्तोंके रोगमें भी लाभदायक है।

दालचीनी यह एक मूल्यवान, सुगंधित पदार्थ है। यह पाचक, दीपक, वायुनाशक, स्तम्भक, गर्भाशयके लिये उत्तेजक और रक्तमें श्वेतकणोंकी वृद्धि करनेवाली है। दालचीनीका तेल वेदनानाशक, व्रणशोधक और व्रणरोपक होता है।

दालचीनीको खानेसे आमाशयकी श्लेष्मत्वचाको उत्तेजना मिलती है, जिससे भूख बढ़ती है और अन्न पचता है। उष्णवीर्य होनेकी वजहसे यह पेटके अन्दर वायु पैदा नहीं करती और पूर्वसंचित वायुको निकाल देती है। इस धर्मकी वजहसे दालचीनी आमाशयके रोगोंमें बहुत काममें ली जाती है। पेटका फूलना, मरोड़ी और वमनको रोकनेके लिये दालचीनीका तेल दिया जाता है। आंतोंके रोगोंमें भी यह अच्छा लाभ पहुँचाती है। अतिसार, जीर्ण अतिसार और गृहणी रोगमें इसको देनेसे दस्तोंकी तादाद कम होकर पाचननलिकाकी शक्ति बढ़ती है। आंतोंके रोगोंमें दालचीनीका काढ़ा देनेसे अच्छा लाभ होता है। क्षय और क्षयके जंतुओंसे पैदा होनेवाले रोगोंमें दालचीनीका तेल दिया जाता है। इस तेलके अन्दर जो एक तरहका अम्लपदार्थ होता है उसका प्रभाव इन जंतुओं पर प्रत्यक्ष होता है। दालचीनीके काढ़ेसे रक्तस्राव बन्द होता है। इसलिये फुफ्फुसके द्वारा होनेवाले रक्तस्राव, गर्भाशयके द्वारा होनेवाले रक्तस्राव अथवा और दूसरे रक्त-स्रावोंमें दालचीनीको देनेसे लाभ पहुँचता है। दालचीनीका गर्भाशयको उत्तेजित करनेका धर्म एक महत्वकी वस्तु है। इससे गर्भाशयका संकोचन होता है। इसलिये प्रसूतिकालमें और अत्यार्तवकी वजहसे होनेवाली, गर्भाशयकी शिथिलतामें दालचीनी को देनेसे बड़ा लाभ होता है। ज्वर रोगीकी चेतनाशक्तिको बढ़ानेके लिये कपूरकी तरह दालचीनी भी दी जाती है। मगर इस काममें दालचीनीकी अपेक्षा कपूरका दर्जा बहुत ऊंचा है। कीड़ेसे खाये हुए दांतकी पोलाइमें दालचीनीके तेलके फोयेको रखनेसे उस स्थानकी शुद्धि हो जाती है और दर्द मिट जाता है। राजयक्ष्माके जंतुओंसे पैदा हुए व्रणों पर भी दालचीनी का तेल लगानेसे बड़ा लाभ होता है। (औषधि सं०)

कर्नल चोपरा के मतानुसार दालचीनी का उपयोग औषधियों में बहुत परिमित-रूप में किया जाता है। यह पेट का आफरा उतारनेवाली, अग्निवर्धक और संकोचकगुण वाली होती है। आंतों की तकलीफों में दी जानेवाली औषधियों में इसको भी मिलाया जाता है। दांतोंके दर्द और स्नायु शूल में इसके तेल का बाह्य प्रयोग भी किया जाता है। इसके तेलमें प्रधानतया सीनेमिक एल्डर हाइड नामक पदार्थ पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें फेलंड्रेन, पाइनेन, लाइनेन, केरियोफिलीन और युगेनल भी थोड़ी मात्रामें पाये जाते हैं। इसके पत्तोंसे भी एक प्रकार का काला तेल तैयार किया जाता है। यह इसके छिलकेके तेलसे बिलकुल भिन्न रहता है। इसमें लौंगके समान गंध आती है और युग्नेल की मात्रा इसमें ७० से ८० प्रति सैकड़ा तक पाई जाती है। सिनेमिक एल्डर हाइड, पाइनेन और लीनेलोल भी इसमें कुछ मात्रामें पाये जाते हैं।

इसकी एक दूसरी जाति जिसको संस्कृतमें तेजपत्र और लेटिनमें साइनेमोमम् तमाल, कहते हैं और हिन्दी तथा बंगालीमें इसके पत्तों को तेजपात और छिलके को दालचीनी कहते हैं। यह भी चीन और हिमालय पहाड़ पर ३ हजारसे ७ हजार फीट की ऊंचाई तक होती है। यह असली दालचीनीसे हलकी होती है। इसमें भी साइनेमिक एल्डेहाइड काफी मात्रामें अर्थात् ७० से ८५ प्रतिशत तक पाया जाता है। मगर असली दालचीनीमें पाये जानेवाले साइनेमिक एल्डेहाइडसे इसमें बहुत अन्तर है। असली दालचीनीके तेलमें पाइनेन इत्यादि पदार्थ होनेसे उसकी खुशबू बहुत भली मालूम होती है। मगर इसके तेलमें टरपेन की मात्रा अधिक होनेसे इसकी गंध कुछ अप्रिय हो जाती है।

वुडवर्डके मतसे दालचीनी एक उत्तम अग्निदीपक, पेटके आफरे को उतारनेवाली और शान्तिदायक वस्तु है। यह हृदय को उत्तेजना देनेवाली, आक्षेप निवारक और मंदाग्नि, कब्जियत, पेचिश और ज्वरमें उपयोगी होती है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से दालचीनी दूसरे दर्जे के आखिर में गरम और खुश्क होती है। इसका तेल तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है।

हकीम बुकरात का कहना है कि यह मनुष्य की शक्ति को हमेशा बनाये रखती है। बहुत मुलायम होने की वजहसे यह मनुष्य शरीरमें पहुँचते ही बारीक परमाणुओंके रूप में बिखर कर रक्त में मिल जाती है और अपनी गरमी की वजह से सारे शरीर में समानता पैदा कर देती है। शरीर के सब दोषों को यह खुश्क करके बिखेर देती है और उनमें बदबू पैदा नहीं होने देती है। वायु को बिखेरने में इसकी शक्ति कुलञ्जन और काली मिरचसे कम है। कामशक्ति को बढ़ानेमें और कर्मेन्द्रिय में उत्तेजना पैदा करने में भी यह एक अच्छी

वस्तु है। यह अग्निको दीप्त करती है, काबिज है, खून को साफ करती है, हर एक दोपको समानता पर ला देती है, दिमाग के अन्दर की रतूवत को सुखा देती है, पट्ठों को फायदा पहुँचाती है, और पेशाव तथा मासिक धर्म को जारी करती है।

ववासीर के रोग में भी यह लाभ पहुँचाती है। खांसी, दमा, जलोदर, ज्वर, पागलपन और माली खोलिया में भी यह मुफीद है। कफ की वजह से अगर आवाज वैठ गई हो तो उसे यह खोल देती है। मुंह की वदवू को मिटाती है। सीनेमें जमे हुए चिकने कफ को छांट देती है। वमन को रोकती है। इसके तेल को सिर ललाट और कनपटी पर लगाने से सर्दी का सिर दर्द आराम हो जाता है। इसको आंख पर लगाने से आंख का फड़कना वन्द हो कर आंख की ज्योति वढ़ती है। अण्डकोष में पानी उतर आने की वीमारी में भी यह फायदा पहुँचाती है। यह स्मरण शक्ति को वढ़ाती है। पक्षाघात और मृगी में लाभ दायक है। मस्तगी के साथ इसका काढ़ा देनेसे कफकी हिचकी मिट जाती है। कम्पवात में भी यह लाभ पहुँचाती है। कानके दर्द में मुफीद है। इसको मुंह में चवा कर इसका रस कामेन्द्रिय के अगले हिस्से पर लगाकर स्त्री प्रसंग करने से दोनों को प्रसन्नता होती है। विच्छू के विषपर इसको अञ्जीर के साथ लगाने से फायदा होता है।

दालचीनी गर्भवती स्त्री को अधिक मात्रामें नहीं देना चाहिये। क्योंकि यह गर्भको गिरा देती है। गर्भाशय में भी इसको रखने से गर्भ गिर जाता है। इसका तेल सरदी की सूजन और सरदी की वीमारियों को दूर करता है।

मुजिर—इसकी अधिक मात्रा गरम प्रकृति वालों में सिर दर्द पैदा करती है और गुर्दे तथा मसाने को नुकसान पहुँचाती है।

दर्पनाशक—इसके दर्प को नाश करने के लिये कतीरा, असारून, सफेदचन्दन और खमीरा वनफ्शा मुफीद है।

प्रतिनिधि—इसके प्रतिनिधि कवाव चीनी और कुलञ्जन है।

मात्रा—इसकी मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक है और इसके तेल की मात्रा ५ वूंद तक है।

उपयोग :—

अतिसार—दालचीनी की छाल ४ माशे लेकर उसमें १ तोला कत्था मिलाकर पीस लेना चाहिये। इसमें २५ तोला खौलता हुआ पानी डाल कर ढंक देना चाहिये। दो घण्टे के वाद उसको छान कर दो हिस्से करके पीना चाहिये। इससे दस्त वन्द हो जाते हैं।

नम्बर २—दाल चीनी का चूर्ण ६ रत्ती और कत्था ६ रत्ती इन दोनों को पीस कर लेनेसे दस्त बन्द हो जाते हैं।

मन्दाग्नि और कब्जियत—सोंठ ५ रत्ती, दालचीनी ५ रत्ती, और इलायची ५ रत्ती। इन तीनों को पीस कर भोजनके पहिले लेने से भूख बढ़ती है और कब्जियत मिटती है।

इनफ्लूएन्जा—दालचीनी ३॥। माशे, लौंग ५ रत्ती, सोंठ १५ रत्ती। इन तीनों का एक सेर पानीमें काढ़ा बना लेना चाहिये। जब पाव भर पानी रह जाय तब उतार कर छान लेना चाहिये। इस काढ़े को दिन में तीन बार ५ तोले की मात्रामें देनेसे इनफ्ल्यूएंजा में बड़ा लाभ होता है।

खांसी—दालचीनी ३॥। माशे, सौंफ २ माशे, मुलेठी २ माशे, बीज निकाले हुए मुनक्का दाख ४ माशे, मीठी बादाम की मगज १ तोला, कड़वी बादाम की मगज ४ माशे, शक्कर ४ माशे। इन सब चीजों को पीस कर तीन तीन रत्ती की गोलियां बना लेना चाहिये। इन गोलियों को दिन भर मुंह में चूसते रहने से खांसी में काफी फायदा होता है।

सिर दर्द—दालचीनी के तेल को ललाट पर मलने से सरदी की वजह से पैदा हुआ सिर दर्द मिट जाता है।

दन्त रोग—इसके तेल में फाया तर करके दांत की पोल में दबा देने से दन्त शूल मिट जाता है।

आन्तों का खिंचाव—दालचीनी का तेल पेट पर मलने से आन्तों का खिंचाव मिट जाता है।

कान का बहिरापन—दालचीनी का तेल कानमें टपकाने से कानके बहरेपन में लाभ होता है।

दालचीनी जंगली

वर्णनः—

हिन्दी—जंगली दालचीनी। बंबई—तीखी। मराठी—रंढा दालचीनी, रंदलचीनी। तेलगू—पचाकू। तामील—कटुकसकपलई। लेटिन—Cinnamomum Iners (सिनेमोमम इनर्स)।

वर्णन—

यह वनस्पति मलाया प्रायःद्वीप, सुमात्रा, बरमा और बंगालके पूर्वी हिस्सेमें पैदा होती है। इसके पौधे का आकार, प्रकार, स्वाद और सुगन्ध दालचीनी की तरह ही होती है।

गुणदोष और प्रभाव —

इसके बीजों को पीसकर शहदमें मिलाकर चटानेसे बच्चोंके दस्त बन्द हो जाते हैं। बच्चों की खांसी को दूर करनेके लिये इसके बीजों के काढ़ेमें शहद मिलाकर देते हैं। बुखार को दूर करनेवाली दूसरी दवाइयोंके साथ इसके बीजों को काढ़ा करके पिलाने से बुखार छूट जाता है।

दालमी

नाम—

संस्कृत—अपियद्रुम, भूरिफल, धूसर, नीलीशिला, पांडुफली, पाताली, बृहत्बीजक। हिन्दी—दालमी, पटाला, दल्ये। गुजराती—शीणवी। बंबई—कांटेपुवण, पांढरफली। गोआ—परपो। तामील—वेलाइपुल्ला, इरुवुलाई, वरपुल्लू। तेलगू—तेलपुरुगुडु, तेलपुलि। लेटिन—Flueggia Microcarpa (फ्ल्यूगिया मायक्रोकार्पा)।

वर्णन—

यह एक झाड़ीनुमा पौधा होता है। इसकी छाल भूरी, पत्ते पतले और २.५ से ७.५ सेन्टिमीटर तक लंबे और १.६ से ४.५ सेन्टिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसमें नर और नारी दोनों तरहके फूल लगते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्षमें और मलाया प्रायःद्वीप में पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे यह वनस्पति मीठी, ठंडी और पौष्टिक होती है। मूत्रकृच्छ्र, पित्तप्रकोप और रक्त विकारमें यह लाभदायक है।

इसके पत्तों का रस अथवा इसके पत्तों को तम्बाकूके साथ मिलाकर एक लेप तैयार किया जाता है जो घावों के कृमियों को नष्ट करनेके काममें लिया जाता है। इसका पौधा सुजाक को नष्ट करनेवाला माना जाता है। इसके पत्तों का रस कुचलेके विष को नष्ट करता है।

दिबोरिया

नाम :—

उड़िया—दिबोरिया। नेपाल—पोएनी। तेलगू—नेलगोदू। लेटिन—Vitis Repens (विटिस रेपेन्स)।

वर्णन—

यह एक पराश्रयी लता है जो पूर्वी हिमालय आसाम, चिटगांव और दक्षिणके कुछ हिस्सों में पैदा होती है। इसके पत्ते झिल्लीदार और फीके हरे रंगके होते हैं। इसकी शाखाएं कांनेदार, फूल गोल और चार पंखडियां वाले और फल लंवगोल होता है। हर एक फलमें एक बीज होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति सांघातिक फोड़ों अर्थात विद्रधिके ऊपर लेप करनेसे वहुत फायदा पहुँचाती है। गर्भ सम्बन्धी फोड़ों (Foetid ulcerations) को भी यह जल्दी मिटा देती है।

दिवाकंद

नाम—

बम्बई—दिवा, दिवाकंद। दक्षिण—बड़ाकंद। तेलगू—चांदा, कांदा। संथाल—धाइ। अंग्रेजी—Indian Arrowroot (अरारुट)। लेटिन—Tacca pinnatifida (टेक्का पिनेटिफिडा)।

वर्णन—

यह वनस्पति बंगाल, सेंट्रल इंडिया और सीलोनमें पैदा होती हैं। इससे अरारोटकी तरह एक पदार्थ तैयार किया जाता है। जिसको इंडियन अरारोट कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका कंद कच्ची हालतमें बहु कड़वा रहता है। इससे तैयार किया हुआ अरारोट अतिसारके अन्दर एक उत्तम पथ्य है।

दीपड़ वेल

नाम—

गुजराती—दीपड़वेल। कच्छी—फोतियार। लेटिन—Ipomoea Dasysperma (इयोमोइया डेसिसपरमा)।

वर्णन—

यह एक वेल होती है जो वर्षा ऋतुमें पैदा होती है। इसकी वेल बहुत लंबी होती है। इसके फूल पीले रंगके और फल गोल और नोकदार होते हैं। हर एक फलमें चार २ बीज रहते हैं। यह वनस्पति रुहेल खंड, कच्छ और दक्षिणमें पैदा होती है। इस वेलके पत्ते और फूल बहुत सुन्दर होते हैं इसलिये यह बाग बगीचों में बोने लायक होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह सूजनको नष्ट करने वाली और रेचक होती है। इसकी जड़ों और पत्तोंको पीसकर नारुके ऊपर बांधते हैं। इसके बीज रेचक और पागल कुत्तेके विषको नष्ट करने वाले होते हैं।

दीर्घपत्रक

नाम

संस्कृत—अभ्रपुष्पा, दीर्घपत्रका, दीर्घवल्लि, गंधपुष्पा, इत्यादि। हिन्दी—दीर्घपत्रा। तामील—आरिनि, पीरअंबु। तेलगू—वेथमा। लेटिन—Calamus Rotung. (केलेमस रोटंग)।

वर्णन—

यह वनस्पति मध्यप्रदेश, दक्षिण और करनाटकमें पैदा होती है। इसका तना बहुत नाजुक रहता है। उसके ऊपर हलके कांटे रहते हैं। इसके पत्ते ४५ से लेकर ६० सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके नर और मादा दोनों तरहके फूल लगते हैं। इसका फल फीके, पीलेरंगका और बहुत पतले छिलकेवाला रहता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मतसे यह वनस्पति तीक्ष्ण, कड़वी, सुगन्धित, कसैली,

शीतल और विषनाशक होती है। कफ और वातमें यह लाभदायक है। पित्तकी जलन, बवासीर, पथरी, श्लीपद, पेचिश, प्यास, व्रण, कोढ़, रक्तरोग और मूत्रसम्बन्धी विकारोंमें यह लाभदायक है। गर्भाशय और योनिद्वारके विकारोंमें भी यह उपयोगी समझी जाती है। इसकी जड़ जीर्णज्वरमें दी जाती है। इसके पत्ते खून और पित्तकी बीमारियोंमें उपयोगी और मृदुविरेचक होते हैं। इसके बीज कफ रोग और रक्तरोगमें लाभदायक होते हैं।

अनाममें इसकी लकड़ी कृमिनाशक वस्तुकी तरह उपयोगमें ली जाती है।

कम्बोडियामें इसकी जड़ें पेचिश और पित्तको नाश करनेवाली, पौष्टिक, ज्वरनिवारक और विरेचक मानी जाती है।

कर्नलचोपराके मतानुसार इसकी जड़ सांपके काटने पर उपयोगी मानी जाती है।

दुकू (दुको)

नाम—

हिन्दी—दुकू। फारसी—दूकां। बम्बई—बाफली। लेटिन—Peucedanum Grande (पीसेडेनम ग्रेंडी)।

वर्णन—

यह सोयाकी जातिका एक पौधा है। इसके पत्ते और फूल सोयेके पत्ते और फूलोंकी तरह ही होते हैं। इसकी जड़ गाजरकी तरह मोटी होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति पेटका आफरा दूर करनेवाली, उत्तेजक, मूत्रल और पौष्टिक होती है।

यूनानीमत—यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है। यह सूजनको उतारती है। विषके प्रभावको नष्ट करती है। गुर्दे, मेदे और कामेन्द्रियको शक्ति देती है। कफ और वायुको नष्ट करती है। गुर्दे और मसानेकी पथरीको तोड़ देती है। मासिकधर्म, पेशाव और पसीनेको बढ़ाती है। गर्भाशयको साफ करती है। इसके प्रयोगसे बच्चा जल्दी पैदा हो जाता है अर्धाङ्ग वायु,गठिया और जोड़ोंके दर्दमें यह मुफीद है। इसको ३ माशाकी मात्रामें तरमीजके साथ मिलाकर लेनेसे पेटमें होनेवाले कद्दूदाने नामक कृमि मर जाते हैं। सीनेके अन्दर चिपके हुए खराब कफको यह निकाल देती है। जिससे खांसीमें लाभ होता है। इसके सेवन से पाचनशक्ति बढ़ती है, वीर्य गाढ़ा होता है और मसानेमें गर्मी पैदा होती है। बच्चोंकी पेचिश

और मरोड़ीमें भी यह लाभदायक है। वायुसे पैदाहुए जलोदरमें भी इसके सेवनसे लाभ पहुँचता है। विच्छूके विष पर इसका काढ़ा शहदके साथ पिलानेसे और इसको चबा कर डंकपर लगानेसे शान्ति मिलती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन जिगर और मसानेको नुकसान पहुँचाता है। तथा गरम प्रकृतिवालोंकी कामशक्तिको कमजोर करता है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नष्ट करनेके लिये बंसलोचन, मस्तगी और कतीरा मुफीद है।

प्रतिनिधि—गाजरके बीज, अजमोद, अजवायन, सोंफ और सोया है।

मात्रा—इसकी मात्रा ३ माशेकी है।

कर्नलचोपराके मतानुसार यह वनस्पति पेटका आफरा दूर करनेवाली, उत्तेजक और मूत्रल होती है। इसमें उड़नशील तेल पाया जाता है।

दुजियान

नाम :—

यूनानी—दुजियान।

वर्णन—

यह एक बड़े वृक्ष का फल होता है जो बंगाल और चीनमें पैदा होता है। इसके वृक्ष का पत्ता कटहलके पत्तों की तरह बड़ा होता है। इसका फल बड़ा, मोटा, लंबा, खरबूजे को तरह और आकार में ताड़के फलके बराबर होता है।

इसके अन्दर कटहल के दानोंके समान दाने होते हैं और हर दाने पर एक तेज कांटा लगा हुआ होता है। इसकी गंध बहुत खराब होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका फल गरम, तर और हड्डी, बदन तथा कामशक्ति को ताकत देनेवाला होता है। यह पचनेमें बहुत कठिन होता है।

दूध

नाम—

संस्कृत—दुग्ध, क्षीर, पय, स्तन्य, पीयूष, बालजीवन, अमृत इत्यादि। हिन्दी—दूध। बंगाल—दूध। मराठी—दूध। गुजराती—दूध। करनाटकी—हालु। तेलगू—पालु। फारसी—शीरे। अरबी—लबनुल। अंग्रेजी—मिल्क (Milk)। लेटिन—Lactus (लेक्टस)।

वर्णन—

दूध भारतवर्षके अन्दर प्रत्येक व्यक्तिके लिये अमृत तुल्य पेय पदार्थ है। इसका परिचय देना सूर्य को दीपक दिखाना है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदमें दूधके गुणों का वर्णन करते हुए लिखा है—

श्लोक—दुग्धं सुमधुरं स्निग्धं, वातपित्तहरं सरम्।
सद्यःशुक्रकरं शीतं सात्म्यं सर्व शरीरिणाम्॥
जीवनं बृंहणं बल्यं मेध्यं वाजीकरं परम।
वयःस्थापनमायुष्यं सन्धिकारि रसायनम्॥
विरेकवान्तिवस्तीनांतुल्यमोजो विवर्द्धनम्।
जीर्णज्वरे मनोरोगे शोषमूर्च्छाभ्रमेषुच॥
ग्रहण्यां पांडुरोगे च दाहे तृषिहृदामये।
शूलोदावर्त्तगुल्मेषु वस्ति रोगगुदांकुरे॥
रक्तपित्तातिसारे च योनिरोगश्रमक्लमे।
गर्भस्रावेच सततं हितं मुनिवरैः स्मृतम्॥
बालवृद्धक्षतक्षीणाः क्षुदव्यवाय कृशाश्च ये।
तेभ्यःसदाऽतिशयितं हितमेतदुदाहृतम्॥
विदाहीन्यन्नपानानि यानिभुंक्तेहिमानवः।
तद्विदाह प्रशान्त्यर्थं भोजनान्ते पयः पिबेत्॥ (भा० प्र०)

अर्थात्—दूध मधुर, स्निग्ध, वात पित्तनाशक, मृदुविरेचक, तत्काल वीर्य जनक, शीतल, सब प्राणियों की आत्मा, जीवन, बृहण, बलकारक, बुद्धिवर्धक, वाजिकरण, अवस्थास्थापक और रसायन है। ओजके बढ़ानेमें विरेचन, वमन और वस्तिके समान गुण करता है। तथा जीर्ण ज्वर, मानसिक रोग, क्षय, मूर्च्छा, भ्रम, संग्रहणी, पाण्डुरोग, दाह, तृषा, हृदयरोग, शूल,

उदावर्त, गुल्म, गुदांकुर, रक्तपित्त, अतिसार, योनिरोग, श्रम और गर्भश्राव में निरंतर हितकारी है। जो बालक, वृद्ध, क्षतक्षीण, भूखे और मैथुन करनेसे क्षीण होगये हैं उनको दूध बहुत लाभदायक है। गरम तथा दाहजनक, अन्न और पेयों का सेवन करनेवाले मनुष्यों को दाह की शान्तिके लिये भोजनके उपरान्त दूध अवश्य पीना चाहिये।

दूध स्वादु, मधुर, स्निग्ध, ओजकारक, धातुवर्धक, वातपित्त नाशक, कफ कारक, शीतल और भारी है। यह जीर्ण ज्वर और कफके क्षीण होनेकी बीमारियों में अमृतके समान गुण कारी है। मगर तरुण ज्वरमें इसको पीना विषके समान हानिकारक है।

गायका दूध—गायका दूध रस और पाकमें मधुर, शीतल, स्तनों में दूध उत्पन्न करने वाला, वात और पित्तको नष्ट करने वाला, भारी, हमेशा सेवन करने वाले मनुष्यों को बुढ़ापेसे बचाने वाला और सब रोगोंको शांत करने वाला है।

काली गायका दूध—वात नाशक और अधिक गुणकारी है। पीली गायका दूध पित्त नाशक और वात नाशक होता है। सफेद गायका दूध कफ कारक और भारी होता है। लाल और चितकबरी गायका दूध वात नाशक होता है।

तरुणी गायका दूध—मधुर, रसायन और त्रिदोष नाशक होता है। वृद्ध गायका दूध दुर्बलता जनक होता है। जिस गायको गर्भवती हुए तीन महिने बीत गये हों उसका दूध पित्त कारक, खारा, मधुर, और शोषकारक होता है। जिस गायने पहिली बार बच्चा दिया हो उसका दूध सारहीन और गुणोंसे रहित होता है। नवीन ब्याई हुई गायका दूध रूखा, दाह कारक, रक्तको कुपित करने वाला और पित्त कारक होता है। जिस गायको बच्चा दिये बहुत दिन बीत गये हों, उसका दूध मधुर और नमकीन होता है। यह त्रिदोष नाशक, तृप्ति कारक और बल वर्धक होता है। जिन गायों का बछड़ा मरगया हो अथवा छोटा बछड़ा हो उसका दूध दोष कारक होता है।

गायका दूध प्रातः कालमें भारी, कब्जियत करने वाला और दुष्पच्य होता है। अतएव सूर्यके उदय होनेपर दो घंटेके पश्चात् उसको पीनेसे वह पथ्य, दीपन और हलका होता है।

भैंसका दूध—भैंसका दूध बलकारक, वर्णको सुन्दर करने वाला, निद्राकारक, शुक्र जनक, कफकारक, तीक्ष्ण, अग्निको शान्त करने वाला, रस और पाकमें मधुर, पौष्टिक और थकावटको दूर करने वाला है। यह वृद्ध, युवक और स्त्रियोंके अन्दर काम शक्तिको जाग्रत करता है।

बकरीका दूध—बकरीका दूध कसेला, मधुर, शीतल, मलरोधक, हल्का तथा पित्त, क्षय, खाँसी ज्वर और रक्तातिसारमें हितकारी और त्रिदोष नाशक होता है।

बकरियों की देह छोटी होती है। यह कड़वी तथा चरपरी वनस्पतियों को चरती फिरती है । जल वे बहुत कम पीती हैं और दिनभर जंगल में विचरण करती है। इसीसे बकरियों का दूध सर्व दोष नाशक, दीपन, हल्का, मलरोधक तथा श्वास, खांसी और रक्त-पित्त को दूर करता है।

भेंड़ का दूध—भेड का दूध मधुर, रूखा, गरम और सिर्फ वात रोग वालों को हित-कारी है। रक्तपित्त और हृदय रोग में यह हानिकारक है।

स्त्रीका दूध—स्त्री का दूध मधुर, शीतल, हलका नेत्रों को हितकारी, कसेला, पथ्य, दीपन, पाचक, धातु वर्धक, रुचिकारक तथा जीवन और स्नेह युक्त होता है। रक्त पित्तमें इसको नाकमें टपकाने से और आंख की फूली पर इसको आंखमें आंजने से लाभ होता है।

गायका धारोष्ण दूध वलकारी, हल्का, शीतल, अमृतके समान दीपन और त्रिदोष नाशक होता है। जिस गायके दूध की धार शीतल हो गई हो वह त्यागनेके योग्य है। गायका धारोष्ण दूध उत्तम होता है। भैंस का धारा शीत दूध उत्तम होता है। भेड़ का गरमा-गरम दूध हित जनक होता है और बकरी का औटाकर शीतल किया हुआ दूध हितकारी होता है।

दिनके पूर्वार्ध में पिया हुआ दूध वीर्य वढ़ाने वाला, पौष्टिक और अग्निदीपक होता है। दिनके उत्तरार्ध में पिया हुआ दूध वल कारक, कफ नाशक, पित्त हारक, अग्नि प्रदीपक, क्षय रोगको दूर करने वाला और वृद्ध मनुष्यों में यौवन का संचार करने वाला होता है। रात्रि के समय पिया हुआ दूध अनेक दोषों की शान्ति करने वाला और उत्तम पथ्य है।

जीर्ण ज्वर, कफ और निर्बलतामें दूध अमृत के समान है। नवीन ज्वरमें यह विष के समान है। दूध में चौथाई भाग पानी मिलाकर उसको औटाना चाहिये। जव उसका पानीका हिस्सा जल जाय तव उसको सेवन करना चाहिये। यह दूध श्रेष्ठ सर्व रोग नाशक, वल वर्धक, पौष्टिक, वीर्य कारक और बहुत उत्तम होता है। जिन लोगों को दूध नहीं पचता हो और दूधके पीनेसे अफारा हो जाता हो, उनको दूधमें आधा पानी मिला कर उसमें थोड़ी सोंठ और थोड़ी पीपर डालकर औटाना चाहिये। जव पानी का भाग जल जाय तव उसको उतार कर खूब उलट पुलट करके पीना चाहिये।

ऐसा दूध बहुत आसानी से पच जाता है।

त्याज्य दूध—जो दूध बुरे रंग का, बुरे स्वाद वाला, खट्टा, दुर्गन्धित और गांठदार हो उसको नहीं पीना चाहिये। खटाई और नमक के पदार्थों के साथ कभी दूध का सेवन नहीं करना चाहिये। तीन मुहुर्त तक रक्खा हुआ दूध विकार को प्राप्त हो जाता है। छ मुहुर्त तक

रक्खा हुआ दूध अनेक दोषों उत्पन्न करता है और दस मुहुर्त तक रक्खा हुआ दूध विषके समान हो जाता है।

ताम्बे के वर्तनमें दुहा हुआ दूध वादी को दूर करता है। सोने और चांदी के वर्तन में दुहा हुआ दूध कफ को नाश करता है। कांसी के वर्तनमें दुहा हुआ दूध रक्तपित्त को मिटाता है। लोहे के वर्तनमें दुहा हुआ दूध त्रिदोष नाशक होता है। और मिट्टी के वरतनमें दुहा हुआ दूध कामशक्ति वर्धक, धातु को वढ़ाने वाला और वायु तथा कफ को दूर करने वाला होता है।

यूनानी मत—

यूनानी मत में स्त्रियों के दूध के वाद गाय का दूध ही सवसे उत्तम माना गया है। जिस दूध में जाड़ापन होता है वह दूध देर से हजम होता है। वच्चा जव तक ४० दिन का न हो जाय तव तक उस जानवर का दूध हानिकारक माना जाता है।

दूध उग्र औषधियों और विषोंके दर्प को नष्ट करने के लिये एक उत्तम पदार्थ है। कुचला, अजवायन खुरासानी, कुटकी, इत्यादि उग्र औषधियों के दर्प को यह नष्ट कर देता है। वृद्धों के लिये विशेष लाभ दायक है। जिन लोगों के आन्तों और मेदे में दोष सञ्चित रहते हैं उनको दूध पीने से दस्त आने लगते हैं और जव दोष निकल जाते हैं तव यह कब्ज करने लग जाता है। इसलिये यह दस्तावर और काविज दोनों है। आन्तों के जखममें यह उत्तम पथ्य है। इससे जखम साफ होते हैं। खुश्की की वजह से अगर स्मरणशक्ति कम हो गई हो तो उसमें दूध एक उपयोगी वस्तु है। वहम, उदासी, और देहशत में भी यह लाभ दायक है। स्त्री प्रसंग से होने वाली कमजोरी को मिटाने के लिये दूध के समान लाभ दायक वस्तु दुनियां में दूसरी नहीं है। क्षयरोग के अन्दर भी यह लाभ दायक वस्तु है।

दूध से होने वाली हानियां—यूनानी मत से हर एक प्रकार का दूध पेटमें जाकर यकृत के अन्दर सुद्दे पैदा करता है। जिन के शरीर से रक्त वहुत निकल गया हो उनके लिये भी यह हानिकारक है। क्योंकि ऐसे लोगों की प्राण वायु कमजोर हो जाती है और हाजमा विगड़नेसे उन्हें दस्त आने लगते हैं। जो लोग परिश्रम ज्यादा करते हैं या जिनकी प्रकृति गर्म होती है उनके मेदेमें यह खरावी पैदा करता है। इसके अधिक सेवन से श्वेत कुष्ट और शरीर पर काले चक्कते होने का डर रहता है। जिनके पेटके अन्दर या वाहर कफ की सूजन हो उन्हें भी यह नुकसान पहुँचाता है। सन्धियों को भी यह हानि पहुँचाता है। दांतों को कमजोर कर देता है। गाढ़ा दूध उदरशूल और पथरी को पैदा करता है।

खटाई, नमकीन चीज, इमली, नीवू, तिलका तेल, कुल्थी, मछली, राई, प्याज, दही, छाछ

गन्नेकी जड़, मूंगकी जड़ और तरबूजके साथ दूधका सेवन कभी नहीं करना चाहिये क्योंकि ये इसके विरोधी द्रव्य हैं।

अतिसार, प्रवाहिका, कफ पित्तको अधिकता, फोड़े फुंसी, कोढ़, भगन्दर, सुजाक, शर्करा प्रमेह और कृमिरोगमें दूध पीना बहुत हानि कारक है।

दूध और आधुनिक विज्ञान—

सारे भूमंडलके बड़ेसे बड़े रसायन शास्त्रियों का यह मत है कि इस सृष्टिमें मनुष्य जाति के खानेके लिये जो उत्तमसे उत्तम खाद्य पदार्थ हैं उनमें दूध सर्वोत्तम है। क्योंकि दूधके अन्दर शरीरको पोषण करने वाले सब प्रकारके तत्व ऐसी स्थितिमें संचित रहते हैं कि जिन लोगोंको दूसरे कोई भी खाद्य पदार्थ नहीं पचते उनको भी दूध आसानीसे पच जाता है। इसीलिये प्रकृतिने तुरन्त पैदा हुए बच्चोंके लिये भी दूधकी खुराककी व्यवस्थाकी है। इसी प्रकार किसी भी बीमारीसे कमजोर हुए मनुष्यके लिये भी, जिसको दूसरा कोई खाद्य नहीं पचता हो, दूध एक उत्तम सुपथ्य है। उसके जीवन को टिका रखनके लिये दूध बहुत उपयोगी होता है क्योंकि इसमें मनुष्य शरीरका पोषण करने वाले विटामिन ए. बी. डी., प्रोटीन, फास्फोरस, केलशियम, लोहा, कारबोहाइड्रेड, चर्बी इत्यादि सभी पदार्थ कॉफी तादादमें पाये जाते हैं।
पौने दो छटाक दूधमें पाये जाने वाले पदार्थोंकी तादाद—

(१)	व्हिटामिन	A—१८० युनिट
(२)	व्हिटामिन	B कॉफीतादाद
(३)	व्हिटामिन	D—कॉफीतादाद
(४)	केलशियम—	०१·२ ग्राम
(५)	फास्फोरस—	·०६ ग्राम
(६)	प्रोटीन—	८५ प्रतिशत

इस प्रकार और भी मनुष्य शरीर को पोषण करनेवाले सब तत्व इसमें काफी मात्रा में रहते हैं।

दूध को विशेष पौष्टिक और लाभदायक बनाने की विधि—

यद्यपि दूध स्वभावतया ही शरीर को पोषण करनेके लिये एक उत्तम वस्तु है फिर भी उसके गुणों को और भी अधिक बढ़ानेके लिये आर्य वैद्यक शास्त्रमें अनेक प्रयोग बतलाये गये हैं। प्रकृति का यह एक साधारण नियम है कि हर एक जातिके दूध देनेवाले प्राणी जिस तरह की खुराक खाते हैं उसी प्रकारके गुण उनके दूधमें आ जाते हैं। इसलिये भिन्न २ फायदोंके लिये जानवरों को भिन्न २ प्रकार की खुराक खिलाकर उनके दूधमें भिन्न २ प्रकार की तासीर

पैदा की जा सकती है। जिस गाय को सिर्फ घास खिलाया जाता है उस गाय की अपेक्षा बिनौले खानेवाली गाय का दूध अधिक पौष्टिक होना स्वाभाविक है। बिनौले की अपेक्षा भी उड़द की दाल या उड़द के पत्तों को खानेवाली गाय का दूध अधिक धातु पौष्टिक और अधिक कामोत्तेजक होता है। जिस गाय को विदारी कन्द या भुई कोल्हे का चूर्ण खिलाया जाता है उसका दूध बल, पराक्रम, कांति और कामोद्दीपन की शक्ति को दिन प्रतिदिन बढ़ाता जाता है।

दूध को विशेष गुणकारी बनाने के लिये चरकमें एक और युक्ति लिखी है कि सवा सौ गायों को प्रतिदिन उड़दके पत्ते या विदारीकन्द खिलाना चाहिये। इन सवा सौ गायों का जो दूध निकले वह २५ गायों को पिला देना चाहिये और उन २५ गायों का दूध फिर ५ गायों को पिला देना चाहिये और उन ५ गायों का दूध १ गाय को पिलाना चाहिये। उस १ गाय का दूध धातुक्षयके रोगी को पिलाना चाहिये। जिससे उसके शरीरमें एकदम नया बल, नया चैतन्य, नया जीवन और नया वीर्य पैदा होकर थोड़े ही समयमें उसका शरीर कांति और शक्ति का भंडार हो जाता है। कहा जाता है कि भगवान बुद्ध जब उग्र तपस्या करके अत्यन्त क्षीण शरीर हो गये थे। उस समय इसी प्रकारके दूधमें तैयार की हुई खीर मिल जानेसे उनमें एकदम नवीन बल और नवीन शक्ति का संचार हो गया था।

पारद या पारा भी मनुष्य शरीरके लिये एक अत्यन्त, दिव्य और लाभदायक वस्तु है, यदि उसका विधिपूर्वक सेवन किया जाय। मगर यदि इसकी विधिमें किसी प्रकार की भूल हो जाती है तो यह विषके तुल्य हो जाता है।

पारदको संस्कारित करने, उससे चंद्रोदयके समान अनेक प्रकारके रस बनाने और उनका सेवन करनेकी विधि अनेक स्थानों पर वर्णित है। मगर ये सब विधियाँ बहुत कठिन और अधिकारी मनुष्योंके द्वारा ही सफल हो सकती है। सर्वसाधारण इनको तैयार नहीं कर सकते इसलिये कोइ ऐसा उपाय जिसको सर्वसाधारण उपयोगमें ले सके और पारेका लाभ उठा सके तो वह बहुत लाभप्रद हो सकता है। जंगलनी जड़ी बूटी नामक ग्रन्थमें एक महात्माके द्वारा बतलाई हुई एक विधि प्रकाशित की गई है। वह इस प्रकार है—

अच्छी ऊँची जातिका सिंगरफ तीन तोला लेकर उसको खट्टे नीबूके रसमें घोटना चाहिये जब रसका भाग सूख जाय तब उसे फिरसे दुबारा तीन घंटे तक खट्टे नीबूके रसमें और घोटकर सुखाना चाहिये। इसप्रकार सातबार उसको खट्टे नीबूके रसमें और सातबार भेड़के दूधमें घोट २ कर सुखा लेना चाहिये और उस सब हींगलूकी ३० पुड़िया बराबर करके बाँध लेना चाहिये। फिर प्रतिदिन १ सेर उढ़दकी दालको पानीमें गलाकर उसमें १ पुड़िया हींगलू मिलाकर एक स्वस्थ और दूध देनेवाली बकरीको खिला देना चाहिये और फिर बकरी को जङ्गलमें चरनेके लिये छोड़ देना चाहिये। इसप्रकार तीस दिन तक वे तीसों पुड़िया

उसको खिला देना चाहिए और शुरूके ८ दिनोंमें उसका दूध दुहकर फेंक देना चाहिये। नौवें दिनसे उस बकरीका दूध पीनेके काममें लेना चाहिए या उस दूधमें १ तोला कौंचके बीजोंका चूर्ण डालकर उसकी खीर बनाकर खाना चाहिये। खीर हजम होनेके पश्चात् रोटी, भात घी और दूधका भोजन करना चाहिए। बाकीकी सब चीजें नमक, मिर्ची, खटाई, मसाले, वगैरह सब छोड़ देना चाहिए। बकरीको सिंगरफ खिलानेका प्रयोग पूरा होनेके बाद ८ दिन तक और उस दूधका सेवन करना चाहिये। इसप्रकार एक महीने तक इस दूधका सेवन कर लेनेके पश्चात् और १ महीने तक पथ्यका पूरा पालन करना चाहिए।

जङ्गलनी जड़ीबूटीके लेखक लिखते हैं कि इसप्रकार १ महीने तक उपरोक्त दूधका सेवन करने पर चाहे जैसी नपुंसकतामें पड़ा हुआ मनुष्य भी अनेक स्त्रियोंके साथ रमण करने योग्य कामशक्तिको प्राप्तकर सकता है और उसमें बल, बुद्धि तेज और कांतिकी बेहद वृद्धि होती है। क्योंकि बकरीको खिलाये हुए सिंगरफमें जो पारा होता है उसका सत उस दूध में आ जाता है। जिससे पारद सेवनके जो अपूर्व गुण हैं वे उस दूधके सेवनसे प्राप्त हो जाते हैं और पारा विधिवत बना है या नहीं, इत्यादि झंझटोंमें पड़नेकी जरूरत भी नहीं रहती क्योंकि बकरीकी जठराग्निके योगसे उसमें ऐसी क्रियाएँ हो जाती हैं कि फिर उसमें नुकसान का धोखाही नहीं रहता।

इसीप्रकार भिन्न २ रोगोंको दूर करनेके लिये उन रोगोंको दूर करनेवाली औषधियां दुधारू जानवरोंको खिलाई जाय तो उन जानवरोंके दूधको पीनेसे वे सब रोग दूर हो सकते हैं। जैसे अगर बकरीको आकड़ा खिलाया जाय तो उसके दूधमें दमेको नष्ट करनेकी ताक़त पैदा हो जाती है। इसीप्रकार अगर उसको दोड़ी या तिक्तजीवन्ती खिलाई जाय तो उसके दूधमें क्षय रोग नाशक गुण पैदा हो जाते हैं।

उपयोग—

पारेके उपद्रव—दूधमें अरण्डीका तेल मिलाकर पीनेसे पारे और हींगलूके उपद्रव मिटते हैं।

नकसीर—दूधमें शक्कर मिलाकर या घी मिलाकर नाकमें टपकानेसे नकसीर बन्द होता है।

हिचकी—स्त्रीके दूधमें मक्खीकी विष्टा मिलाकर नस्य देनेसे हिचकी बन्द होती है।

नंबर २—स्त्रीके दूधमें चन्दन मिलाकर नस्य देनेसे हिचकी मिटती है।

नेत्ररोग—स्त्रीके दूधको नेत्रोंमें टपकानेसे नेत्ररोग मिटते हैं।

प्रदर—बकरीके दूधमें मोचरस मिलाकर पीने से प्रदर मिटता है।

नंबर २—दूधमें शक्कर मिलाकर भोजनके साथ खानेसे रक्तप्रदर मिटता है।

वनावटें:—

धातुवर्धक सुधा—असगंध आधपाव, शतावरी पावभर, सफेद मूसली १॥ पाव, तालमखाना आधासेर, मखाने २॥ पाव, सेमरकी मूसली ३ पाव और मिश्री १ सेर। इन सब दवाओंको कूट, पीस, छानकर रख देना चाहिये। सवेरे शाम गेहूँके आधसेर आटेकी रोटी बनाकर उसका चूरमा कर लेना चाहिये। उस चूरमेंमें आदपाव शक्कर और तीन तोले उपरोक्त औषधियोंका चूर्ण अच्छी तरहसे मिलाकर गायको खिला देना चाहिए। जब गायको इसीतरह खाते २ दस दिन हो जाय तब उस गायका धारोष्ण दूध सवेरे शाम मिश्री मिलाकर पीना चाहिए। ४० दिन तक इस दूधका सेवन करनेसे शरीरमें बल, पौरुष और कामशक्ति बहुत बढ़ती है।

चिकित्सा चन्द्रोदयके लेखक हरिदास वैद्य लिखते हैं कि हमने यह सुधा कलकत्तेमें एक धनी मारवाड़ीको सेवन कराई। इसके सेवनसे वह हड्डियोंका कंकाल हृष्ट पुष्ट होगया। उसका कुरूप चेहरा गुलाबके फूलके समान होगया। इसके सेवनसे क्षय, क्षीणता, प्रमेह, दिल और दिमागकी कमजोरी और सिरके रोग आराम होते हैं। जिनको वीर्यकी कमीसे नामर्दी या क्षयरोग होता है उनके लिये तो यह अमृत रूप है।

दूधका तेजाब—(लेकेटिक एसिड)—दूधके द्वारा एक तरहका तेजाब तैयार किया जाता है जिसको अंगरेजीमें लेकेटिक एसिड कहते हैं। यह विना रंगका, विना खुशबूका, स्वादमें खट्टा, शराब और ईथरमें घुलन शील और क्लोरो फार्ममें अघुलन शील होता है।

यह शक्तिदायक होता है। अजीर्ण, अरुचि, मधुमेह, और मसानेके जुकाममें यह बहुत लाभदायक है। बच्चोंको होने वाले हरे रंगके दस्तोंमें १०० हिस्से पानीमें २ हिस्सा दूधका तेजाब मिलाकर एक ड्रामकी मात्रामें देनेसे बहुत लाभ होता हुआ देखा गया है।

दुधिया हेमकंद

नाम :—

संस्कृत—हिमकंद। गुजराती—दूधियो हेमकंद, थालो कटकियो। कच्छी—धोरो पिंजेरो, मिरी आल। लेटिन—Maerua Arenaria (मेरुआ एरीनेरिया)।

वर्णन—

इस वनस्पति की बेल बहुत कठोर होती है। यह ऊंचे २ झाड़ों और बाड़ों पर बहुत

ऊंची चढ़ जाती है। इसके पत्ते चिकने और लंब गोल होते हैं। इसके फूल हरी झाँई लिये हुए सफेद रंगके होते हैं। जो अकूसर सरदीके दिनों में आते हैं। इसकी फलियाँ २ से ५ इंच तक लंबी होती हैं और वह मिर्चके ४ दानोंको पास २ जोड़ कर बनाई हुई चेनके समान दीखती है। यह वनस्पति पंजाब, सिंध, गुजरात, कच्छ और मध्य भारतमें खेतों की वाड़ों पर और जंगलकी झाड़ियोंमे पैदा होती है। इसकी बेलके नीचे ३ ४ रतल वजनका एक कंद निकलता है उसको दूधिया हेमकंद कहते है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति शीतल, शांतिदायक, दाह नाशक, तृपाशामक, रक्तशोधक और विष, चर्मरोग तथा सूजनको नष्ट करने वाली होती है। इसमें कुछ वेदना नाशक धर्म भी होता है।

इसका मुख्य उपयोग रतवा नामक चर्म रोगपर होता है। इस रोगमें इसको १॥ माशेसे २ माशे तक पानीमें घिसकर दिनमें तीनबार पिलाते हैं और इसको जलमें चंदनके समान घिसकर झामरा और रतवा नामक रोगों पर लेप करते हैं। यह वनस्पति स्वादमें कुछ कड़वी और विशेप तौरसे मीठी होती है। इसके गुण मुलेठी या जेठी मदसे मिलते हुए होते हैं।

श्वास, खांसी और कफ रोगों पर यह अच्छा काम करती है। इससे कफ ढीला होकर निकल जाता है और खांसी कम होजाती है। दमेका दौरा भी इससे शांत हो जाता है। जीर्ण ज्वरको यह दूर करती है। क्षयसे होनेवालेसायंकालीन ज्वर और रात्रि स्वेदमें भी यह लाभदायक है। इसके सेवनसे शरीरका रक्त सुधरता है और शक्ति आती है। इन कार्यों में यह सार्सापरिला से अधिक प्रभाव शाली है। इसका क्वाथ और टिंचर भी बनाया जाता है। १ पिंट रेक्टिफाइड स्पिरिटमे इसका ४ औंस चूर्ण डालकर मजबूत बूचवाली शीशीमें बन्द करके ७ दिन तक पड़ी रखते हैं और दिन भरमे २।३ बार अच्छी तरहसे मिला देते हैं। सातवें दिन इसको मसल कर, ब्लाटिंग पेपर में छानकर, बूचदार बोतलमें भर देते हैं। इस टिंचर को १ ड्रामकी मात्रामें दूध शकरके साथ देनेसे रक्त रोगों में बहुत लाभ होता है।

दूधिया हेमकंदको घिसकर गुड़के पानीके साथ पिलानेसे और इसको पानीमें घिसकर लेप करनेसे रतवा (एक प्रकारका फैलने वाला चर्मरोग, गुजरातीमें इसे रतवा कहते हैं) नामक रक्त रोगमें बहुत फायदा होता है।
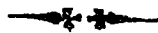
दूधी लाल (नागार्जुनी)

नामः—

संस्कृत—नागार्जुनी, पयोवर्षा, योगिनी, दुग्धिका, दुग्धफेनी, इत्यादि। हिन्दी—दूधी, लाल दूधी। बंगाल—वरकेरू। गुजराती—नागली दुधेली, राती दुधेली। मराठी—नायरी। तेलगू—विदारी, नानाबला। तामील—अमुपच्छे अरिस्सी। लेटिन—Euphorbia Pillulifera (इफोर्विया पिल्यूलिफेरा), E. Hirta (इफोर्विया हिरटा)।

वर्णन—

यह एक वर्ष जीवी क्षुद्र और रूएंदार वनस्पति है। इसका पौधा फुट भर ऊंचा होता है। इसकी डण्डियां लाल रंग की रहती है। इसके पत्ते आमने सामने लगते हैं। ये इंच भर लम्बे और नोकदार होते हैं। पत्तों की जोड़ी के बीचमें फलों के झूमके लगते हैं। इसके फल बाजरी के समान होते हैं। इसकी डाली को तोड़ने से उसमें से सफेद रंग का दूध निकलता है। यह वनस्पति तर जमीनों में ही बारह महिने मिलती है, सब जगह नहीं। इसलिये इसको वर्षा ऋतु में इकट्ठी करके सुखा लेना चाहिये।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेद के मतसे दूधी मधुर, वीर्यवर्धक, रूखी, ग्राही, कड़वी, वात कारक, गर्भस्थापक, चरपरी, खारी, धातुवर्धक, हृदय को हितकारी, गरम, पारे को बांधने वाली, और प्रमेह, कोढ़ तथा कृमि को दूर करती है।

दूधी की क्रिया हृदय के अन्दर जाने वाले एक विशेष मज्जातन्तु के ऊपर होती है। इस मज्जा तन्तु का कुछ भाग फुफ्फुस में जाता है। वहां भी इसकी क्रिया होती है। इस मज्जा तन्तु को फुफ्फुस—आमाशय—मज्जा तन्तु कहते हैं। श्वासोच्छ्वास के केन्द्र स्थान और हृदय के केन्द्रस्थान पर दूधी की प्रत्यक्ष क्रिया होती है। दूधी का इन केन्द्रों पर शामक प्रभाव होता है अर्थात् इससे इनकी ज्ञान ग्राहक शक्ति कम हो जाती है। जिससे दमे के रोग में कमी हो जाती है। दूधी का रस पेट में जानेपर आमाशय में कुछ जलन पैदा होती है और जम्भाइयां आने लगती हैं। आमाशय में जलन न होने देनेके लिये इसको हमेंशा भोजनके पश्चात् देना चाहिये और देने के पश्चात् भर पेट पानी पीना चाहिये। इस का विषैला असर न होने देने के लिये इसको हमेशा थोड़ी थोड़ी मात्रा में लेना चाहिये। क्योंकि अधिक मात्रा में लेनेसे यह श्वासोच्छ्वास और हृदय की क्रिया को बन्द कर देती है।

हृदय श्वास के अन्दर यह एक उत्तम औषधि साबित हुई है। श्वास नलिकाके संकोच

विकास की वजहसे होने वाले दमेमें भी यह बहुत गुणकारी है। श्वास, सरदी और जुकाममें भी दूधी अच्छा काम करती है। यह कहा जा सकता है कि किसी भी कारणसे पैदा हुए श्वास या दमे में दूधी को देनेसे श्वास और दमे से होने वाली त्रास और घबराहट कम हो जाती है।

रक्त मिश्रित आम और उदर शूलमें दूधी का रस देनेसे लाभ होता है। दाद और चर्म रोग इसका रस लगाने से नष्ट होते हैं। इसके पौधे का रस अतिसार और कॉलिक उदर शूल को नष्ट करने के लिये दिया जाता है और इसका दूध दाद और मुंह पर होने वाली खीलों को दूर करने के लिये लगाया जाता है। इसका काढ़ा, दमा और श्वास नलिका की पुरानी सूजन को दूर करनेके लिये काममें लिया जाता है।

इस वनस्पति की प्रधान उपयोगिता बच्चों को होने वाले कृमि रोग, आंतों के रोग और खांसी में मानी जाती है। कभी कभी यह वनस्पति सुजाकके अन्दर भी दी जाती है।

संथाल लोग इसके पौधे को वमन रोकने के लिये देते हैं और जब किसी माताके दूध आना कम हो जाता है तब इस पौधे के दूधिया रसका उपयोग करते हैं।

लारि यूनियनमें इस वनस्पति का संकोचक द्रव्य की तरह बहुत उपयोग किया जाता है। प्राचीन अतिसार और प्रवाहिका रोग में यह दी जाती है। इसका दूध वहां पर होने वाले स्थानिक फोड़े फुन्सी, और सूजन पर लगाने के काम में लिया जाता है। इसका रस मुख क्षत में भी दिया जाता है। यह वनस्पति वहां पर पौष्टिक, नींद लाने वाली और दमें को नष्ट करने वाली मानी जाती है।

कोमान का कथन है कि इसमें सन्देह नहीं कि इस वनस्पति का एक्स्ट्रेक्ट फुफ्फुस की श्लेष्मिक झिल्लियों और मूत्र यन्त्रोंपर काफी प्रभाव डालता है। मैंने इसको दमेके कई रोगियों पर अजमाया और बहुत लाभ दायक पाया। मैंने इसके टिंचर को अपनी प्रायवेट प्रेक्टिस में दमा, प्राचीन ब्रोंकाइटीज, और मूत्र रोगियों (Genito urinary Tract) पर अजमाया जिसका परिणाम बहुत ही सन्तोष जनक रहा।

गोल्ड कास्टमें इसका सफेद रस स्त्रियों का दूध बढ़ाने के काममें दिया जाता है। इसके पत्तों का रस नेत्र रोगों को दूर करने में भी उपयोगी माना जाता है।

वाट डिक्शनेरी में लिखा है कि दूधी का पौधा वमन को रोकनेके लिये काममें आता है। बच्चों की माता को यह देनेसे उनके दूध का प्रवाह बढ़ता है। दमेके ऊपर भी इस औषधि की बड़ी तारीफ है। मगर इसका रासायनिक प्रथक्करण करने पर इसमें कोई ऐसा दमे को दूर करनेवाला पदार्थ नहीं पाया गया। इसके गुण दोषों की आज़माइश करने पर यह कुछ उत्तेजक

और मादक वस्तु मालूम हुई। मगर दमेके ऊपर इसका कोई प्रत्यक्ष प्रभाव नजर नहीं आया। उल्टे कभी २ दमेके रोगी को यह औषधि देनेसे उसके श्वासमें बहुत रुकावट होती हुई मालूम पड़ी। इसलिये दमेके रोगमें बिना अनुभवी वैद्य की सलाहके इस औषधि को नहीं लेना चाहिये।

रायबहादुर कनाईलाल दे "इंडिजिनस ड्रग्स आफ इंडिया" में लिखते हैं कि दूधी का ताजा पौधा हिन्दुस्तान में बड़े पैमानेमें उपयोगमें लिया जाता है। खास करके बच्चों को होने वाले आंतों और छातीके रोगोंमें इसका उपयोग किया जाता है। कुछ वर्षों पहिले इस पौधे का एक्स्ट्रेक्ट दमेको दूर करनेके काममें बहुत लिया जाता था। यह वनस्पति उग्र और प्राचीन अतिसारमें भी बहुत उपयोगी पाई गई है।

नागपुरमें होनेवाली अठारहवीं इंडियन साइंस कांग्रेसमें दीक्षित और कामेश्वर रावने इस वनस्पति पर किये हुए अपने अनुभव बतलाये। उन्होंने कुत्ते, बिल्ली और खरगोश पर इस वनस्पतिके प्रयोग करके यह अनुभव किया कि यह औषधि श्वासोच्छ्वासके अवयवों पर बहुत प्रभाव डालती है। यह श्वासोच्छ्वास की गति को धीमी करते हुए छोटी २ श्वास नलियों का विकास कर देती है। मगर यह लाभ इसकी छोटी मात्रासे ही होता है। अगर यह बड़ी मात्रा में दे दी जाय तो उससे रोगी का जी मिचलाता है और उल्टियाँ होती हैं। अगर प्राणियों की रक्तवाहिनी में इसका इंजेक्शन द्वारा पहुँचाया जाय तो यह आंतों की गति को मंद कर देती है। कभी कभी यह आंतों की स्वाभाविक गति को भी रोक देती है और उसके स्नायु मंडल को ढीला कर देती है। रक्तवाहिनी में इसका इंजेक्शन देनेसे रक्तका दबाव भी कम पड़ जाता है। असल बात यह है कि अधिक मात्रा में यह हृदय की गति को बन्द कर देती है। दूसरे अवयवों पर इसका ज्यादा प्रभाव नहीं है।

कर्नल चोपरा का मत—दूधी एक वर्ष जीवी वनस्पति है जो हिन्दुस्तानके तमाम गरम प्रान्तोंमें होती है। यह बहुत नामांकित और महत्व की जड़ी मानी जाती है। इसका उपयोग श्वासोच्छ्वासके रोगोंमें, खास कर खांसी, सरदी, कफ और दमेमें होता है। सन् १८८४ में पाश्चिमात्य डॉक्टरोंने इस वनस्पति का यूरोपमें प्रचार किया। इसके पंचांग का रेक्टिफाइड स्पिरिटमें तैयार किया हुआ एक्स्ट्रेक्ट अभी भी वहाँ थोड़े बहुत प्रमाणमें काममें लिया जाता है। पेचिश, उदरशूल और बच्चोंके कृमि रोगमें भी यह बहुत उपयोगी मानी जाती है।

इसका रासायनिक विश्लेषण करने पर इसमें गेलिक एसिड, कर्सेटिन, एक नवीन फिनेलिक तत्व, कुछ इसेंशिअल आइल और कुछ अलकेलाइड का पता चला है।

मारसेटके मतानुसार इस औषधि का सत्व हृदय और श्वासोच्छ्वास की शक्ति को धीमी करके श्वास नलियों को विकसित करता है। श्वासोच्छ्वास सम्बन्धी बीमारियों में बिना

पूर्ण निर्णय पर पहुँचे हुए इसका बहुत उपयोग किया जाता है। इसलिये इसका वांछितगुण दृष्टिगोचर नहीं होता।

उपयोगः—

पुरुषार्थ वृद्धि—फ़ारसी किताबों में लिखा है कि हरी दूधी को छायामें सुखाकर कूट छानकर शक्कर के साथ खानेसे कामशक्ति बढ़ती है।

सर्पविष—इसके पौने दो तोला पत्तों को पीसकर काली मिर्च मिलाकर खानेसे सर्पविषमें लाभ होता है।

कांटा चुभना—जिस जगह कांटा चुभ जाय उस जगह पर इसका लेप करने से कांटा निकल जाता है।

जलोदर—इसके पंचांग का अर्क भबके से खींचकर जलोदर के रोगी को पानी की जगह पिलाया जाय तो बहुत फायदा होता है।

जबान का तोतलापन—इसकी जड़ का २ माशे पान में रखकर चूसनेसे जबान का तोतलापन मिट जाता है।

पथरी—गुर्दे और मसाने की पथरी में भी यह लाभदायक है।

मात्रा—दूधी के स्वरस की मात्रा १० से २० बूंद तक है और इसके चूर्ण की मात्रा २ से ५ रत्ती तक है।

दूधी छोटी

नामः—

संस्कृत—लघुदुग्धिका। हिन्दी—छोटी दूधी, दूधली, निगाचूनो।। मराठी—नायटी। गुजराती—नहानी दुधेली। बंगाल—दूधिया, रक्त केरुआ। कच्छी—झिनकी दुधेली। पंजाब—हजारदाना, बड़ा डोडक। लेटिन—Euphorbia Thymifolia (इफोर्बिया थिमिफोलिया)।

वर्णन—

यह भी एक वर्ष जीवी क्षुद्र वनस्पति है। इसके पौधे जमीनपर फैले हुए रहते हैं। इसके डालियाँ बहुत होती हैं। इन डालियोंकी डंडियाँ लाल होती हैं। इसके पत्ते आमने सामने लगते हैं। फूल बारहों महिने रहते हैं। इसके पत्ते, फूल और फल बहुत बारीक होते हैं।

इसकी डालियों को तोड़नेसे उनमें दूध निकलता है। इसके सूखे पौधेमें कुछ खुशबू आती है। और सूखे हुए पत्तोंमें काली चायके समान गन्ध आती है इसका स्वाद कुछ तूरा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पतिका मुख्य धर्म रेचक और उत्तेजक है। बड़ी दूधीकी तरह इसमें संकोच विकास प्रतिबन्धक धर्म नहीं होता।

तामील देशके वैद्य इस वनस्पतिके पत्तों और बीजोंको बच्चोंको होने वाले आंतों के रोग और कृमिरोगों को दूर करनेके लिये देते है। उत्तरी भारतमें इनका उपयोग रेचक और उत्तेजक वस्तुकी तरहसे किया जाता है।

कोकणमें इस वनस्पति का रस दाहको दूर करनेके लिये लगाया जाता है। संथाल लोग इस वनस्पतिके पौधेको मासिक धर्मकी रुकावट दूर करनेके काममें लेते हैं। मुंडा जातिके लोग इस वनस्पतिको प्रवाहिका दस्तों को रोकनेके लिये काममें लेते हैं।

लारियूनियनमें प्रवाहिका और अतिसारको रोकनेके लिये इस वनस्पतिको एक संकोचक वस्तुकी तरह काममें लेते हैं।

—

दूध मोगरा

नाम:—

संस्कृत—दुग्धिका। हिन्दी—दूधी, हजारदाना, दूधमोगरा। पंजाब—हजार दाना। लेटिन—Euphorbia Hypericifolia (इफोर्बिया हायपेरिसिफोलिया)।

वर्णन—

इसके पौधे बरसातके दिनोंमें बहुत पैदा होते हैं ये एक बालिश्त ऊंचे होते हैं। कहीं २ जमीन पर फैले हुए भी रहते हैं। इसके पत्ते आमने सामने लगते हैं। ये लंबगोल और अंडाकार होते हैं। इसके फूल बहुत छोटे, सफेद और गुलाबी रंगके होते हैं। इसके फल छोटे, तीन खाने वाले, बैंगनी छाया लिये हुए हरे रंगके होते हैं। इस पौधेका कोई भी भाग तोड़नेसे उसमेंसे दूध निकलता है।

गुणदोष, और प्रभाव:—

यह वनस्पति ग्राही, मादक, पौष्टिक, और सूजनको नष्ट करनेवाली मानी जाती है।

अधिक मात्रामें लेनेसे शरीरमें यह जहरीला असर पैदा कर देती है। बच्चोंके उदरशूलमें इसके पत्तोंका रस दूधमें मिलाकर दिया जाता है। इसके सूखे पत्तोंकी फांट बनाकर अतिसार, दस्त, अत्यार्तव, श्वेतप्रदर और कफके साथ खून जाना, इत्यादि रोगोंको दूर करनेके लिये दी जाती है।

दूधी

नाम :—

देहरादून—दूधी, नेढासिंगी। हिन्दी—दूधी, करेंटा। कुमाऊ—दूधीवेल। संथाल—उतरीदूधी। तेलगू—एड़वीपंलेतिगे लेटिन—Cryptolepis Buchanani. (क्रिप्टोलेपिस बुचनानी)।

वर्णन —

यह एक बड़ी जातिकी झाड़ी होती है। इसके पत्ते ७.५ से १२.५ सेंटिमीटर तक लम्बे और ३.८ से ६.३ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल हरापन लिये हुए पीले रंग के होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव :—

संथाल जातिके लोग इस पौधेसे एक औषधि तैयार करते हैं जो बच्चोंको सूखा रोग दूर करनेके लिये दी जाती हैं। वे लोग इस औषधि को छोटी दूधी (Euphobia micro Phylla) के साथ मिलाकर उन माताओंको दूध बढ़ानेके लिये देते हैं जिनके स्तनोंमें अपने बच्चोंके लिये पर्याप्त दूध पैदा नहीं होता।

दूधी

नाम—

कुमाऊँ—दूधो। नेपाल—देवारी लहरा। लेटिन—Trachelospermum Fragrans (ट्रेकेलोसपरमम फ्रेगरंस)।

गुणदोष और प्रभाव—

कुमाऊँमें यह वनस्पति सप्तपर्णी या छतिवन नामक वनस्पतिके बदलेमें उसके प्रतिनिधि की तरह उपयोगमें ली जाती है। यह भी एक ज्वरनाशक वनस्पति है।

दुधिला

नाम:—

गढ़वाल—दुधिला। कुमाऊ—वेसिंग।

वर्णन—

यह एक छोटी जातिकी झाड़ी होती है। इसके पत्ते ७.५ से १२.५ सेंटिमीटर तक लम्वे और ३.२ से ५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं इसके फूल छोटे और सव्जीमाइल पीले होते हैं। इसके वीज लम्वे और चिकने होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

पूर्वी कुमाऊँमें रहनेवाले भूतिया लोग इन वनस्पतिके पत्तोंको संधिवातको दूर करनेके काममें लेते हैं।

दूधली

नाम—

हिन्दी—दुधाली। पंजाव—कांडू, कन्डू, नुरेलाम, पहाड़ी गाजर। उर्दू—सेलेलमिश्री। लेटिन—Eryngium Coeruleum (इरिंजियम कोइरुलियम)।

वर्णन—

यह वनस्पति काश्मीरमें ५ हजार से लेकर ६ हजार फीटकी ऊँचाई तक और ईरान, अफगानिस्तान तथा टर्कीमें पैदा होती।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानीमत—यूनानीमतसे यह पौधा मीठा, पौष्टिक और लकवा तथा पेशाबके साथ

खून जानेकी बीमारीमें लाभदायक है। इसके बीज पौष्टिक और उत्तेजक होते हैं।

कंदहारमें यह पौधा ज्ञानतंतुओंको शक्ति देनेवाला माना जाता है।

हानिग्बरगरके मतानुसार इस पौधेकी राख खूनी बवासीर में उपयोगी मानी जाती है।

दुदेला

नाम:—

नेपाल—दुदेला। बिहार—लवलव। चिनाव—फुरोल। काश्मीर—करमोरा, मेंडिया,। तामील—मेरा वलाई। लेटिन—Hedora Helix (हेडेरा हेलिक्स)।

वर्णन—

यह एक हमेशा हरी रहने वाली पराश्रयी झाड़ी होती है। यह सारे हिमालयमें ६ हजार से १० हजार फीट की ऊंचाई तक और खासिया पहाड़ियों में ४ हजार से ६ हजार फीट को ऊंचाई तक पैदा होती है।

दुधेला

नाम:—

हिन्दी—दुधेला। बिहार—लवलव। काश्मीर—करमोरा। नेपाल—दुधेला। सतवज—कड़करेली, कनेरी,। अंगरेजी—Barren Ivy (बेरन इव्ही)। लेटिन—Hedera Helix (हेडेरा हेलिक्स)।

वर्णन—

यह एक हमेशा हरी रहने वाली एक वनस्पति है। जो सारे हिमालयमें ६ हजार से १० हजार फीट की ऊंचाई तक और खासिया पहाड़ियों पर ४ हजारसे ६ हजार फीट तक की ऊंचाई तक पैदा होती है। इसके पत्तों की लम्बाई ५ से १० मीटर तक होती है। इसके पत्रवृन्त नाजुक रहते हैं। इसका शक्ल गोल और नारंगी रंग का होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके पत्ते और फल उत्तेजक, पसीना लानेवाले और विरेचक होते हैं। यूरोपमें ग्रंथियों के बढ़ जाने पर इसके पत्ते पुलटिस या सेंकके काममें लिये जाते हैं नासूर और देरीसे भरने वाले घावों पर इनका उपयोग किया जाता है। इसका फल ज्वरके ऊपर भी लाभदायक है।

इंग्लेण्डमें इसका गोंद आक्षेप निवारक और स्त्रियोंके लिये उपयोगी माना जाता है। इसके फलों का शीत निर्यास सन्धिवात में दिया जाता है और इसके पत्तों का काढ़ा बच्चोंके सिरकी कृमियों को नष्ट करनेके लिये लगाया जाता है।

दक्षिण अफ्रिकामें रहनेवाले यूरोपके निवासी इसके पत्तों को सिरकेमें भिगोकर नासूर व फोड़ों पर लगाने के काममें देते हैं।

इस वनस्पतिमें हेलिक्सिन नामका ग्लुकोसाइड पाया जाता है जो कि इसके फलों से निकलता है। इसीके कारण इसका स्वाद कड़वा रहता है।

कर्नलचोपराके मतानुसार इसके फल विरेचक है। इसके पत्तों में आर्सेनिक ओक्साइ रहता है।

दूधिया लता

नाम :—

संस्कृत—दूधिया लता, दुग्धी, दुग्धिका, गृहिणी, क्षीरी, मरुद्भवा, स्वादुपर्णी, ताम्रमूला।

हिन्दी—दूधियालता, दूधी, दुग्धिका, किरिन। गुजराती—जलदूधी। बंगाल—दूधी, दूधियालता, खिटाई। मराठी—धूधनी, दुधेरी, दूधतनी। काठियावाड़—नरादे। पंजाब—गनि, घारोट। लेटिन—Oxystelma Eseuleutum (ऑक्सी स्टेल्मो एक्स्यूलेटेम)।

वर्णन—

यह वनस्पति दक्षिणी भारतके पहाड़ोंमें और मैदानोंमें जलके किनारों पर पैदा होती है। यह एक हमेशा हरी रहनेवाली वनस्पति है। इसके किसी अंग को तोड़नेसे उसमें दूधके समान रस निकलता है। इसकी कई शाखाएँ होती हैं। इसके पत्ते ४.५ से ६ सेन्टिमीटर तक लम्बे और ३ से ८ मिलीमीटर तक चौड़े होते हैं। ये बर्छी आकार के, पतले और फीके हरे रंगके होते

हैं। इसके फूल बड़े और बहुत खूबसूरत रहते हैं। इसकी डोड़ी ३.८ से ६.३ सेन्टिमीटर तक लम्बी रहती है। यह लम्बा गोल और तीखी नाक वाली होती है। इसमें कई बीज रहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे यह वनस्पति गरम, कड़वी, तीखी, खुश्क और दुष्पाच्य होती है। यह कब्जियत पैदा करती है। यह मूत्रल, मृदुविरेचक, कामोद्दीपक और कृमिनाशक है। धवल रोग और वायु नलियोंके प्रदाहमें यह लाभदायक है।

यूनानी मतसे इसका फूल, कड़वा, पौष्टिक, कफनिस्सारक और कृमिनाशक होता है। इस कारण पुराने प्रमेह और सुजाकमें लाभदायक है। खांसी, धवल रोग और मांसपेशियों की पीड़ामें यह उपयोगी है। बच्चोंके अतिसार को दूर करनेके लिये काममें लिया जाता है।

इस वनस्पतिका काढ़ा बनाकर उससे कुल्ले करनेसे मुंहके छाले मिट जाते हैं। तारपीनके साथ मिलाकर इसको लगानेसे खुजली में लाभ होता है। इसमें ज्वर-निवारक गुण भी पाया जाता है।

सिंधमें इसका दूधिया रस फोड़ों को धोनेके काममें लिया जाता है। उड़ीसामें इसकी ताज़ा जड़े पीलिया को दूर करनेके काममें ली जाती है।

कर्नल चोपराके मतसे मुंहके छालोंमें इसके कुल्ले किये जाते हैं। पीलिया रोगमें भी यह उपयोगमें लीजाती है।

दुधाली

नाम:—

बम्बई—दुधाली। मुंडारि—दहुसिर। लेटिन—Sopubia Dolphini folia (सोपूबियाडेलफिनिफोलिया)।

वर्णन—

यह वनस्पति बिहार छोटा नागपूर, कोकण, पश्चिमी घाट, दक्षिण और करनाटकमें पैदा होती है। इसका पौधा बहुशाखी होता है। इसपर बैंगनी रंगके धब्बे रहते हैं इसके पत्ते आमने सामने लगते हैं। ये २.५ से ३.८ सेंटिमीटर तक लंबे होते हैं। इसके फल और बीज लंबगोल रहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

खुली हवामें पैर रहनेकी वजहसे जो छाले हो जाते हैं, उन छालों को पूरनेके लिये दक्षिणके लोग इस वनस्पतिका रस लगाते हैं। यह वनस्पति संकोचक होती है। इसको लगानेसे शुरु शुरु में चमड़ेका रंग पीला हो जाता है। फिर वह धीरे २ काला हो जाता है।

कर्नल चोपराके मतसे यह वनस्पति संकोचक होती है। इसे रगड़ और घावपर लगानेके काममें लेते हैं।

दूधीकाली (कृष्णसारिवा)

नाम

संस्कृत—कृष्ण सारिवा, कृष्ण मूली, काल पेशी, काल घंटिका, गोपवधू, दीर्घ मूली, चंदन सारिवा, चन्दन गोपा, महाश्यामा, श्यामलता, सुभद्रा, उत्पल सारिवा। हिन्दी—दूधी, काली दूधी, कालीसर, श्यामालता। मराठी—श्यामलता, कृष्णसारिवा, कांटे भोरी। बंगाल—दूधी, श्यामलता। तामील—उदरगोडि। तेलगू—नलतिगे, करम पाला। लेटिन—Ichnocarpus Frutescens (इकनोकार्पस फ्रटीसंस)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जातिकी बेल होती है जो हिमालय बंगाल और दक्षिणकोकणमें पैदा होती है। इसके पत्ते लंबगोल २ से ३ इंच तक लंबे और १ से १॥ इंच तक चौड़े होते हैं। पत्तोंका डंखल १ इंच लंबा होता है। इसके फूल छोटे और सफेद रंगके होते हैं और उनपर लाल रंगके रुएं होते हैं। इन वनस्पतिकी जड़ें अनन्त मूलकी तरह होती हैं, मगर इनकी छाल काली होती है। जो लकड़ीसे चिपकी हुई रहती है। इसकी जड़ों में अनन्त मूलकी जड़ोंके समान खुशबू और स्वाद नहीं होता।

गुण दोष और प्रभाव—

(आयुर्वेदिक मत)—आयुर्वेदिक मतसे कृष्ण सारिवा शीतल, वीर्य वर्धक, मधुर और वात, पित्त, रुधिर विकार, तृषा, वमन और ज्वरको नष्ट करने वाली होती है। इसके सब गुण अनन्त मूलके समान ही होते हैं। अनन्त मूलका वर्णन इस ग्रंथके पहले भागमें देखना चाहिये।

दूधीवेल

नाम—

संस्कृत—भद्रमुंज, भद्रबल्लि, विसल्याकृत। हिन्दी—चमारीकी वेल, दूधी वेल, रामसर। कुमाऊ—दूधी। बंगाल—हापर माली, रामसोर। तेलगू—नागा माली, लेटिन—Uallaris Solanacea (व्हेलिरिस सोलेनेसीया)।

वर्णन—

यह एक बड़ी पराश्रयी झाड़ी होती है। इसकी छाल मोटी, पीलापन लिये हुए सफेद और मुलायम होती है। इसके पत्ते ५ से लगाकर ११ सेंटिमीटर तक लंबे और २.५ से लेकर ३. सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल सफेद और सुगन्धित होते हैं। यह वनस्पति थोड़ी बहुत सारे भारतवर्ष में पैदा होती है। इसकी डालियों को तोड़नेसे उनमें से दूधिया रस निकलता है। इसका दूधिया रस एक हलका चर्मदाहक पदार्थ है। इसको पुराने फोड़ों और सूजन पर लगानेके काममें लेते हैं।

दूधी (थरोली)

नाम—

संस्कृत—हिन्दी—डेरा, थरोली, दूधी। बंगाल—दूधी, दूध कौरटया। बंबई—डेरा, दूधी, कडु इन्द्रजौ, तांबड़ा कुड़ा। गुजराती—रुच हेलो दूधलो। मराठी—काला इंद्रजौ, तांबड़ा कुड़ा। पंजाब—दूधी, किओर, किलावा। संथाल—अतकुरा, बरुमचकुन्द। तामील—पलाई। तेलगू—कोलामुखी, पाला। लेटिन—Wrightia Tomentosa (राइटिया टोमेनटोसा)।

वर्णनः—

यह मीठे इंद्रजौ की ही एक उपजाति है। इसका वृक्ष मोटे क़दका ७.५ से ६ सेंटिमीटर तक ऊंचा होता है। इसकी डालियों में पीले रंगका दूधिया रस रहता है। इसकी छाल मुलायम और पीलापन लिये हुए भूरे रंगकी होती है। इसके पत्ते ७.५ से १५ सेंटिमीटर तक लंबे और ३.८ से ६ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष और सीलोनमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

छोटा नागपुर में इसकी छाल मासिक धर्म और गुर्दे सम्बन्धी शिकायतों को दूर करनेके

काममें ली जाती है। वहां यह भी विश्वास किया जाता है कि इसकी छाल सर्प और विच्छूके विषपर भी लाभ पहुँचाती है।

कस और मश्करके मतानुसार सर्प औ विच्छूके विषमें इसकी छाल निरूप योगी है।

दूब

नाम :—

संस्कृत—अमरी, अमृता, अनन्ता, अनुवल्लिका, असितालता, बहुवीर्य, भार्गवी, भूतहंत्री, धूर्ता, दुर्वा, गौरी, गुना, हर सालिका, हरिता, हरितालि, जया, महौषधि, महायरी, मंगला, सहस्रपर्वा, इत्यादि। हिन्दी-दूब, दुब, दुर्वा, दूबघास, कालीघास, रामघास। गुजराती—दुवो, हरियाली, ध्रो। मराठी—दुर्वा, हरियाली। पंजाब—दूब. दुर्वा, कवर, खब्बल, ताला, तिला। बंगाल—दूब, दूबला, दुर्वा। तामील—अरुगमपिल्लू, हरियाली। तेलगू—घेरिचा। अंग्रेजी—Baha na Grass (बहामा ग्राज), Couch Gras. (कोचग्रास), Debils Grass (डेविल्स ग्रास), Doob Gras (दूब ग्रास)। लेटिन– Cynodon Dactylon. (सिनोडन डेक्टीलोन)।

वर्णन—

दूब एक मशहूर घास है जो प्राय: सारे भारतवर्षमें पैदा होता है। और सब लोग इसको जानते हैं। हिन्दूधर्म शास्त्रोंमें यह घास बड़ा पवित्र माना गया है। ढोरोंके लिये भारतवर्षमें जितने तरहके घास पैदा होते हैं उन सबमें यह घास ढोरोंके लिये श्रेष्ट मानी जाती है। यह घास जहां पर एक बार जम जाती है वहांसे इसको नष्ट करना बहुत मुश्किल होता है। क्योंकि इसकी जड़ें जमीनके अन्दर बहुत गहरी बैठती हैं और इसके पौधेमें हवा और जमीनसे नमीको खींचनेकी बहुत शक्ति है।

इसका पौधा जमीनसे ऊँचा नहीं उठता बल्कि जमीन पर ही फैला हुआ रहता है। इसीलिये इसकी नम्रताको देखकर गुरु नानकने एक स्थान पर कहा है—

नानकनी चाहो चले, जैसी नीची दूब।
और घास सूख जायगा, दूब खूबकी खूब॥

दूबकी दो तीन जातियां होती है। एक नीलदुर्वा, एक श्वेतदुर्वा और एक गंड दुर्वा।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे दूब कसेली, मधुर, शीतल तथा पित्त, तृषा, अरुचि,

वमन, दाह, मूर्च्छा, ग्रह, पीड़ा, भूतबाधा, कफ और श्रमको नष्ट करनेवाली है। और तृप्तिदायक है।

नीली या हरी दूब मधुर, कड़वी, शीतल, रुचिकारक, संजीवन, कसेली, रक्तशोधक, और रक्तपित्त, अतिसार, ज्वर, वमन, कफ, रक्तरोग, तृषा, विसर्प, दाद और त्वचाके विकारों को दूर करती है।

सफेद दूब मधुर, रुचिकारक कसेली, कड़वी, शीतल तथा वमन, विसर्प, तृषा, कफ, पित्त, दाह, आमातिसार, रक्तपित्त और खांसीको दूर करती है।

गंडदुर्वा अर्थात् गाडर दूब शीतल, लोहेको गलानेवाली, मलको रोकनेवाली, हलकी, कड़वी, कसेली, मधुर, वातकारक, पंचनेमें चरपरी तथा दाह तृषा, कफ, रुधिर विकार, कुष्ठ, पित्त और ज्वरको दूर करनेवाली है।

दूबकी जड़का काढ़ा वेदना नाशक और मूत्रल होता है। इसलिये बस्तिशोथ, सुजाक और मूत्रकी जलनमें यह उपयोगी होता है। चर्मरोगोंमें इसकी जड़का काढ़ा बनाकर दिया जाता है। अँगुलियोंके बीचमें दरारें पड़कर उनमें जलन होती है ऐसे समय इसके पत्तोंका लेप करनेसे शान्ति मिलती है। जखम पर भी इसके पत्तोंका लेप करनेसे खूनका बहना बन्द हो जाता है और जखम जल्दी भर जाता है। नकसीर (नाकसे खून बहने) में इसके पंचांग का स्वरस नाकमें टपकानेसे बड़ा लाभ होता है। आंखोंके दुखने पर इसके पत्तोंको पीसकर पलकों पर बांधनेसे शान्ति मिलती है। जलोदरमें इसके पंचांगका रस या फांट बनाकर देनेसे पेशाब अधिक होकर पेट हल्का पड़ जाता है। खूनी बवासीरमें इसके पंचांगको पीसकर दहीमें मिलाकर देनेसे और इसके पत्तोंका बवासीर पर लेप करनेसे बड़ा लाभ होता है। सुजाकमें, इसकी जड़ोंको दूधमें पीसकर दी जाती है। अत्यधिक मासिकधर्म, भूतोन्माद, अपस्मार और पेशाबके साथ खून जानेकी बीमारीमें इसके पंचांगका स्वरस बहुत मुफीद है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से दूब प्यास को मिटाने वाली, मूत्रल, खून और पित्त की तेजी व जोश को कम करनेवाली और सर्प विष तथा वमन में लाभ दायक है। इसको समान भाग धुये चांवलों के साथ पीसकर थोड़ी मिश्री मिलाकर पीने से हैजे और सांपके जहरमें लाभ होता है। अकेली दूब को पानी के साथ पीसकर पीनेसे सुजाक की जलन मिट जाती है। इसका लेप खुजली पर मुफीद है और गर्मी की सूजन को बिखेर देता है। इसके काढ़े से कुल्ले करने से मुंह के छाले मिट जाते हैं। इसको पीस कर ललाट पर लेप करने से नकसीर बन्द होती है।

सफेद दूब वीर्य को कम करती है और काम शक्ति को घटाती है। इसलिये साधू लोग काम शक्ति को घटानेके लिये इसको पीते हैं।

बड़ी बड़ी शाखों वाली दूब जो अक्सर कुओं पर होती है उसे लेकर पीस छान कर २।३ माशे नागकेशर और छोटी इलायची के दाने पीसकर खूब बारीक करके उसमें मिलाकर सूर्योदय से पहिले उस बच्चे को जिसका तालु बैठ गया हो, नाकमें डालकर सुंघावे तो तालु ऊपर को चढ़ जाती है।इसके सेवन से ताकत बढ़ती है। जो बच्चे दूध निकाल देते हैं उनको आराम होता है और दुबला होना बन्द हो जाता है। तीन तोला दूब पानीमें पीसकर मिश्री मिलाकर पीने से मसाने की पथरी में लाभ होता है।

इसका ताजा रस एक संकोचक वस्तु है और यह ताज़ा घाव और व्रणों पर लगानेके काममें उपयोगी माना जाता है। यह मूत्रल भी होता है और जलोदर तथा सर्वांगीण शोथ में काममें लिया जाता है। इसी प्रकार संकोचक होने की वजहसे पुराने अतिसार और पतले दस्तोंमें भी यह उपयोगी माना जाता है। इसी प्रकार यह ज़ुक़ाम सर्दी और चक्षु रोगोंमें भी उपयोगी माना जाता है।

बी डी. बसू के मतानुसार इसका ताजा रस हिस्टीरिया, मृगी, अपस्मार, और उन्माद में उपयोगी होता है।

कोकण में इस बनस्पति को दूसरी औषधियोंके साथ काढ़ा बनाकर अतिसार और अत्यधिक रजःश्राव को मिटाने के लिये दिया जाता है।

संथाल जातिके लोग इसके पौधे को। पीस कर पैरों की ऊंगलियों।के बीचमें फटने वाली बिवाई पर लेप करते हैं।

इसके पौधे को पीस कर उसको दहीमें मिलाकर प्राचीन प्रमेह (Gleet) में दिया जाता है। इसका शीत निर्यास पिलाने से बवासीर का खून रुक जाता है।

मैसूर में इसके पौधे का काढ़ा उपदंश की दूसरी अवस्था में दिया जाता है। मुंडा जाति के लोग जलोदर की बीमारीमें इसको एक मूत्रल औषधि की तरह काम में लेते हैं।

मेडागास्कर में इसका पूरा पौधा ग्रन्थि वात, सन्धि वात, और गठिया पर लगाने.के क़ाम में लिया जाता है।

ट्रांसवाल में इसके पौधे को पीस कर हृदय की जलन को शान्त करने लिये पिलाते हैं इसके पौधे को कुचल कर घाव और व्रणों पर खून बन्द करने के लिये लगाया जाता है।

उपयोग :—

नकसीर—इसका ताजा रस नाकमें टपकाने से नकसीर फौरन वन्द हो जाता है।

जखम—इसके पंचांग को पीस कर लेप करने से जखम से खून वहना तत्काल वन्द हो जाता है।

आमातिसार—दूब को सोंठ और सौंफ के साथ औटाकर पिलाने से आमातिसार मिट जाता है।

रक्त प्रदर—दूबके रसमें सफेद चन्दन का बुरादा और मिश्री मिला कर पिलाने रक्त प्रदर मिटता है।

पित्त की वमन—सफेद दूब का रस पिलाने से पित्त की वमन मिटती है।

जलोदर—दूब को काली मिरच के साथ पीस कर पिलाने से मूत्र वृद्धि होकर जलोदर और सर्वाङ्ग शोथ मिटता है।

नेत्र रोग—हरी दूबके रस कालेप करने से आंखों का दुखना और गीड़ों का बहुत आना मिटता है।

मूत्र में रुधिर जाना—दूबको मिश्रीके साथ पीस छान करके पिलानेसे पेशाव के साथ खून का जाना वन्द हो जाता है।

मलेरिया ज्वर—दूब के रसमें अतीस के चूर्ण को मिलाकर दिनमें दो तीन वार चाटनेसे वारीसे आने वाला ज्वर वन्द हो जाता है।

मुंह के छाले—दूबके क्वाथ से कुल्ले करनेसे मुंहके छाले मिट जाते हैं।

उपदंश के व्रण—उपदंश की दूसरी अवस्थामें जव सारे शरीरमें चट्टे पड़ जाते हैं। तव दूब की जड़ का क्वाथ पिलाने से लाभ होता है।

खूनी ववासीर—दूब का शीत निर्यास वनाकर पिलानेसे ववासीर से वहनेवाला खून वन्द हो जाता है।

पेशाव की जलन—दूबको पीसकर दूधमें छानकर पिलानेसे पेशाव की जलन मिटती है।

मूत्रकृच्छ—दूब की ७॥ मासे जड़को महीन पीसकर दहीके साथ मिलाकर चाटनेसे पुराना मूत्रकृच्छ मिटता है।

ज्वर—श्मशानमें पैदा हुई दूब की जड़ को सूतसे लपेटकर हाथमें बांधनेसे सव प्रकार का बुखार आराम होता है।

पित्त की वमन—दूबके रस को चावलोंके धोवनके साथ पिलानेसे पित्त की वमन मिटती है।

दाद और खुजली—दूबके चौगुने रसमें सिद्ध किये हुए तेल को लगानेसे दाद, खुजली और व्रण मिटते हैं। दूब को हलदीके साथ पीसकर लेप करनेसे भी खुजली और दाद मिटते हैं।

देवधान

नाम—

संस्कृत—अरण्य धान, मुनिधान्य, निवार, प्रसादिका, तृणधान्य, इत्यादि। हिन्दी—देवधान, जंगली धान, तिली, तिनी। मराठी—देवभात। गुजराती—त्रांति, नमारचोखा। पंजाब—पसतल। लेटिन—Hygroryza Aristata (हायग्रोरिझा एरिस्टेरा)।

वर्णन—

यह वनस्पति चांवल की एक जंगली जाति है। इसका पौधा घास की तरह होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे इसके बीज मीठे और कसैले होते हैं। ये स्निग्ध, सुपच्य, शीतल, पित्तनाशक और मूत्राशयमें शीतलता पहुँचानेवाले होते हैं। ये कब्जियत पैदा करते हैं।

देवदारु

नाम :—

संस्कृत—सुरदारु, भद्रदारु, देवकाष्ठ, अमरदास, इंद्रवृक्ष, इंद्रदारु, मस्तदारु, इत्यादि। हिन्दी—देवदारु। बंगाल—देवदारु। मराठी—देवदार। गुजराती—देवदार। करनाटकी—चोपरादेवदार। पंजाब—केलु। लेटिन—Pinus Deodara (पिनस देवदार), Cedrus Deodara (सेड्रस देवदार)।

वर्णन—

देवदारु का वृक्ष बहुत बड़ा और ऊंचा होता है। यह हिमालय, नेपाल, कुमाऊं और काश्मीरमें विशेष पैदा होता है। वहां पर यह केलोन के नामसे प्रसिद्ध है। इसकी लकड़ी का सार और इसकी जड़ें सुगन्धित हल्के पीले रंग की और तेल युक्त रहती हैं। इसकी लकड़ी को जलानेसे उसमेंसे एक प्रकार का तेल टपकता है जिसे केलोन का तेल बोलते हैं। यह बहुत-

पतला होता है। औषधि प्रयोगमें देवदारु की सुगन्धित लकड़ी, कोमल डालियां, पत्ते और केलोन का तेल काममें आता है। इसकी लकड़ीसे पेकिङ्ग करनेके बॉक्स भी बनाये जाते हैं जो सारे भारतवर्षमें पेकिंगके काममें आते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे देवदारु दो प्रकार का होता है। एक स्निग्धदारु और दूसरा काष्ठ दारु।

स्निग्ध देवदारु—पचनेमें चरपरा, चिकना, गरम, कड़वा, हलका तथा कफ, वात, प्रमेह, बवासीर, कब्जियत, आमदोष, ज्वर, आफरा, श्वास, खांसी, सूजन, खुजली, हिचकी, तंद्रा, रुधिर, विकार और पीनस को दूर करता है।

काष्ट देवदारु—गरम, कड़वा, रुखा तथा कफ, वातरोग और भूत बाधा को दूर करता है। इसके लेपसे चेहरे की भांई दूर हो जाती है।

यूनानी मतसे इसके पत्ते सूजन पर और क्षयजनित गैलग्रन्थियों पर लेप करनेके काममें लिये जाते हैं। इसकी लकड़ी कड़वी, मूत्रल, शान्तिदायक, पेटके आफरे को मिटानेवाली और कफ निस्सारक होती है। यह गठिया, सन्धिवात, बवासीर, गुर्दे और मसाने की पथरी, पक्षाघात और गुदाभ्रंश रोगोंमें उपयोगी है। इसका तेल वेदना को दूर करनेवाला और ज्वरनाशक है। यह चोट, रगड़, जोड़ोंके दर्द, क्षयजनित ग्रन्थियाँ और चर्म रोगोंमें उपयोगी है।

डॉक्टर देसाईके मतानुसार देवदारु पसीना लानेवाला, मूत्रल, वायुनाशक और चर्म रोग नाशक है। केलोन के तेल का धर्म टरपेन्टाइन के समान ही होता है। मगर उससे यह कुछ कम प्रभावशाली होता है। यह एक उत्तम व्रणशोधक और व्रणरोपक पदार्थ है।

प्राचीन चर्मरोगों में केलोन का तेल खिलानेसे और उसको लगानेसे पुराने और दुर्गन्ध युक्त घाव भर जाते हैं। रक्तपित्तके रोगमें भी इससे लाभ होता है। सिर दर्दमें इसकी लकड़ी को पानीमें उबालकर कपाल पर लेप करते हैं। ज्वरमें फिर चाहे वह सूजन की वजहसे हुआ हो अथवा पुराने कफरोग की वजहसे हुआ हो देवदारु को देनेसे लाभ होता है। इससे पसीना छूटता है। पेशाब की मात्रा बढ़ती है। सूजन की कमी होती है और कफ की दुर्गन्ध मिटकर कफ कम हो जाता है। पुराने सन्धिवातमें इसके उपयोगसे बड़ा लाभ होता है। जलोदरमें देवदारु की लकड़ी, अपामार्ग और शेगटा की जड़ की छाल, तीनों को छ-छ माशा की मात्रामें गौमूत्रके साथ पीसकर देनेसे पेशाबके जरिये पेट का संचित पानी निकला जाता है और रोगी को शान्ति मिलती है।

कोमानके मतानुसार यह औषधि मूत्रल, शांतिदायक और ज्वरनाशक तत्वोंसे परिपूर्ण मानी जाती है। पेशाब सम्बन्धी अव्यवस्था को भी यह दूर करती है।

उपयोगः—

पारे का उपद्रव—देवदारु का तेल पिलानेसे पारे का उपद्रव, बिगड़ा हुआ खून और दूसरे चर्म रोग मिटते हैं।

सिर दर्द—देवदारू की लकड़ी को पानीके साथ घिसकर कनपटियों पर लेप करनेसे सिर दर्द बन्द होता है।

गल गण्ड—देवदारु और इन्द्रायन को पीसकर लेप करनेसे कफ की वजहसे पैदा हुआ गल गण्ड आराम हो जाता है।

सीने का दर्द—इसके २ माशे चूर्ण को ५ माशा गुड़में मिलाकर गोली बनाकर देनेसे सीनेका दर्द आराम हो जाता है।

अण्डवृद्धि—इसके क्वाथमें गोमूत्र मिलाकर पिलानेसे अण्डवृद्धि मिटती है।

श्लीपद—इसको चित्रकके साथ पीसकर लेप करनेसे और गायके मूत्रके साथ पीनेसे फीलपांव आराम होता है।

नेत्र रोग—इसके चूर्ण को बकरीके पेशाबमें भिगोकर सुखाकर, गायके घी के साथ खानेसे आंख की बिमारियां आराम होती हैं।

मात्रा—इसके चूर्ण की मात्रा ३ माशेसे ६ माशे तक और तेल की मात्रा १ माशे से २ माशे तक है।

देशी बादाम

नाम—

हिन्दी—देशी बादाम, हिन्दी बादाम। गुजराती—बदाम नीली, देसी बदाम। दक्षिण—हिन्दी बदाम। मराठी—बंगाली बादाम, हिरानी बदाम, नट बदाम। बंगाल—बंगाली बादाम। अंगरेजी—Indian Almond। लेटिन—Terminalia Catappa (टर्मिनेलिया केटेपा)।

वर्णन—

यह एक मध्यम कद का करीब २५ मीटर ऊंचा वृक्ष होता है जो लगाया जाता है।

इसके पत्ते बड़े, फल छोटे और पकने पर किरमची रंगके होते हैं। इनकी मगज बड़ी रहती है। इस मगजमें से तेल निकाला जाता है। जो २८ से लेकर ५० प्रतिशत तक निकलता है। यह फीके पीले रंगका गंध रहित असली बदामके तेलके समान होता है। इसका स्वाद असली बादामके तेलसे अच्छा होता है और यह बहुत दिनों तक खराब नहीं होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे इसका फल खट्टा, मीठा, कसेला, शीतल, मलरोधक, कामोत्तेजक, पित्त नाशक, और ब्रोंकाइटीजको दूर करने वाला होता है।

देशी बादामका तेल मालिश करनेसे कांतिको बढ़ाने वाला, बालों को मजबूत करने वाला और पौष्टिक होता है। इस वृक्षकी छाल संकोचक होती है। इस बादाममें विदेशी बादामकी अपेक्षा पौष्टिक तत्व कम होते हैं।

इसकी छालका काढ़ा सुजाक और प्रदरमें लाभदायक होता है। इस काढ़ेसे व्रणोंको धोनेसे व्रण जल्दी भर जाते हैं। इससे कुल्ले करनेसे मुंहके छाले मिट जाते हैं।

दक्षिणी भारतमें इसके ताजे पत्तों के रससे एक प्रकारका मलहम बनाया जाता है जो गीली खुजली, कुष्ट और दूसरे चर्मरोगों पर लगाया जाता है।

फ्रेंच गायनामें इसकी जड़की छाल अतिसार और प्रवाहिकामें संकोचक द्रव्यकी तरह दी जाती है। इसकी छाल का काढ़ा पित्त ज्वरको दूर करनेके लिये दिया जाता है। इसके पत्ते चमड़ेको मुलायम करने वाले लेपोंमें मिलाये जाते हैं।

इसकी छालमें हलके मूत्रल और हृदयको बल देनेवाले पदार्थ रहते हैं।

दोदन

नाम :—

पंजाब—दोदन। उरिया—इटा। लेटिन–Sapindus Mukorassi(सेपिंडस मुकोरसी)।

वर्णन—

यह अरीठेकी ही उपजातिका एक वृक्ष है। इसके पत्ते, फूल और फल सब अरीठे ही के समान होते हैं। यह वृक्ष विशेष कर पंजाबमें पैदा होता है।

गुणदोष और प्रभाव

इस वृक्षके फलका उपयोग बिलकुल अरीठेके ही समान होता है। अरीठेका पूरा उपयोग इस ग्रंथके पहले भागमें देखिये।

दोड़क

नाम—

पंजाब-दोड़क। पटना तितलिय। गुजराती—दुधालो सोनकी। तेलगू—रत्रिंत। बम्बई—महानारा। लेटिन—Soncus Oleraceus (सोनकस ओलिरासियस)।

वर्णन—

यह वर्ष जीवी क्षुद्र वनस्पति खेतों, और उपजाऊ भूमिमें पैदा होती है। इसके पीले रंगके बहुत फूल लगते हैं। इसकी डालियों को तोड़नेसे एक प्रकारका दूध निकलता है। इस वनस्पति पर छोटे २ कांटे भी रहते हैं। इसके कोमल पत्ते खानेके काममें आते हैं। इस वनस्पति का पंचांग और इसका सुखाया हुआ दूध औषधि प्रयोगमें काममें आता है। यह वनस्पति सारे भारत वर्ष और सीलोनमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की क्रिया यकृत, ग्रहणी और बड़ी आन्तके ऊपर प्रधान रूपसे होती है। यह तक तीव्र विरेचक वस्तु है। वाष्पीकरण क्रियाके द्वारा इससे बनाया हुआ गोंद अथवा इसका सुखाया हुआ दूध २ से ४ ग्रेनकी मात्रा में दिया जाय तो तीव्र विरेचक का काम करता है। यकृत व पेटसे लगे हुए आंन्त के हिस्से पर और आन्तके आखरी हिस्से पर इसका असर बहुत प्रभावशाली होता है। साधारण तया इसके गुणों की तुलना इलेटेरियम (Elaterium) से की जाती है। जलोदर और शरीरमें संचित पानी को दूर करने के लिये इसका प्रयोग करते समय बहुत सावधानी की जरूरत है। क्योंकि यह सनाय की तरह पेट में काट करता है और एलुए की तरह पेटमें जलन पैदा करता है।

बंगाल में इसकी जड़ का शीत निर्यास पौष्टिक, शांतिदायक और ज्वर नाशक पदार्थ की तरह दिया जाता है।

इंडो चायनामें इसके डण्ठल का उपयोग पौष्टिक और निद्रा कारक वस्तु की तरह किया जाता है। घावों को साफ करने के उपयोगमें भी यह लिया जाता है।

इस वनस्पति का काढ़ा उदर रोग, यकृत रोग और पाचन नलिकाके जीर्ण रोगोंमें दिया जाता है। इसको दूसरे सुगन्धित पदार्थों के साथ मिलाकर देते हैं। इससे शुरू शुरू में दस्तें लगती हैं मगर अन्तमें लाभ होता है।

दोधरी

वर्णन—

संथाल—दो धरी। लेटिन—Cheilanthes Tenuifolia (चिलेंथस टिनुइफोलिया)।

वर्णन—

यह एक वर्षजीवी वनस्पति है। इसके पत्ते अण्डाकार और तीखी नोक वाले होते हैं। इसकी मञ्जरी बैंगनी और काले रंग की होती है। इसकी वेल बहुत फैलने वाली होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

संथाल लोग इसकी जड़ को दूसरी औषधियों के साथ अथवा अकेले ही भूत बाधा को दूर करने के काम में लेते हैं।

दोपातीलता (मर्यादलता)

नाम :—

संस्कृत—मर्यादा, मन्मथा, मारवल्ली, रक्त पुष्पा, सागर मेखला, युग्मपत्रा। हिन्दी—दोपातीलता, मर्यादवेल। बंगाल—छागल कुरी। गुजराती—आरवेल, मर्याद वेल, दरियावेल। मराठी—मर्याद वेल। तेलगू—वला वण्डिटिगे। तामील—अदम्बु, अदप्पन गोडी। अंग्रेजी—Goats foot creeper, Sand Binding Creeper, । लेटिन—Ipomoca Bilolba (इपोमोइया विलोबा)।

वर्णन :—

इस वनस्पति की वेल होती है। इसकी वेलें सौ सौ फुट लम्बी होती हैं। इसके पत्ते आसुन्दरे (Bauhinia Racemosa) के पत्तों के समान होते हैं। ये चिकने, चमकदार

और मोटे होते हैं। फूल गुलाबी और बैंगनी रंगके बड़े बड़े घण्टाकार होते हैं। फल गोलाई लिये हुए अणीदार होते हैं। हर एक फल में ४ खण्ड रहते हैं। एक एक खण्ड में एक एक बीज होता है। ये बीज काले, मखमली बालों के रुओंसे आच्छादित और सख्त होते हैं। यह वनस्पति समुद्रके रेतीले किनारों पर ऐसे स्थानों पर पैदा होती है जहां दूसरी वनस्पतियां पैदा नहीं होतीं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत से दोपाती लता शीतल, मलरोधक, सारक, भारी, पचनेमें चरपरी, वात कारक और हैजा, शूल, वमन और आमको दूर करती है।

इसके सेवनसे वन्ध्यत्व दूर होता है। जलोदरपर इसके रसको पिलानेसे और लगानेसे लाभ होता है। इसके पत्तों को पीसकर फोड़े-फुन्सी और गठानों पर बांधने से या तो वे फूट जाते हैं या बैठ जाते हैं। कार बंकल या पाठे की बीमारी में भी इसके पत्ते फूल और जड़ को पीसकर कुछ नमक डालकर बांधने से लाभ होता है।

सन्धि वात पर इसके पत्तों को पीस कर लेप करने से फायदा होता है। जलोदर में इसका रस मूत्रल औषधि की तरह दिया जाता है और साथ ही इसके पत्तों को कुचल कर जलोदर की जगह पर बांधा भी जाता है।

मेडागास्कर में इसके पत्ते टांगों की सूजन, गुदा भ्रंश, उदर शूल, अंगुली पर होने वाली विद्रधि और गठिया पर बहुत उपयोगमें लिये जाते हैं।

कम्बोडियामें इसका पौधा सुजाक, मूत्रकच्छ्र और बवासीर में दूसरी औषधियों के साथ काम में लिया जाता है।

रासायनिक विश्लेषण—इस वनस्पतिके सब भागोंमें काफी गोंद पाया जाता है। इसकी जड़ और डालियोंको तोड़नेसे एकप्रकारका पीला और चिकना दूध निकलता है। इस दूधका सुखाया हुआ चूर्ण मृदुरेचक पदार्थका काम करता है। इसके अतिरिक्त इस लतामें अनेक प्रकारके सामुद्रिक क्षार और स्नेहन (चिकने) पदार्थों का उत्तम मिश्रण पाया जाता है। इसकी जड़ोंकी रासायनिक क्रिया, अनन्त मूल या चोबचीनीके समान होती है।

मात्रा—इसके सुखाये हुए दूधकी मात्रा ५ से ६ रत्ती तक, बेलके स्वरसकी मात्रा ६ माशे से १ तोले तक और इसकी जड़के चूर्णकी मात्रा ३ माशेसे ६ माशे तक होती है।

दौना

नाम—

संस्कृत—अग्निदमनक, बहुकंटका, दमन, ब्रह्मजटा, पुण्डरीक, देवशेखर, फुल्लपत्रक, इत्यादि। हिन्दी—दौना। बंगाल—दौना। बंबई—दौना। गुजराती—डमरो। मराठी—दौना, रानदौना। लेटिन—Artemisia Sieuersiana. (आर्टिमीसिया सेवरसियाना)।

वर्णन—

यह अफसंतीनकी जातिकी एक वनस्पति है। इसके क्षुप छोटे छोटे बालिश्त, डेढ़ बालिश्तके करीब ऊँचे होते हैं। इसके पत्ते अत्यन्त सुगन्धित और रूएँदार होते हैं। इसके फूल छत्तोंकी तरह लगते हैं। काश्मीरमें इस वनस्पतिकी खेतीकी जाती है। इसकी एक जंगली जाति होती है। जो पश्चिमी हिमालयमें आठ हजारसे दसहजार फीटकी ऊँचाई तक पाई जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे दौना कसेला कड़वा, हृदयको लाभदायक, वीर्यवर्धक और सुगंधित होता है। इसका सेवन करनेसे विष, कोढ़, रुधिरविकार, चर्मरोग और त्रिदोषका नाश होता है।

राजनिघंटके मतानुसार दौना, शीतल, कड़वा, कसेला, चरपरा तथा त्रिदोष, विष और विस्फोटकको नष्ट करनेवाला है।

जंगली दौना वीर्यस्तम्भक, बलदायक और आमदोषनाशक है।

अग्निदौना गरम, चरपरा, रूखा, अग्निदीपक, रुचिकारक, हृदयको हितकारी तथा वात, कफ, गुल्म और प्लीहाको दूर करनेवाला होता है।

यूनानीमत—यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है। किसी २ के मतसे यह गरम और तर है। कोई २ इसे समशीतोष्ण मानते हैं। यह कृमिनाशक, कामोद्दीपक और ऋतुश्राव नियामक है। हृदय और मस्तिष्कको यह उत्तेजना देता है। पीलिया, जलोदर, गठिया जोड़ोंका दर्द और पेट, यकृत तथा रक्तके रोगोंमें यह लाभदायक है। गुल्मवायुमें भी यह गुणकारी है। यह वनस्पति पौष्टिक, ज्वरनिवारक और कृमिनाशक होती है। वाह्यप्रयोगमें लिये जानेपर भी यह अपना कृमिनाशक गुण बतलाती है।

सिर दर्द और सीने तथा मेदेका दर्द जो कफसे पैदा हुआ हो उसको यह मिटाती है।

पेटकी वायुको नष्ट करके आफरेको दूर करती है। दिलको खुश करती है। तिल्लीको ताकत देती है। सूजनको विखेरती है। पेटके कीड़ोंको नष्ट करती है। मरे हुए बच्चेको पेटसे निकाल देती है। इसका काढ़ा पिलानेसे मासिक धर्म शुद्ध हो जाता है। इसका लेप बिच्छू और ततैयाके जहरको दूर करता है। इसके काढ़ेकी धार देनेसे जूएँ मर जाती हैं। इसके लेप से पसीना आना रुक जाता है। फोड़े, फुन्सी, कोढ़, खुजली और उपदंशमें भी यह लाभदायक है।

रासायनिक विश्लेषण—दौनेके अन्दर एक प्रकारका कड़वा द्रव्य, उड़नशील तेल और क्षार पाये जाते हैं। इसके पंचांगकी राखसे प्राप्त किये हुए क्षार को दमनक्षार कहते हैं।

डाक्टर देसाईके मतानुसार दौना कड़वा, दीपन, पाचन, पित्तानिस्सारक, वायुनाशक तथा ज्वर, खांसी और सूजनको नष्ट करनेवाला होता है। यह मूत्रल और गर्भाशयका संकोचन करने वाला है।

अग्निमांद्यके रोगमें दौनेका अर्क देनेसेअच्छा लाभ होता है। उदरशूलमें इसका चुटकी भर चूर्ण देनेसे वायु खारिज होकर उदरशूल मिट जाता है। पित्तद्रावी होनेकी वजहसे इसको खानेवालेके मलका रंग पीला होता है।

प्राकृत ज्वरमें दौनेकी फांट बनाकर देनेसे शरीरका दुखना कम होता है। पसीना छूटता है पेशाव होकर ज्वरका जोर हलका पड़ जाता है और रोगीको आराम मिलता है।

मासिकधर्मकी रुकावट और कष्टप्रद मासिकधर्ममें इसका अर्क देनेसे अच्छा लाभ होता है। पांडु रोगमें लोहभस्मके साथ दौनेको देनेसे अच्छा लाभ होता है। कफरोगमें दौने को देनेसे खांसीके त्रासकी कमी होती है और पाचन क्रिया सुधर जाती है। अडूसेके साथ इसका उपयोग करनेसे खांसीमें विशेष लाभ होता है।

दौनेका क्षार जलोदर, मूत्र पिंडोदर और हृदयोदरमें भी दिया जाता है। इससे पेशाव की मात्रा बढ़कर मूत्रपिंडके द्वारा पेटका संग्रहीत पानी निकल जाता है और सूजन कम हो जाती है।

मात्रा—इसके चूर्णकी मात्रा १॥ माशेसे ३ माशेतक, क्षारकी मात्रा ५ रत्तीसे १० रत्तीतक, फांटकी मात्रा २॥ तोलेसे ५ तोले तक और अर्ककी मात्रा ४ माशेसे ८ माशेतक है।

कर्नल चोपराके मतानुसार यह वनस्पति पौष्टिक, ज्वरनाशक, ऋतुस्रावनियामक और कृमिनाशक होती है।

दौना परदेशी

नाम:—

गुजराती—परदेशी दौना। मराठी—दौना। फारसी—अफसंतीन तुलबर, सारीकुन, शीह। लेटिन—Artemisia Persica, (आर्टिमिसिया परसिका)।

वर्णन—

यह वनस्पति पश्चिमी तिब्बतमें ६ हजार फीटसे १० हजार फीटकी ऊँचाई तक और अफगानिस्तान, तथा उत्तरी परसियामें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

कर्नल चोपराके मतानुसार यह वनस्पति पौष्टिक, ज्वरनिवारक और कृमिनाशक होती है।

धतूरा काला

नाम:—

संस्कृत—धुस्तूर, मदन, उन्मत्त, शिवप्रिय, महामोही, कृष्ण धतूरा, खरदूषण, शिवशेखर, उन्मत्तक, सविष, कनक, घंटापुष्प, महाशठ, इत्यादि। हिन्दी—धतूरा, काला धतूरा। बंगाल—धुतूरा, सादाधुतूरा। मराठी—धोत्रा। गुजराती—धतूरो, कालो धतूरो। अरबी—जंजेलमादिल। पंजाब—धतूरा, ततूर। तामील—उम्मत्तई, उमात्तई। तेलगू—दतूरम्। उर्दू—धतूरा। अंग्रेजी—Devilsapple, Devils Trumpet। लेटिन—Datura Stramonium (धतूरा स्ट्रेमोनियम)। D. Fastuosa (डी० फेस्टुओसा)।

वर्णन:—

यह एक क्षुप जाति की वनस्पति है। इसके पत्ते बड़े, डंखलयुक्त, नोकदार और अण्डाकृति होते हैं। इसका फूल घंटेके आकार का होता है। फूल का रंग बीचमें सफेद होता है। ये फूल पांच पँखड़ियोंवाले होते हैं। इसका फल गोल, कांटेदार और भीतर बहुत बीजों वाला होता है। इसकी ३ जातियां होती हैं। धतूरासफेद, धतूरा और काला धतूरा। इस वनस्पतिके सूखे पत्ते और बीज औषधि प्रयोगमें काममें आते हैं। इसके बीज कालापन लिये हुए भूरे रंगके, चपटे, खुरदरे और कड़वे होते हैं। इनमें गंध नहीं होती, मगर कूटने पर एक प्रकार की उग्र गन्ध आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—भाव प्रकाशके मतसे धतूरा नशीला, ज्वर को दूर करनेवाला, कुष्ट को नष्ट करनेवाला, कसेला, मीठा, कड़वा, जुएं और लीकों को मारनेवाला, गरम, भारी, तथा, व्रण, कफ, चर्मरोग, कृमि और विष को नष्ट करनेवाला है। यह शरीर की कांति, जठराग्नि और वात को बढ़ाता है।

राजनिघण्ट के मतसे धतूरा कड़वा, उष्ण, कांतिकारी तथा व्रण, चर्मरोग और ज्वरको दूर करता है। यह बहुत मादक है।

निघण्टुरत्नाकर के मतसे धतूरा कांति-कारक, गरम, चरपरा, अग्निदीपक, कसेला, मधुर, कड़वा, मदकारक, भारी और कुष्ट, व्रण, कफ, ज्वर, कंडू, कृमि, जूं, विष, पामा और त्वचा के रोगों को नष्ट करता है। सब प्रकारके धतूरामें काला धतूरा गुणोंमें श्रेष्ठ होता है।

धतूरा, वेदनानाशक, संकोच विकास प्रतिबन्धक, खांसी और दमे को दूर करनेवाला, पार्यायिक ज्वरों को नष्ट करनेवाला और बड़ी मात्रामें एक घातक विष है। जिन लोगों की प्रकृति नशे की आदी होती है उन लोगोंके लिये यह एक वाजिकरण वस्तु है।

श्वास नलिकाके संकोच विकास प्रधान रोगोंमें, धतूरे की उपयोगिता बहुत बढ़ीचढ़ी है। श्वास नलिका की सूजन, दमा और दोनों फेफड़ोंके रोगोंमें इसका बहुत उपयोग होता है। ऐसे रोगोंमें यह खिलाया भी जाता है और इसके पत्तों को चिलममें रखकर इसका धूम्रपान भी कराया जाता है। इसका धूम्रपान करनेसे जंभाइयां आती हैं, जी घबराता है और उल्टी आने सरीखी स्थिति हो जाती है। जिसका परिणाम यह होता है कि कफ छूटकर गिरने लगता है। श्वासनलिका की संकुचित होने की शक्ति कम हो जाती है और दमे की घबराहट बन्द हो जाती है। श्वास नलिका की सूजनमें भी घबराहट की कमी करनेके लिये इसका उपयोग किया जाता है।

बारीसे आनेवाले मलेरिया ज्वरमें धतूरेके बीजों का चूर्ण दहीके साथ ज्वर आनेके पहिले दिया जाता है। इससे मलेरिया ज्वर में ठंड चढ़ने को वजहसे होनेवाला कष्ट, ज्वर चढ़नेके बाद शरीरमें पैदा होनेवाली जलन, अंगों का दुखना, और सिर दर्द कम हो जाता है। इस वनस्पतिसे मलेरिया ज्वर जड़से नहीं जाता मगर उससे होनेवाली पीड़ा कम हो जाती है।

उदारशूल, पित्ताश्मरी शूल और मूत्र पिण्डके शूलमें भी धतूरा दिया जाता है। मगर इन कामोंमें अफीम और खुरासानी अजवायन धतूरे की अपेक्षा विशेष उत्तम होते हैं।

सूजनके ऊपर धतूरेके पत्तों का लेप करनेसे अथवा इसकी जड़ को गौमूत्रमें औटाकर

लगानेसे सूजनका कष्ट कम हो जाता है। कभी २ सूजन उतर भी जाती है। धतूरेके लेपमें शिलाजीत को मिलाकर, उस मिश्रण का लेप करनेसे अण्डकोष की सूजन, पेटके अन्दर की सूजन, फुफ्फुसके पर्द्दे की सूजन, संधियों को सूजन और हड्डियों की सूजनमें बड़ा लाभ होता है। स्तनों की सूजन और बवासीर की सूजन में इसके पत्तों को गरम करके बांधनेसे शान्ति मिलती है।

पागल कुत्ते का विष और धतूरा—

डाक्टर नाडकरनी अपनी इण्डियन मटेरिया मेडिका नामक पुस्तक में लिखते हैं कि पागल कुत्ते के विषमें धतूरा एक लोकप्रिय औषधि है। परन्तु हड़काव पैदा होने के पश्चात् उसको दूर करनेमें यह उतनी सफल नहीं है जितनी कि हड़काव पैदा होनेके पहिले उसको रोकने के लिये यह सफल है। अक्सर देखा जाता है कि पागल कुत्ते के काटनेके करीब ४० दिन बाद हड़काव पैदा होता है। इसलिये उसके पहिले अर्थात् कुत्ता काटने के १५ से २५ दिन के अन्दर इसका उपयोग करना चाहिये। १५ दिन के बाद प्रातःकाल भूखे पेट रोगी को करीब आधा तोला लकड़ीके कोयले का चूर्ण दिया जाता है। उसके आधे घण्टे बाद १ औंस काले धतूरे के पत्तों का रस पिलाया जाता है। वमन के द्वारा वह रस निकल न जाय इसलिये रस पिलानेके साथ ही तुरन्त ताड़का रस या ऐसी कोई वमन नाशक मीठी चीज पिलाई जाती है और फिर रोगी को बांधकर चार पांच घण्टे धूप में रखा जाता है। जिससे रोगी धीरे धीरे पागल होता हुआ चला जाता है और पागल कुत्तेके मुआफिक चरित्र करने लगता है। इस समय उसके सिर पर कई घड़े भर कर ठण्डे पानी की धार लगाई जाती है। इससे रोगी अधिक तूफान करने लगता है। कुछ देरके बाद होशमें आकर वह पानी डालने के लिये विरोध करता है और गुस्सा प्रकट करता है। ऐसा करने पर पानी डालना बन्द करके रोगी को चने, रींगणे या ऐसा ही कोई हलका पथ्य खिलाना चाहिये। इस प्रकार चिकित्सा करने से रोगी हड़काव के डर से मुक्त समझा जाता है। लेकिन इसके बाद भी उसको कुछ दिनों तक हलका पथ्य देना चाहिये।

हड़काव पैदा होनेके पश्चात भी एक रोगी की चिकित्सा की गई थी। जिसमें रोगीके सिरके तालू के बालों को निकाल कर ब्रम्हाण्ड की जगह चीरा लगाकर कुछ खून निकाल दिया गया था और उस स्थान पर काले धतूरेके पत्तों को बारीक पीस कर लगाया गया था। और ऊपर के तरीके से रस पिलाया गया था जिससे रोगी को आराम हो गया था।

मिस्टर नाडकरनी लिखते हैं कि ऊपर बतलाई हुई उपचार पद्धति आर्य वैद्यों के द्वारा अनुभूत अनेक पद्धतियोंमें से एक है और दक्षिणी हिन्दुस्तान के एक सुप्रसिद्ध वैद्यने इसका स्वयं उपयोग किया है और दूसरों को भी इसका उपयोग करने की सलाह दी है।

सुश्रुत संहिता में भी पागल कुत्ते के विष की उपचार पद्धतिमें एक प्रयोग दिया गया है, जिसका प्रधान अंग धतूरा है। वह प्रयोग इस प्रकार है :—

सरपंखेकी जड़ १ तोला, धतूरे की जड़ ६ माशा और एक आदमी खासके उतने साबित चांवल लेकर इन तीनोंको चांवलोंके धोवनके पानीमें आटेके समान वारीक पीसकर उसकी एक रोटी अथवा बाटी बना लेना चाहिये और उसके ऊपर धतूरेके पत्ते लपेट कर ऊपले कंडेकी धीमी आँचपर सेक लेना चाहिये। जिस मनुष्यको पागल कुत्तेने काटा हो उसको हड़काव पैदा होनेके पहिले अर्थात् कुत्ता काटनेके १० और २५ दिनोंके बीचमें चाहे जिस दिन वह रोटी या बाटी खिला देना चाहिये। जब यह बाटी पचने लगती है तब मनुष्य पागल कुत्तेके समान चेष्टाएं करने लगता है। उस समय उसको एक ऐसे घरमें जो ठंडा हो, मगर जिसमें पानी बिलकुल न हो बन्द करदेना चाहिये। जब उसकी सब चेष्टाएं शांत होजायं, तब उसे स्नान करवाके दूसरे दिन दूधके साथ सांठी चांवलका भात खिलाना चाहिये। अगर इस औषधिके प्रयोगसे पहिले ही दिन हड़कावके लक्षण पैदा न होजायँ तो ३ से लेकर ५ दिन तक उपरोक्त औषधि उपरोक्त मात्रामें ही अथवा उससे आधी मात्रामें खिलाना चाहिये। इतने समयमें हड़काव का विष कुपित होकर नष्ट होजाता है। पागल कुत्तेके काटे हुए मनुष्यको स्वाभाविक रीतिसे अगर हड़काव पैदा होजाय तो उस मनुष्यका बचना अत्यन्त कठिन हो जाता है। इसलिये जबतक हड़काव पैदा न हो उसके पहिले उपरोक्त औषधिके बलसे अगर हड़काव पैदा कर दिया जाय तो उस रोगीके विष मुक्त होनेकी सम्भावना होजाती है। सिर्फ हड़काव को दूर करनेके लिये ही धतूरे को इतनी बड़ी मात्रा में दिया जाता है। दूसरे रोगों में इसके बीजों की मात्रा पाव रत्तीसे आधी रत्ती तक और पत्तों की मात्रा १ रत्ती तक होती है।

धतूरा और दमेका रोग—

खांसी और दमेके रोगमें धतूरा दूसरी सब औषधियों की अपेक्षा उत्तम औषधि है। श्वास नलिका की श्लेष्म त्वचाको शिथिल करके यह दमेकी पीड़ा को दूर करता है। इसलिये खांसी की बहुतसी दवाएं इसके रसमें घोट कर गोलीके रूपमें बनाई जाती है। फिर भी इसका विशेष लाभ इसकी बीड़ी बनाकर इसका धूम्रपान करनेसे ही होता है। दमेका चाहे जैसा उग्रवेग चढ़ा हुआ हो वह भी इसके पत्तोंकी बीड़ी बनाकर पीनेसे तत्काल शांत हो जाता है श्वासको दूर करनेके लिये और उसके उपद्रव पूर्ण वेगको कम करनेके लिये धतूरेके समान औषधि शायद ही कोई दूसरी हो *

* नोटः—आज कलकी नवशोधित वनस्पतियोंमें एफिड्रा व्हलगेरियस (असमानिया) मे पाया जानेवाला एफिड्रिन नामक तत्व दमेके रोगको रोकनेके लिये धतूरेसे भी अधिक प्रभाव शाली होता है। इसका वर्णन इस ग्रन्थके पहिले भागमें देखना चाहिये।

किसी विशेष प्रकृति वाले व्यक्तिको चाहे इससे फायदा न हो मगर आमतौरसे शत प्रतिशत व्यक्तियों को इससे लाभ होता हुआ देखा जाता है।

इसके आधे सूखे हुए पत्तोंके टुकड़ों को ४ रत्तीकी मात्रामें लेकर कागजमें रखकर बीड़ी बनाकर रोगीको पिलानेसे १० मिनिटमें दमेका दौरा शांत होजाता है। अगर १० मिनिटमें शांत न हो तो अधिकसे अधिक १५ मिनिट तक राह देखकर दूसरी बीड़ी पिलाना चाहिये। अगर दो बीड़ियों से भी शांति न हो तो फिर उसको तीसरी बीड़ी नहीं पिलाना चाहिये। समझ लेना चाहिये कि उस रोगीके लिये धतूरा उपर्युक्त नहीं है। जिन रोगियों की प्रकृतिको धतूरा अनुकूल नहीं होता है उनको इस बीड़ीके पीते ही सिरमें चक्कर, गलेमें जलन और मुंहमें खुश्की पैदा होजाती है। ऐसे चिन्ह मालूम पड़ने पर रोगीको धतूरा नहीं पिलाना चाहिये। जिन लोगोंको यह अनुकूल भी होजाय उनको भी बहुत जरूरत पड़ने पर ही इसका उपयोग करना चाहिये। हमेशा इसका उपयोग करनेसे इसका व्यसन पड़ जाता है और उसके बाद इससे किसी प्रकारका लाभ नहीं होता। दमेका वेग चढ़नेके ३।४ घंटे बाद इस बीड़ीके पीनेसे जैसा चाहिये वैसा लाभ नहीं होता है। इसलिये दौरा शुरू होनेके साथ ही इस बीड़ीको पीना चाहिये और उस बीड़ी को धीरे २ न पीकर २।३ फूंकों में ही पूरी करदेना चाहिये। पहली फूक लेनेके साथ ही छातीमेंसे चिकना कफ छूटना आरम्भ हो जाता है और छाती हलकी पड़ जाती है। पत्तोंकी अपेक्षा इसके बीजोंका असर चौगुना होता है। इसलिये जिन लोगोंको पत्तोंसे लाभ नहीं होता उनको इसके बीजोंका चूर्ण चिलममें रखकर पिलाया जाता है।

जिन लोगोंको हृदयसे सम्बन्ध रखने वाली कोई बीमारी हो अथवा जिनके मुंहपर अथवा आंखोंके आसपास सूजन आरही हो उनको भूलकर भी इस प्रयोगको न करना चाहिये।

धतूरा और उपदंश

काला धतूरा, तुलसी, कसोंदी, पुनर्नवा, वेल, भांगरा, पीपर, अडूसा, बाबची, पवाँर, तलवणी और मकोय। इन सब वनस्पतियोंके रसमें और आंकड़ेके दूधमें अलग २ एक हाथ लंबे और एक हाथ चौड़े मलमलके कपड़े को तीन २ बार भिगोकर धूपमें सुखा लेना चाहिये। फिर ४ तोला शुद्ध आमलासार गंधक का चूर्ण लेकर उसको ४ तोले घीमें खरल करके उस कपड़े पर लेप करदेना चाहिये। फिर उस कपड़ेको गोल मोड़ कर उसकी मोटी बत्ती बना लेना चाहिये। इस बत्तीका १ मुँह चिमटेसे पकड़कर नीचेके मुँहमें आग लगा देना चाहिये और नीचे चीनीकी एक बड़ी रकाबी रख देना चाहिये उस बत्तीमें से लाल रंग का चूआ टपक २ कर उस रकाबीमें इकठ्ठा होगा। उस चोये को एक शीशीमें भर लेना चाहिये। प्रतिदिन सवेरे और शाम इसमेंसे ४ रत्ती चोया लेकर उसको नागरवेल के पान पर रखकर उसमें तीन रत्ती विधिवत् शुद्ध किये हुए पारे को डालकर उंगलीसे खूब मलना चाहिये। जब वह पारा और चोया एक जीव हो

जाय तब उस पान की बीड़ी बनाकर खा जाना चाहिये। पथ्यमें सिर्फ दूध और चावल खाना चाहिये। दूसरी सब चीजें छोड़ देना चाहिये। पानी भी जहाँ तक बने वहां तक बहुत कम पीना चाहिये। अगर बारम्बार प्यास लगे तो उसको दूध पीकर बुझाना चाहिये।

जंगलनी जड़ी बूटीके लेखक लिखते हैं कि इस कठिन पथ्यके साथ अगर इस औषधि को नियमपूर्वक १५ दिन तक ले ली जाय तो उपदंश या गर्मी और उससे पैदा होनेवाले श्वास, खांसी, भगन्दर, कण्ठमाल, संधिवात, इत्यादि अनेक प्रकारके रोग नष्ट होते हैं।

धतूरा और चर्मरोग—

चर्म रोगोंके अन्दर भी धतूरा बहुत लाभदायक है। चमड़ेके अन्दर रहनेवाले जन्तु, धतूरेके स्पर्श से नष्ट हो जाते हैं। पारा, गंधक, नीला थूथा और हरताल इन चारों वस्तुओं को समान भाग लेकर खरलमें अच्छी तरहसे घोटना चाहिये। फिर धतूरेके हरे फलोंमें इस कजली को भरकर कपड़मिट्टी करके ऊपले कण्डों की आगमें डाल देना चाहिये। जब वह कपड़मिट्टी पककर लाल हो जाय तब उसको निकालकर धतूरे के फलों के साथ ही भीतर की सब दवा को तेलमें घोट लेना चाहिये। इस मिश्रण को खसरा और खुजली पर लगानेसे बहुत जल्दी लाभ होता है।

धतूरा और वाजीकरण—

धतूरेमें एक प्रकार का मादक और वीर्यस्तम्भक गुण रहने से कामी पुरुषोंके लिये भी यह एक उपयोगी वस्तु है। इसके लिये धतूरेके १५ फलों को बीज समेत लेकर उनका बारीक चूर्ण करके २० सेर दूध में उस चूर्ण को डालकर उस दूध का दही जमा लेना चाहिये। दूसरे दिन उस दही को विलोकर उसमेंसे घी निकाल लेना चाहिये। इस घी को १ रत्ती की मात्रामें पानमें रखकर खानेसे यह अपना कामोत्तेजक असर बतलाता है और इसको कामेन्द्रिय पर मलनेसे उसकी शिथिलता को दूर करता है।

रासायनिक विश्लेषण—

धतूरे (Dattura Stramonium) में पाये जानेवाले उपक्षार इसके उत्पत्ति स्थानके अनुसार कम ज्यादा होते हैं। ये .४१ से लेकर .६५ प्रतिशत तक पाये जाते हैं। इनमें Hyoscyanine और Hyoscine नामक उपक्षार २:१ के अनुपातसे पाये जाते हैं। इनमें एट्रोपीनकी भी कुछ मात्रा रहती है। इसके फलोंमें .१ प्रतिशत उपक्षार पाये जाते हैं जिसमें खास करके इसमें "हीओसिन" की मात्रा ही विशेष रहती है। इसके पत्ते और बीज फरमाकोपिया आफ इण्डियामें सम्मत माने गये हैं। ये टिंचर और प्लास्टर तैयार करनेके काममें

लिये जाते हैं। इसकी दोनों जातियोंमें नींद लाने और शूलको नष्ट करनेके गुण उपस्थित हैं। और ये स्नायुशूलमें मुफीद और आक्षेपनिवारक होते हैं। इसके पत्तोंकी सिगरेट बनाकर दमेकी बीमारीमें धूम्रपान करनेके काममें लेते हैं।

धतूरा स्ट्रेमोनियमसे तैयारकी हुई चीजोंकी मांग बाहर अधिक रहती है। यह सिगरेट बनाने, बफारा और सेक करने और दूसरे चूर्ण तैयार करनेमें बहुत उपयोगी है। दमेकी बीमारी पर यह विशेषरूपसे उपयोगी है। यह वनस्पति इसकी उपचारिक उपयोगिताकी दृष्टि से ही अमेरिकामें विशेप प्रकारसे पैदाकी जाती है। भारतमें स्वाभाविक रूपसे इसकी इतनी पैदाइश होते हुए भी स्ट्रेमोनियमसे तैयारकी हुई चीजें और इसमें पाये जानेवाले उपचार विदेशोंसे यहां मँगाये जायँ यह कितने दुर्भाग्यकी बात है।

टी० एन० घोपके मतानुसार कानके दर्दमें इसके पत्तोंका १ या २ दो बूंद ताजा रस कानमें टपकानेसे बहुत लाभ होता है। इसके ताजे पत्तोंका रस या इनका पुल्टिस कष्ट युक्त सूजनमें, नेत्ररोगोंमें और कर्णरोगोंमें बहुत मुफीद है।

मैसूरमें इसके पत्तोंका रस सुजाककी बीमारीमें जमे हुए दूधके साथ दिनमें १ वार दिया जाता है।

सीलोनमें इसकी जड़ें पागल कुत्तेके काटने पर काममें ली जाती हैं। ये पागलपनको दूर करती हैं। इस सारे वृक्षको सुखाकर पीसकर उसका धूम्रपान तम्बाकूकी तरह दमेको दूर करनेके लिये किया जाता है।

सुबोधवैद्यकके मतानुसार इसके पत्तोंको पीसकर उसकी लुग्दी बनाकर बिच्छूके काटे हुए स्थान पर लगानेसे शान्ति मिलती है।

मलायामें इसके पत्ते प्रायः सभी लोगोंके द्वारा श्वासकी बीमारीमें काममें लिये जाते हैं। किन्तु यह बात खयालमें रखने योग्य है कि वहां के लोग इसका अन्तः प्रयोग बहुत ही कम करते हैं। वे इन पत्तों को शराबके साथ या पीसे हुए चांवलों के साथ मिलाकर कई प्रकारकी सूजन और दर्द पर लेप करते हैं। इन पत्तों को गरम करके एक प्रकारका पुल्टिस तैयार किया जाता है। इस पुलटिसको पार्यायिक ज्वरोंमें तिल्ली पर बांधते हैं। दांतोंका दर्द कम करनेके लिये इसकी जड़को पीसकर मसूड़ों पर मलते हैं। इसके पत्तों और फलोंको सुखाकर उनकी सिगरेट बनाकर दमेके रोगियोंको पिलाते हैं।

इसके हरे फलको पीसकर सांघातिक फोड़ों पर लगानेके काममें लेते हैं। इसके गरम पत्ते गृध्रसी—वात (Scitioa) पर बांधनेके काममें लेते हैं।

गोल्ड कास्ट में इसके पत्तों को पीसकर तेलके साथ मिलाकर जहरीले कीड़ोंके दंशके

ऊपर उनका विप दूर करनेके लिये लगानेके काममें लेते हैं।

दक्षिण आफ्रिकाकी फिंगस (Fingos) और सोसस (Xosas) नामक जातियां सके पत्तों को प्रादाहिक स्थानों पर छाले उठानेके काममें लेती हैं।

यूरोपके अन्दर इसके पत्तोंको गरम करके कष्टयुक्त या प्रादाहिक सूजन वाले भागों पर बांधनेके काममें लेते हैं। इसके ताजा पत्तोंको गरम करके या इनका सत्व निकाल कर या इनकी भाफ़को आमवात व जोड़ोंके दर्दको दूर करनेके काममें लिया जाता है। यूरोपियन लोग इसके पत्तोंका एक मलहम तैयार करते हैं जो वहते हुए फोड़ों पर लगानेके काममें लिया जाता है। कुछ समय पहले इसके पत्तोंका पुल्टिस दुष्ट व्रणों पर लगानेके काममें भी लिया जाता था। श्वास और खांसीमें इसके पत्तों का धूम्रपान भी वहांके लोग करते हैं। खूनी बवासीरसे बहने वाले खूनको बन्द करनेके लिये भी वहांके निवासी इसको विशेष उपयोगमें लेते हैं। पानीमें इसके पत्तोंको उबालकर फिर उसका बफारा पीड़ित अंगोंपर दिया जाता है। इन पत्तोंका रस सिरकी गंज पर लगाया जाता है जो गिरते हुए वालोंको रोकता है।

मूल्लू लोग इसके पत्तोंको पीसकर मनुष्यों और जानवरों को चोट और रगड़ पर लगाते हैं। कष्ट दायक घावोंपर और पीबदार जख्मोंपर भी यह लगानेके काममें लिये जाते हैं। ऐसा खयाल किया जाता है कि ये मवादको निकालकर प्रदाहको कम कर देते हैं।

यूनानी मत—यूनानी मतसे धतूरा मस्तिष्कमें सुस्ती पैदा करने वाला, निद्राजनक और पित्त की तेजीसे होनेवाले सिर दर्द को दूर करनेवाला है। यह सूजनको पकाकर बिखेर देता है। खराब दोषोंको सुखा देता है। स्तम्भन पैदा करता है, पाचक है, वमन लाता है, कफकी बुखार, कोढ़, फोड़े फुन्सी और पेटके कीड़ों को नष्ट करता है। इसके रस को पिलानेसे पागल कुत्ते का विप शांत होता है। दूसरे जहरीले जानवरोंके विष पर भी यह लाभ पहुँचाता है।

दमें की बीमारीमें इसके पत्तों का चुरट बनाकर दौरेके वक्त रोगी को पिलाया जावे तो दमे का दौरा फौरन रुक जाता है। लेकिन बीमार कमजोर हो तो नुकसान पहुँचता है। धूम्रपानके लिये ५ रत्ती से १० रत्ती तक इसके पत्ते रखना चाहिये। अगर इससे मुंह सूखने लगे, सिर घूमने लगे और आंख की पुतलियां फैल जायं तो इसको लेना बन्द करदें। इस बीमारीमें इसका सत और टिंचर खिलाना भी लाभदायक होता है। पुरानी खांसीमें कमजोर आदमियों को जब साँस लेने में मुश्किल हो तब इसका टिंचर १० मिनिम की मात्रामें दूसरी दवाओंके साथ देना चाहिये। जोड़ोंके दर्दमें इसका सत आधी ग्रेन की मात्रामें दिनमें ३ बार देनेसे लाभ होता है। कष्टप्रद मासिक धर्ममें भी यह लाभदायक है। नारू की बीमारीमें इसके पत्तों का पुल्टिस बांधनेसे बहुत शांति मिलती है। धतूरेके ताजा पत्तों को कुचलकर आधे पौंड

की मात्रामें लेकर २ पौंड चर्बीमें मिलाकर हलकी आंच पर गरम करना चाहिये। जब पत्ते जल जायँ तब उसको छान लेना चाहिये। यह मलहम कारबंकल और दूसरे जख्मों में बड़ा लाभ पहुँचाता है।

धतूरेके बीजों को १ मिट्टी के कूजेमें बंद करके कपड़मिट्टी करके आगमें रखदें। जब राख हो जाय तब निकाल करके १ रत्ती की मात्रामें पानीके साथ मलेरिया ज्वरके रोगी को देनेसे लाभ होता है। कोई २ इसको ४ रत्ती की मात्रामें भी देते हैं। धतूरेके बीज ६ हिस्सा, रेवंदचीनी ४ हिस्सा, सोंठ २ हिस्सा और बबूल का गोंद २ हिस्सा। इन सब को मिलाकर मूँग के बराबर गोलिया बना लें। मोसमी बुखार आने से दो घण्टे पहिले २ गोली देने से ज्वर का जोर कम हो जाता है।

धतूरेके बीजोंसे पाताल यंत्रके द्वारा एक तेल निकाला जाता है। इस तेलको पैरके तलवों पर मालिश करके स्त्री सम्भोग करनेसे बहुत स्तम्भन होता है। धतूरेके पत्ते शरीरकी ऐंठन और दर्दको दूर करते हैं। इनको खिलाने और इनका लेप करनेसे गठियामें लाभ होता है।

धतूरेके विषका प्रभाव व उसकी शान्ति—

धतूरा एक विषैली वस्तु है। इसको अधिक मात्रामें लेनेसे बहुत तेज नशा होता है। शरीर सुन्न हो जाता है। आंखकी पुतलियां फैल जाती हैं। सब चीजें नीली नजर आती हैं। रोगीकी अक्ल गुम हो जाती है। उसके मगजमें खराब खयाल पैदा होते हैं। उसे चुहे और चींटियां नजर आती हैं और वह उनको पकड़नेका इरादा करता है। उसकी आंखें लाल हो जाती हैं और उसे सब दूर अन्धेरा मालूम होता है। उसकी हालत पागलों सी हो जाती है और वह इधर उधर भागने लगता है। इसके विषकी शांन्तिके लिये वमन करांना, हाथ पांवको गरम पानीमें रखना, शरीर पर गरम तेलकी मालिश करना, गरम और तर खाना खाना और शराब पीना मुफीद है।

उपयोग:—

उपदंश—इसकी सूखी जड़को २ चावलकी मात्रामें पानमें रखकर खिलानेसे उपदंश और उससे सम्बन्ध रखनेवाली सब बीमारियां आराम होती हैं।

सुजाक—इसके पत्तोंके रसको घी निकाले हुए दूधमें पिलानेसे सुजाकमें लाभ होता है।

कानके पीछेकी सूजन—इसके पत्तोंके रसको आगपर गाढ़ा करके कानके पीछेकी सूजन पर लगानेसे आराम होता है।

कामशक्ति की कमजोरी—धतूरेके बीज, अकलकरा और लौंग इन तीनों चीजोंकी गोलियां बनाकर खिलानेसे कामशक्ति बढ़ती है।

स्तनों की सूजन—धतूरेके पत्ते और हल्दी का लेप करनेसे स्त्रियोंके स्तन पर होनेवाली पित्त की सूजन बिखर जाती है।

ज्वर—इसके बीजोंके चूर्णको आधी रत्तीकी मात्रा में बुखार आने से पहले देने से बुखार छूट जाता है।

गर्भाधान—इसके फूलोंके चूर्ण को घी और शहद के साथ चटाने से गर्भाधान में मदद मिलती है।

धातुका बहना—धतूरेके बीज और काली मिरचीको पानीमें पीसकर, काली मिर्चके बराबर गोलियां बना लें। इसमेंसे एक एक गोली सुबह शाम सौंफके अर्कके साथ लेनेसे २१ रोजमें पुरानीसे पुरानी अनैच्छिक वीर्यश्रावकी बीमारी दूर हो जाती है। मगर खटाई और बादीकी चीजोंसे परहेज करना चाहिये।

क्षय—धतूरेके पत्तोंके स्वरसको १ रत्तीकी मात्रामें देनेसे क्षयमें लाभ होता है।

गठिया और हड्डीका दर्द—इसके पत्तोंका पुल्टिस या लेप करनेसे गठिया और हड्डीके दर्दमें लाभ होता है।

मिरगी और पागलपन—धतूरेका रस रोगीकी शक्तिके अनुसार देनेसे मिरगी और पागलपन में लाभ होता है।

दांतका दर्द—धतूरेके बीजोंको पीसकर गोली बनाकर दांतके सुराखमें रखनेसे दांतका दर्द मिट जाता है।

गठिया—धतूरेके तेलका लेप करनेसे गठिया और सूखी खुजलीमें लाभ होता है।

नारू—इसके पत्तों और चांवलोंके आटेको मिलाकर उसका पुल्टिस बांधनेसे नारू जल्दी निकल जाता है।

गर्भपात—धतूरेकी जड़को गर्भवती स्त्रीकी कमरमें बांध देनेसे गर्भपातकी शंका नहीं रहती।

दमा—धतूरा, तंबाकू, अपामार्ग और जवासा। इन चारों चीजोंको समान भाग लेकर चूर्ण बना लेना चाहिये। इसमेंसे २ चुटकी चूर्ण चिलममें रखकर पीनेसे दमेका दौरा बन्द हो जाता है।

नंबर २—कलमी शोरा १ भाग, सौंफ १ भाग, धतूरा २ भाग। इन सब चीजोंको कूटकर इनका धूम्रपान करनेसे दमेका दौरा रुक जाता है।

नंबर ३—धतूरा, काली चाय, शोरा और तम्बाकू समान भाग लेकर चूर्ण करके इस चूर्णकी बीड़ी बनाकर पीनेसे दमेका दौरा रुक जाता है।

बादीका दर्द—धतूरेके पंचांगका रस निकालकर उसको तिल्लीके तेलमें पचा देना चाहिये। इस तेल को मालिश कर के ऊपर से धतूरे के पत्ते बांध देने से बादी का दर्द मिट जाता है।

मुजिर—अधिक मात्रामें धतूरा विष है। यह अपनी बेहद खुश्कीकी वजहसे बदनको सुन्न कर देता है। सिरमें दर्द पैदा करता है तथा पागलपन और बेहोशी पैदा करके मनुष्यको मार देता है।

दर्पनाशक—धतूरेके विषको शांत करनेके लिये कपास के फूल और कपासके पत्ते बहुत मुफीद हैं। इनका शीत निर्यास देनेसे धतूरेका विष शांत हो जाता है। इसके अतिरिक्त दूध, मक्खन, सौंफ, काली मिरच, और शहद भी इसके दर्पको नष्ट करती है।

प्रतिनिधि—इसके प्रतिनिधि अजवायन खुरासानी, और सूची या अंगूर शेफा (एट्रोपा बेले डोना) हैं।

मात्रा—डॉक्टरोंके मतसे इसके पत्तोंके चूर्णकी मात्रा १ ग्रेनसे ३ ग्रेन तक, बीजोंके चूर्णकी मात्रा आधे ग्रेनसे १ ग्रेन तक और इसके सातकी मात्रा पाव ग्रेन तक है। यूनानी मतसे इसके बीजोंकी मात्रा ६ रत्ती तक है।

बनावटें:—

षड्गुण वालित सुवर्ण जारित पारद गुटिका—

शुद्ध सोनेके वर्क व शुद्ध पारदको समान भाग लेकर खरलमें डालकर नीबूके रसमें दोपहर तक घोटना चाहिये। जिससे पारा और सोना एक दूसरेके साथ मिलकर गोली बांधनेके काबिल होजायगे। इनकी गोली बना लेना चाहिये। फिर नीबूके रसमें सरगवाके पत्तोंको पीसकर उनकी कुलड़ी मूस बनाना चाहिये। इस कुलड़ीमें उस पारेकी गोलीको रखकर उस कुलड़ी का मुंह बन्द करके उसके ऊपर कपड़ा लपेट देना चाहिये। फिर एक मिट्टीकी हांडीमें कांजी भर कर, उस हाँडीके ऊपर १ लकड़ी रखकर उस लकड़ीसे उस कुलड़ीको दौलायंत्रकी तरह झूलती हुई बांध देना चाहिये। नीचे हलकी आंच जलाना चाहिये। इसको स्वेदन संस्कार कहते हैं और यह आठ दिन तक किया जाता है। मगर यह खयाल रखना चाहिये

कि प्रतिदिन भाफका कार्य पूर्ण होने पर हांडीमें से उस कुलड़ीको निकालकर ठंडी होने पर उसमें से उस पारेकी गोली को निकाल कर सरगवे के पत्तों की नई कुलड़ी में रखना चाहिये। मतलब यह कि प्रतिदिन भाफ देनेके काममें सरगवेकी कुलड़ी नवीन होना चाहिये। जब आठ दिन तक स्वेदन संस्कार पूरा होजाय तब १ मिट्टीकी वड़ी कुलड़ी लेकर उसमें नीचे चने और वेरके पत्तों की पीसी हुई लुग्दी रख देना चाहिये और उसके ऊपर काले फूलकी अपराजिता की जड़ और सफेद चन्दनका बुरादा भरकर उस बुरादे पर पारेकी गोली रखकर उस गोलीपर फिर अपराजिता और चन्दनका बुरादा दबाकर उसके ऊपर चने और वेरके पत्तोंकी लुग्दी रखकर हांडी को भर देना चाहिये। उस हांडीके मुंहपर जिसके वीचमें छेद पड़ा हुआ हो ऐसा ढकना रखकर चाक मिट्टी, लोहे का कीट, राख और मिट्टी इन चारों चीजोंको समान भाग लेकर उनको पानीके साथ खूब बारीक पीसकर इसकी लुग्दीसे उस हांडीकी दर्जों को बन्दकर देना चाहिये। उसके वाद उस हांडी पर कपड़ मिटी करके रेतीसे भरे हुए एक मिट्टीके ढीवरेमें रखकर उस ढीवरेको चूल्हेपर चढ़ा देना चाहिये और उस ढकनेके छेदमें से काले धतूरेके पंचागसे निकाला हुआ स्वरस डालते रहना चाहिये। इस प्रकार २१ वार उस रससे उस हांडीको भर कर वह रस जला देना चाहियें। उसके वाद अग्नि शांत होने पर उस कुलड़ीमेंसे पारेकी तैयार गोलोको निकाल लेना चाहिये। जिस पारेकी गोली वनानेके लिये अनेकों वैद्य, अनेकों तरहके प्रयत्न करते रहते हैं, वह गोली इस क्रियासे वनजाती है और पारा सफेद खड़ियाकी डलीकी तरह होजाता है।

इस प्रकार तैयार की हुई गोली को वज्र मूस नामक मूसमें रखकर कपड़ मिट्टी करके भूधर यन्त्र में रखकर ४ ऊपले कण्डों की आंच देना चाहिये। (जमीन में एक गज लम्बा, १ गज गहरा, १ गज चौड़ा गड्ढा खोद कर उसके अन्दर १ वालिश्त लम्बा, १ वालिश्त चौड़ा, १ वालिश्त गहरा दूसरा खड्डा खोदना चाहिये। इस छोटे खड्डेमें गोली वाली मूसको रखकर उस खड्डेको रेतीसे भरकर चार ऊपले कंडोंको उस रेतोपर रखकर जला देना चाहिये। इसी का नाम भूधर यन्त्र है) इस प्रकार पांच आंच चार २ कंडोंकी देना चाहिये। फिर पांच आंच पांच २ कंडों की देना चाहिये। इस प्रकार हर पांच आंचके ऊपर एक २ कंडा वढ़ाना चाहिये। इस प्रकार कुल १०० आंच देना चाहिये और हर आंचके साथ उस मूसमें गोलीके नीचे १६ वां भाग गन्धक वैठककी तरह रखते जाना चाहिये। इस प्रकार क्रिया करनेसे १०० पुटमें छगुने गन्धक और समान भाग सोनेका जारण होजायगा और उस जारणसे पारेका रंग सिंदूरके समान होजायगा। इसको एक वांसकी नलीमें भरकर रखना चाहिये।

आयुर्वेदिक ग्रंथों में वंधे हुए पारेका वहुत महत्व वर्णन किया गया है। यह अनेक सिद्धियोंको देता है। रोग मात्रको नष्ट करता है। रोग नाश करनेके कार्य में यह आज कलके

चन्द्रोदयसे उत्तम कार्य करता है। इसको प्रतिदिन सवेरे शाम १ रत्ती की मात्रामें नागर बेलके पानके साथ लेनेसे हर प्रकारके ज्वर, त्रिदोष, प्रमेह, अतिसार, संग्रहणी, हैजा असाध्य अजीर्ण, यकृतके रोग, पांडुरोग, वातरोग, हिस्टीरिया और जहरी जानवरोंसे होनेवाले तमाम उपद्रवोंको आश्चर्य जनक रीतिसे नष्ट करता है। इतनाही नहीं बल्कि क्षयके समान महारोगों को भी नष्ट करके चिकित्सकों को विपुल धन, यश और विजय प्रदान करता है। (जंगलनी जड़ी बूटी)

धतूरा सफ़ेद

नाम—

संस्कृत—कनकोन्मत्त, कनककौतुफल, श्वेत धतूरा। हिन्दी—सफेद धतूरा। गुजराती—धोलो धतूरो। मराठी—पांढरा धात्रा। अरबी—जोजमसलअवियाज। बंगाल—दुतूरा। दक्षिण—उजला धतूरा। तामील—वेलुमत्तइ। तेलगू—तेलमत्त। लेटिन—Datura Alba (धतूरा एल्बा)।

वर्णन—

यह वनस्पति समस्त भारतवर्ष और चीनमें पैदा होती है। इसका सारा पौधा काले धतूरे पौधेके ही समान होता है। सिर्फ इसके फूल सफेद रंगके होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे इसके बीज पागल कुत्तेके काटने पर उपयोगी होते हैं। कानसे पीव बहने की बीमारीमें भी ये लाभदायक है। इसके बीज, जड़ें और पत्ते उन्माद रोगमें उपयोगी हैं।

आर्य चिकित्सक इस वनस्पति की जड़ को दूधके साथ उबालते हैं और उस दूध को धोये हुए घी के साथमें पागलपन को दूर करनेके लिये पिलाते हैं।

जिस ज्वरके साथ में जुकाम रहता हो, या जिस ज्वरमें मस्तिष्कके अन्दर कुछ खराबी हो उसमें यह वनस्पति उपयोगी है। अतिसार, रक्तातिसार और चर्म रोगोंमें भी यह मुफीद है। इसके पत्तों को कुचलकर अथवा इसके बीजों को पीसकर तेलके साथ मिलाकर आमवात की सूजन, फोड़े, गठान और अर्बुद पर लगानेके काममें लेते हैं।

धतूरे के पत्तों को पीसकर व उनका लेप बनाकर प्रदाहके स्थानों पर लगाते हैं। डायमाक के मतानुसार इसके फल अथवा इसके रसमें अफीम और तेल को मिलाकर एक लेप तैयार

किया जाता है जोकि कृमियों को नष्ट करनेके काममें लिया जाता है। यह परजीवी कीटाणुओं को भी नष्ट करता है।

डायमॉकके मतानुसार इसके गरम किये हुए पत्ते आंखों पर बांधे जायं तो आंखों की बीमारियों को फायदा पहुँचाते हैं ये सिर दर्द, अण्डवृद्धि और फोड़ोंमें भी उपयोगी हैं।

दत्तके मतानुसार प्रदाहयुक्त स्थान पर इसके पत्तों को अफीमके साथ मिलाकर लगाया जाता है। इसके पत्ते, जड़ और बीज तीनों औषधि के काममें आते हैं। ये पागलपन में उपयोगी माने जाते हैं। प्रतिश्याय और मस्तिष्क की बीमारी वाले ज्वरमें, रक्तातिसारमें और चर्म रोगोंमें ये उपयोगी हैं।

चक्रदत्तके मतानुसार छातीके प्रदाह में हलदी और धतूरेके फलसे तैयार किया हुआ लेप बहुत जल्दी लाभ पहुँचाता है। सफेद धतूरे की जड़को दूधमें उबालकर उस दूध को घोये हुए घी और अन्य औषधियों के साथ पागलपन को दूर करने के लिये उपयोग में लिया जाता है।

वंगसेनके मतानुसार धतूरे के बीज श्लीपद की बीमारी में उपयोगी है। टांग की पीड़ा में भी ये बहुत लाभदायक हैं। इन बीजों को प्रातःकाल में ठण्डे पानीके साथ २ चांवलसे लेकर १ रत्ती तक की मात्रामें देना चाहिये। इसकी खुराक को धीरे २ बढ़ाना चाहिये।

सुश्रत के मतानुसार धतूरे की ताजा हरी जड़ १५ रत्ती की मात्रामें और ताजा पुनर्नव का रस एक ड्राम की मात्रामें पागल कुत्ते और पागल शृगाल के विष को दूर करने के लिये दिया जाता है।

इस वनस्पति के और सारे गुण काले धतूरे के समान हैं। मगर यह उससे गुणमें कुछ कम प्रभावशाली है।

धतूरा मेटल

नाम:—

संस्कृत—दुम्तुरा। तामील—मदुलम। लेटिन—Dattura Metal (धतूरा मेटल)।

वर्णन—

इस वनस्पति का मूल उत्पत्ति स्थान दक्षिणी अमेरिका है। वहीं से यह सारे संसार में फैली है। भारतवर्ष में यह हिमालयमें और मद्रास के आसपास पाई जाती है। इस सारी

वनस्पतिमें भूरा रुआँ रहता है। इसके पत्ते लम्बे चौड़े और नुक्कीदार होते हैं। ये दोनों तरफसे रुएंदार होते हैं। इसका फल गोल और कांटेदार होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

भारतवर्षमें यह वनस्पति धतूरे और सफेद धतूरे के समान ही गुणवाली मानी जाती है। चीनमें शराबके साथ इसके फूलों को मिलाकर एक प्रकार की औषधि बनाई जाती है जो संवेद शक्ति को हीन करने के काममें ली जाती है। इससे एक प्रकार का लोशन भी तैयार किया जाता है जो चेहरे के ऊपर की फुन्सियों और पैरों की सूजन को कम करता है।

कम्बोड़िया में इसके फूल दम की बीमारी में और फल कान की बीमारी में काम में लिये जाते हैं।

इस वनस्पति के अन्दर Hyoscyamine, (होसी माइन) Scofoolamine (स्कूफूलागाइन) और Atropine (एट्रोपीन) ये तीनों पदार्थ पाये जाते हैं।

कर्नल चोपरा के मतानुसार इस वनस्पति में Hyoscine (हीओसाइन) और Atropine (एट्रोपीन) नामक उपक्षार पाये जाते हैं।

धतूरा पीला (सत्यानाशी)

नाम :—

संस्कृत—हेमक्षीरी, सुवर्णक्षीरी, ब्रह्मदंडी, हेमदुग्धा, हेमशिखा, हेमवती, कञ्चन केहिरी, कटुपर्णी, पीतपुष्पा, रुक्मिणी, शृगाल कान्ता, सुवर्णा, तिलदुग्धा, इत्यादि। हिन्दी—सत्यानाशी, पीला धतूरा, फिरंगी धतूरा, ब्रह्मदंडी, स्याल कांटा। बंगाल—सोना खिरनी, स्यालकांटा। मराठी—कांटे धोत्रा, भिलधोत्रा। गुजराती—दारूड़ी। पंजाब—भटकटैया, भेरबंड, करियारी, कटसी, सत्यानाशी, स्यालकांटा। तामील—ब्रह्मदंडी, कुरुक्कम। तेलगू—ब्रह्मदंडी। अंग्रेजी—Pricklypoppy (प्रिकलीपोपी)। लेटिन—Argemone Mexicana (अर्जेमोन मेक्सिकेना)।

वर्णन—

सत्यानाशी के पौधे २ से ४ फीट तक ऊंचे, भस्मी रंगके होते हैं। इसके सारे पौधे पर बहुत तीक्ष्ण और पतले कांटे रहते हैं। इसके पत्ते ऊंटकटारे के पत्तों के समान लम्बे और कटी हुई किनारों के होते हैं। इसके फूल पीले रंगके होते हैं। फल लम्बगोल और

काँटेदार होते हैं। इस पौधे का कोई भी हिस्सा तोड़ने पर उसमें से सोनेके समान पीले रंग का दूध निकलता है। इसीलिये इसको संस्कृतमें स्वर्णक्षीरी कहा गया है। यह वनस्पति सारे भारतवर्षमें कसरत से पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे स्वर्णक्षीरी शीतल, कड़वी, दस्तावर तथा खुजली, वात, रक्तरोग, कृमि रोग, पित्त, कफ, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, पथरी, सूजन, दाह, और कुष्ठ का नाश करती है। इसकी जड़ को चोक कहते हैं। वह भी इसीके समान गुणकारी है।

सत्यानाशी और नेत्ररोग—

गण निघण्टुमें लिखा है :—

तस्यः क्षीरम् विन्दुमात्रम् नेत्रेक्षिप्तम् घृतप्लुतम्।
शुक्लंचह्यदिमासं च नेत्रांध्यम् च विनाशयेत्॥

अर्थात् इसके दूधकी एक बूंद घी के साथ मिलाकर आंजनेसे नेत्रशुक्ल रोग, अधि· मांस रोग और नेत्रों का अन्धापन दूर होता है।

आधुनिक अनुभवमें भी नेत्र रोगोंके लिये यह वनस्पति बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। इसमें से निकलने वाले दूध को लम्बे समय आंखों में आंजने से आंखों का दुखना मोतिया विन्द, आंखों की फूली, रतौंधी, झांक, आंखोंसे आंसुओं का टपकना, दृष्टिकी मन्दता, इत्यादि रोग दूर होकर नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। आंखोंके रोगों को दूर करनेके लिये और भी अनेकों औषधियां उपयोगमें ली जाती हैं। परन्तु यदि उनके उपयोगमें जरा भी असावधानी हो जाय तो उनसे हानि होनेकी सम्भावना भी रहती है। परन्तु इस औषधिमें हानिका कोई भय नहीं और इसीसे नेत्र रोगों को दूर करनेवाली औषधियोंमें इसका आसन ऊंचा है। इसको उपयोगमें लाने का तरीका इस प्रकार है :—

कार्तिक या अगहन महिनेमें इसकी डालियों को तोड़ तोड़ कर उनमें से जो पीले रंग का दूध निकले उसको इकट्ठा कर लेना चाहिये। इस दूध को तिगुने घीमें मिलाकर खूब घोट कर १ शीशीमें भर लेना चाहिये। इस औषधि को जस्त की सलाई से दिनमें २।३ बार सुरमे की तरह आंजना चाहिये। अगर बारहों ही महिने इस दूधको संगृहीत करके रखना हो तो मौसम के ऊपर १ थालीमें घी लगाकर उसमें इसके दूध को फैला कर धूपमें सुखा देना चाहिये। जब वह गोली बांधने सरीखा हो जाय तब उसकी गोलियां बांधकर धूपमें सुखा कर शीशीमें भर लेना चाहिये। जब जरूरत हो तब इसमेंसे १ गोली दूध या घीमें घिसकर आंखमें आंज लेना चाहिये।

सत्यानाशी और चर्म रोग —

चर्म रोगोंके अन्दर भी यह वनस्पति बहुत उपयोगी है। इसका कृमिनाशक धर्म बहुत स्पष्ट है। उपदंशमें इसकी जड़ अथवा इसका पीला दूध कीड़ामारीके साथ देते हैं। इन रोगोंमें यह नीमके समान गुणकारी है। उपदंशके फोड़े-फुन्सी और चट्ठों पर इसका दूध लगाया जाता है। कुष्ठ रोग और रक्तपित्तमें इसके बीजों का तेल शरीर पर मालिश किया जाता है और पत्तों का स्वरस दूधमें मिलाकर पिलाया जाता है। अग्नि विसर्प और दाद इत्यादि दाहजनक चर्म रोगोंमें इसका तेल चुपड़ने से शान्ति मिलती है। खुजली पर इसके दूध का लेप बड़ा लाभ पहुँचाता है। न भरनेवाले घावों पर इसका दूध लगाने से उत्तम परिणाम नजर आता है।

लॉरियूनियनमें इसका काढ़ा सुजाकको दूर करनेके लिये पिलाया जाता है। इस वनस्पति का उपयोग पुराने चर्म रोगोंके बीमारों पर भी सफलता पूर्वक किया जाता है।

गोल्ड कास्टमें इस वनस्पतिका उपयाग नारूकी सूजनको दूर करनेके लिये किया जाता है। वे लोग इसको कुचल कर दूसरी औषधियोंके साथ नारूके स्थानपर बाँध देते हैं। ऐसा कहा जाता है कि इससे नारूका कीड़ा एक दम बाहर आजाता है।

सत्यानाशी और दमेका रोग

सत्यानाशीके बीज विरेचक, वामक और कफ निस्सारक होते हैं। ये कफरोग, जुक़ाम, गलेकी सूजन और श्वास नलिका की सूजनमें उपयोगी होते हैं। कुक्कुर खांसी और दमेमें भी ये लाभदायक हैं। हालांकि इनके अन्दर किसी प्रकारके आक्षेप निवारक (Anti Spas Modic) तत्व नहीं पाये जाते मगर ये अपने वामक, कफ निस्सारक और रेचक गुणोंकी वजहसे दमेके ऊपर विजय प्राप्त कर लेते हैं। इनका विरेचक धर्म दूसरी बीमारियों की अपेक्षा फुफ्फुस सम्बन्धी बीमारियों में ज्यादा उपयोगी होता है।

दमेके अन्दर इस औषधिको उपयोग करनेका तरीका इस प्रकार है—

सत्यानाशीके पंचांगका रस निकाल कर उसको आगपर औटाना चाहिये। जब वह रबड़ीके समान गाढ़ा होजाय तब उसमें पुराना गुड़ १ छटांक और राल २ तोला मिलाकर खरल करके दो २ रत्तीकी गोलियाँ बना लेना चाहिये। इनमें से १ गोली दिनमें तीन बार गरम पानीके साथ देनेसे दमेके रोगमें आशातीत लाभ होता है।

सत्यानाशी और उपदंश—

उपदंशके रोगमें भी यह वनस्पति बहुत लाभदायक है। इसके ताजे पौधोंको कूटकर भफकेके अन्दर रखकर उनका अर्क खींच लेना चाहिये। इस अर्कको प्रतिदिन सबेरे शाम एक २ औंसकी मात्रामें पानी अथवा दूधके साथ पीनेसे सब प्रकारके चर्मरोग, तथा उपदंशकी वजहसे

होनेवाले रक्तरोग दूर होते हैं। दुराचार जनित फिरंगोपदंशमें तो यह औषधि इतना फायदा करती है कि अगर इस रोगकी वजहसे तालूमें छेदभी पड़ गया होतो वह भी अच्छा होजाता है।

इस वनस्पतिका पीला रस जलोदर, पीलिया और सूजन तथा चर्मरोगों पर औषधि की तरह काममें लिया जाता है। यह मूत्रल और न भरनेवाले घावोंको अच्छा करनेवाली औषधि है। दुष्ट और नहीं भरनेवाले व्रणोंके ऊपर इसका बाहिरी लेप बहुत फायदा पहुँचाता है। यह नेत्रशुक्ल रोगको दूर करनेके लिए पलकोंके ऊपर लगानेके काममें भी लिया जाता है। कोकणमें इसका रस कुष्ट रोगको दूर करनेके लिये दूधके साथ पिलाया जाता है। इसके बीजों में एक स्थिर तेल (फिक्स्ड आइल) पाया जाता है जो कि एक मृदुविरेचक वस्तु होती है। अरंडीके तेल, जेलप और रेवन्दचीनीकी अपेक्षा इसका तेल जुलावके लिये विशेष उत्तम होता है क्योंकि इसमें दुर्गन्ध और हीक नहीं होती, इसकी मात्रा छोटी होती है, इससे पेटमें मरोड़ नहीं होती और इसकी क्रिया मृदु और सुनिश्चित होती है। ताजे निकाले हुए तेलकी क्रिया अधिक विश्वसनीय होती है। इसके बीज रेचक और वेदनानाशक होते हैं। ये नवीन हालतमें वमन पैदा करते हैं। इसलिये इनको १ वर्ष तक पड़े रखकर काममें लेना चाहिए। इस वनस्पतिके पंचांगका घनक्वाथ रेचक, जड़ें कृमिघ्न और कुष्टनाशक और पीला दूध मूत्रल, कुष्टनाशक, व्रणशोधक, व्रणरोपक, शोथघ्न और पार्यायिक ज्वरोंको दूर करनेवाला होता है।

यूनानीमतसे यह वनस्पति कड़वी और तीक्ष्ण स्वाद वाली होती है, खूनको बढ़ाती है। यह एक उत्तम कफ निस्सारक और कामोत्तेजक वस्तु है। चर्मरोग और धवलरोगमें यह बहुत उपयोगी है।

रासायनिक विश्लेपण—रासायनिक विश्लेपणसे इस वनस्पति में दारूहलदीमें पाये जानेवाले बरबेराइनके समान एक तत्व और प्रोटोपीन नामक उपक्षार पाया जाता है। इसके बीजोंमें ३६ प्रति सैकड़ा तेल रहता है। इसके बीजोंकी राख बहुत तेज, खारी, गन्धसारिक लवणोंसे युक्त होती है। इसके बीज अफीमकी अपेक्षा अधिक मादक, नींद लानेवाले, और वामक होते हैं।

उपयोग—

उदरशूल—इसके बीजोंके तेलकी ३० से लेकर ६० बूँदें शक्करमें डालकर देनेसे उदरशूल पर मंत्र शक्तिकी तरह लाभ होता है।

दमा—इसके तेलकी बूँदें शक्करमें डालकर लेनेसे दमेमें स्थायी लाभ होता है।

जलोदर—साम्भर के नमकमें इसके तेल की बूंदे डालकर जलोदर के रोगी को पिलाने से लाभ होता है।

कामला रोग—गिलोयके रसमें इसके तेल की बूंदें डालकर पिलानेसे कामलारोग मिटता है।

सुजाक—इसके पीले दूध को मक्खन और कीड़ामारी के साथ देनेसे अथवा इसके पत्तोंके रसको घी में मिलाकर देनेसे सुजाकमें लाभ होता है।

बनावटें—

सत्यानाशी का तेल—सत्यानाशी के पंचांग को कुचलकर उसकी लुग्दी बना लेना चाहिए। इस लुग्दी को ३० तोला तौलकर एक गज लंबे और १ बालिश्त चौड़े खादीके कपड़े पर फैलाकर लेप कर देनी चाहिये। फिर इस कपड़े को एक मजबूत और लम्बे लोहे के तारके आगेके आधे भाग पर लपेटकर सरसोंके तेलमें तर कर देना चाहिये। फिर उस तार को संडासी से मजबूत पकड़कर उस कपड़ेमें आग लगा देनी चाहिये और उसके नीचे १ चीनी का प्याला रख देना चाहिये। उस अग्निके जोरसे उस कपड़ेमें से नीले रंग का तेल टपक २ कर उस प्याले में इकट्ठा होगा। उस तेल को शीशी में भर लेना चाहिये। इस तेल की मालिश करनेसे सुस्त मांस.पेशियोंमें स्फूर्ति आती है, जिससे हर प्रकार की संधियों की अकड़न, सूजन और शूल के रोगों में लाभ होता है।

तूतियाभस्म—उत्तम, चमकदार और नीले रंग के नीले थूथे की डलियों को तीन तोला लेकर १ चीनी मिट्टीके प्याले में रखना चाहिये। उसके ऊपर सत्यानाशी का पीला दूध इतना डालना चाहिये कि जिससे सारा नीला थूथा तर हो जाय। फिर उसको १ दिन भर धूपमें रखना चाहिये। जब वह सूख जाय तब इसी प्रकार फिरसे उसको सत्यानाशी के दूधमें भिंगोकर उसको सुखाना चाहिए। इस प्रकार आठ बार उसको तर करके सुखा देना चाहिये। दिन की धूप से नीला थूथा सफेद रंग का हो जायगा। तब ६ तोला सत्यानाशी के दूधमें उसको घोटकर टिकड़ी बनाकर छायामें सुखा लेना चाहिये। फिर सत्यानासीके पीले फूल ४० रुपये भर लेकर उसकी लुग्दी बनाकर उसकी दो बराबर की टिकड़ियां बना लेनी चाहिये। फिर मिट्टी के एक ढीबरेमें सत्यानाशीके पौधों की २ सेर राख बिछाकर उसके ऊपर एक टिकड़ी को रख कर उस टिकड़ी पर नीले थूथे की टिकड़ी को रखना चाहिये और नीले थूथे की टिकड़ी के ऊपर सत्यानाशीके फूलों की दूसरी टिकड़ी ढक देना चाहिये और उस टिकड़ी पर सत्यानाशी की २ सेर राख को और दबाकर भर देना चाहिये। उस राखके ऊपर २ सेर बालूरेत भरकर दबा देना चाहिये और उस रेती पर थोड़ेसे गेहूँके दाने बिछाकर नीचे मन्दी आंच लगा देनी चाहिये। जब वे गेहूँके दाने सिक जायं तब आँच को बन्द कर देना चाहिये। फिर सब राख को दूर करके उसमेंसे नीले थूथे की सफेद भस्म को निकाल लेना चाहिये। इस भस्मको आधी रत्ती अथवा १ रत्ती की मात्रामें देनेसे उपदंश रोग और श्वासके रोगोंमें अमृतके समान कार्य करती है।

धनियां

नाम:—

संस्कृत—धन्याक, धनिक, धन्य, धान्यक, कुस्तुम्बरु, तुम्बरु, छत्रा, हृद्य गन्धा, इत्यादि। हिन्दी—धनियां। बंगाल—धने। मराठी—धने, कोथमीर। गुजराती—धणो, कोथमीर। कर्नाटकी—कोथुम्बुरि। तेलगू—कोथमिलु। तामील—कोतमल्लि। अंग्रेजी—Coriander seed लेटिन—Coriandrum Sativum कोरिएंड्रम सेटिवम।

वर्णन—

धनियाँ या कोथमीर सारे भारतवर्षमें हरी हालतमें चटनी बनानेके काममें व सूखी हालत में मसालेमें डालनेके काममें आता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे धनियां कसेला, स्निग्ध, मूत्रल, हलका, कड़वा, चरपरा, उष्णवीर्य, जठराग्नि को दीपन करनेवाला, पाचक, ज्वरनाशक, रुचिवर्धक और पचनेमें स्वादिष्ट है। यह त्रिदोष, तृषा, दाह, वमन, श्वास, खांसी, दुर्बलता और कृमि रोग को नष्ट करता है। कच्चे धनिये के गुण भी धनिये के समान ही है। यह स्वादिष्ट और पित्तनाशक होता है।

राजनिघण्टु के मतानुसार धनियां मधुर, शीतल, कसेला, पित्तनाशक तथा ज्वर, खांसी, तृषा, वमन और कफ का नाश करता है तथा जठराग्नि को प्रदीप्त करता है।

यहां यह बात ध्यान में रखने की है कि ऊपरके वर्णनमें जहां धनिये को उष्णवीर्य लिखा है वहां राजनिघण्टुकार इसको शीतल लिखते हैं।

धनिये को कूटकर पानी में उबालकर उस पानीको कपड़े में छानकर आंखोंमें टपकानेसे नेत्राभिष्यंद रोग या आंखोंके दुखनेमें बहुत लाभ होता है। इससे आंखोंकी जलन कम होती है और उनमेंसे पानी और पीब का बहना कम हो जाता है। नेत्र रोगमें इसी प्रकार का काम करनेवाली दो औषधियां और हैं। एक हल्दी दूसरी शक्कर है। आंखें दुखना आरम्भ होते ही पहिले स्वच्छ अरंडीके तेल की १ बूंद आंखमें डालना चाहिये। जिससे आंखोंसे पानी और पीब (गीजड़, कीच) बाहर निकल जाता है और आंखों की जलन और किरकरी कम हो जाती है। उसके पश्चात् उपरोक्त तीनों औषधियों में से कोई एक अथवा तीनों को मिलाकर पानीके साथ आंखमें डालना चाहिये। अगर पलकों पर बहुत सूजन हो तो रसोतको दूधमें मिलाकर पलकों पर लगाना चाहिये।

ज्वरमें भी धनियेके पानीका बहुत उपयोग होता है। पेटके आफरेमें धनियेंका तेल एक एक मूल्यवान औषधि है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे धनियेंके पत्ते पहले दर्जे में सर्द और दूसरे दर्जे में खुश्क है। जालीनूस के मतसे ये गरम है। इन पत्तोंका लेप जहरबाजकी सूजनको मिटादेता है। इसको शरीर पर लगानेसे इसकी हल्की गरमी शरीरके अन्दर घुस जाती है और सर्दी भीतर घुसने नहीं पाती जब धनियें को खाते हैं, तो मुलायमियत की वजहसे मैदेमें पहुँचते २ शरीरकी गरमी इसकी गरमी को नष्ट करदेती है। जिससे इसकी सिर्फ सर्द प्रकृति शेष रह जाती है और इसीसे शरीरके भीतर इसका असर सर्द होता है। मगर इसके बाहरी लेपसे गर्मी की तासीर मालूम होती है, क्योंकि बाहरी शरीरकी गर्मी इसकी गर्मी को नष्ट नहीं कर सकती। शेखके मतसे धनियें में थोड़ा हिस्सा गरमीका और अधिक हिस्सा सरदीका होता है। गिलानीके मतसे धनियेंके पत्तों में पानीका हिस्सा होनेसे उसका निहायत सर्द होना जरूरी है। जब तक यह हरा भरा रहता है तब तक इसकी सर्दी अधिक रहती है। सूखनेके बाद वह कम होजाती है।

शरीरके अन्दर कहीं चीभें चलती हो तो इसके तर और ताजा पत्तोंके रसको दूध या रोगन गुलमें मिलाकर लगानेसे लाभ होता है। गर्मी की सूजन पर इसके रसको सिरकेमें मिलाकर लगाने से सूजन मिटजाती है। शरीर में पित्ति उछलने पर इसका रस बहुत मुफीद है। ऐसे समय धनियेंके पत्तों के रसको रोगन गुल और शहदके साथ मिलाकर लगाना चाहिये। और १७॥ माशे शक्कर और उन्नावका पानी मिलाकर पीना चाहिये। इस प्रयोगसे पित्तिमें बहुत लाभ होता है। जहरबाज और सख्त सूजनमें धनियेंके ताजे पत्तोंको पीसकर उनमें चनेका आटा और रोगनगुल मिलाकर लगानेसे फायदा होता है। धनियेके रसको शीशेकी खरलमें डालकर उसमें रोगनगुल डालकर शीशेके दंडेसे खूब घोटकर कारंबकल पर लगानेसे बहुत लाभ होता है। इसके पत्तोंको पीसकर नाकमें टपकानेसे और सिरपर लेप करनेसे नक्सीरका खून बन्द हो जाता है। अगर इसमें थोड़ा सा कपूर भी मिला लिया जाय तो विशेष फायदा होता है। धनियेके रसको लड़कीवाली स्त्रीके दूधमें मिलाकर आंखमें टपकानेसे आंखका कठिन दर्द भी आराम हो जाता है। धनियेके पत्तोंके रसमें बारतुङ्गके पत्तोंका रस मिलाकर पिलानेसे कफके साथ निकलनेवाला खून बन्द हो जाता है। इसके पानी को आंखमें टपकानेसे चेचकका दाना आंखमें नहीं निकलता।

धनियेंके बीज शक्तिदायक और तबियतको प्रसन्न करनेवाले होते हैं। गर्मीसे होनेवाले पागलपन, मृगी, और भयको ये दूर करते हैं। ये तृषाशामक, वमननाशक, क्षुधावर्धक और और पेटके कृमियोंको नष्ट करनेवाले होते हैं। अनैच्छिक वीर्यस्राव, मूत्रनालीके जखम और

अतिसारमें ये लाभदायक है। इसके बीजोंको आग पर सेक कर, पीसकर, जखम पर छिड़के जखमसे होनेवाला रक्तश्राव बन्द हो जाता है। गर्मीकी वजहसे होनेवाले उदरशूलमें धनियेके चूर्णको मिश्रीके साथ देनेसे लाभ होता है। सन्दल और अनीसूनके साथ इसके बीजोंको पीसकर मेदे पर लेप करनेसे मेदेकी ताकत बढ़ती है। खट्टी डकारें आना बन्द होती है और मेदेमें खट्टापन नहीं होता। अतिसारमें भुना हुआ धनियां खानेसे दस्त फौरन बन्द हो जाते हैं। अगर दस्तोंके साथ खून आता हो तो धनियेंको पानीमें भिगोकर पीस छानकर पीना चाहिए। धनियेके १ माशे चूर्णको शराबके साथ लेनेसे मेदेके कीड़े निकल जाते हैं और फिर नहीं पैदा होते। धनियेंको पानीमें भिगोकर पीनेसे मनुष्यकी कामशक्ति घट जाती है।

मुजिर—धनियेंके पत्ते और बीजोंको अधिक मात्रामें सेवन करनेसे मनुष्यकी कामशक्ति कम होजाती है। स्त्रीका मासिकधर्म रुक-जाता है और दमेकी बीमारीमें नुकसान पहुँचता है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नाश करनेके लिये शहद, दालचीनी और अंडे की जर्दी मुफीद है।

उपयोग—

नेत्र रोग—धनियेंके काढ़ेसे आंखको धोनेसे आंखकी सफेदी, आंखकी पुरानी सूजन और चेचककी वजहसे होनेवाला आंखका जखम मिट जाता है। धनियेंके बीजोंको और जौको पीसकर उनका पुल्टिस बनाकर बांधनेसे सूजनमें लाभ होता है।

बवासीर—धनियेके बीजको मिश्रीके साथ औटाकर पिलानेसे बवासीरसे बहनेवाला खून रुक जाता है।

गले का दर्द—धनियेंके बीजोंको चबानेसे गलेका दर्द मिट जाता है।

सिर की गंज—धनियेंके चूर्णको सिरकेके साथ मिलाकर सिर पर लेप करनेसे सिरकी गंजमें लाभ होता है।

सिर दर्द—धनियें और आंवलोंको रातमें भिगोकर सुबह घोट छानकर मिश्री मिलाकर पिलानेसे गर्मीसे होनेवाला सिर दर्द मिट जाता है।

मंदाग्नि—धनियेंके बीज और सूँठका काढ़ा बनाकर पिलानेसे पाचनशक्ति बढ़ती है और मंदाग्नि मिट जाती है।

गर्भावस्थाकी मतली—धनियेंके काढ़ेमें मिश्री और चावलका पानी मिलाकर पिलानेसे गर्भवती स्त्रीकी उल्टियां बन्द हो जाती हैं।

बच्चोंकी खांसी – चावलोंके पानीमें धनियेंको घोटकर शक्कर मिलाकर पिलानेसे बच्चोंकी खांसी और दमेमें लाभ होता है ।

कंठमाला—धनियां और जौका आटा मिलाकर लगानेसे कंठमाला जाती रहती है ।

जोड़ों का दर्द—छह माशे धनियेंके चूर्णमें १० माशे शक्कर मिलाकर खानेसे गर्मीसे होनेवाला जोड़ोंका दर्द मिट जाता है ।

प्रतिनिधि—तुख्मकाहू और तुख्मखस हैं खस ।

मात्रा—इसके पत्तोंकी मात्रा ४॥ तोले तक और बीजों की मात्रा १ तोले तक हैं ।

धमासा

नाम :—

संस्कृत—दुर्लभा, समुद्रांता, आत्ममूली, पद्ममुखी, अजारुद्द, फणिहारी, विशारदा, इत्यादि । हिन्दी—दमहन, धमासा, हिंगुणा, उस्तरखार । मराठी—धमासा, । गुजराती—धमासो । तेलगू—चिटिगिरा । बंगाल—दुर्लभा । लेटिन—Fagonia Arabica (फेगोनिया अरेबिका) ।

वर्णन—

यह एक कांटेदार झाड़ीनुमा छोटा क्षुप होता है जो खेतों में ऊगता है । सिंध, पंजाब और राजपूताने में बहुत होता है । इस क्षुपकी बहुत डालियां होती हैं । इसके पत्ते १ इंच से १॥ इंच तक लम्बे सनाय के पत्तोंके समान होते हैं । फूल फीके गुलाबी रंग के, फल छोटे और पांच फांक वाले होते हैं । बाजारमें इसके बारीक २ टुकड़े मिलते हैं ।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे धमासा चरपरा, कड़वा, मीठा, रक्तशोधक, शीतल, गरम तथा विसर्प विषम ज्वर, तृषा, वमन, प्रमेह, गुल्म, मोह, रुधिर विकार, वात, पित्त, कफ, कोढ़ और ज्वर को दूर करता है ।

यूनानी मत से यह पहले दर्जेमें गरम और खुश्क है । यह दाद, मुँह के छाले, खांसी, ज्वर और दमेमें मुफीद है । खून, पित्त और कफकी खराबी को दूर करता है । प्यास को दूर करता है । प्यास को बुझाता है, वमन को रोकता है, फोड़े, फुन्सी और कोढ़ को

मिटाता है, जलोदरमें मुफीद है, मेदे और जिगर को ताकत देता हैं। मुनक्काके साथ इसका काढ़ा बनाकर देनेसे ज्वरातिसार में लाभ होता है। शरीरके किसी भी अङ्गसे होने वाले रक्तस्राव को रोकता है। इसको दूधमें पकाकर लेप करने से कारबंकल की सूजन उतरती है। सुजाक और पेशाब की जलनमें भी यह लाभदायक है।

ज्वर के अन्दर धमासे की फांट बनाकर देनेसे शरीर की जलन कम हो जाती है। सिंध और अफगानिस्तानमें यह वनस्पति हमेशा ज्वर में दी जाती है। सर्दी के ज्वर, गले की सूजन, श्वासनलिकाकी सूजन इत्यादि रोगोंमें इस वनस्पति का अच्छा उपयोग होता है। इससे गलेकी खरखरी मिटकर कफ छूटने लगता है। गले की सूजन में इसकी फांट को थोड़ा थोड़ा पिलानेसे लाभ होता है। इसको चिलममें रखकर इसका धूम्रपान करने से दमेका दौरा बैठ जाता है। धमासे के काढ़े से जखम को धोनेसे जखम में पीव नहीं होती और वह जल्दी भर जाता है। इसके काढ़ेसे कुल्ले करने से मुंहके छाले मिट जाते हैं। इसके रसको गन्नेके रसके साथ उबाल कर उसका अवलेह बनाकर लेने से गले और फुफ्फुसके रोगों में लाभ होता है।

कांटोंसे या दूसरे कारणोंसे पैदा हुई विद्रधिमें पीव पैदा करनेमें इस वनस्पति की बड़ी तारीफ है।

हूक्स बूलरके मतानुसार इसके पत्ते और शाखाएं शीतल गुणवाली कही जाती हैं। ओरमरा पहाड़ीके लोग इसको पीसकर गर्भ की सूजन और कण्ठमालापर बांधनेके काम में लेते हैं। लासबेला स्टेट में यह वनस्पति खुजली की औषधि मानी जाती है।

कर्नल चोपराके मतानुसार यह वनस्पति कृमिनाशक है और माताकी बीमारी तथा मुख शोथ रोगमें काममें ली जाती है।

अनुभूत चिकित्सा सागरके मतानुसार शरीरके बाहर और भीतर जितनी पित्त जन्य बीमारियां होती हैं उन सबमें धमासा लाभदायक है। गर्मी की मौसम में जितने उपद्रव होते हैं उन सबमें यह मुफीद है। यह ज्वरको मिटाता है।

धव (धावड़ा)

नाम—

संस्कृत—धव, धवल, धुरंधर, दृढ़तरु, गौर, घट, त्रय, मधुर त्वचा, नंदितरु, पांडुतरु,

पिशाच वृक्ष, पीतफल, शकटाख्य, शुष्कांग, स्थिर, इत्यादि। हिन्दी—धावड़ा, धोंधव। बंगाल—धावयागाछ। मराठी—धावड़ा। गुजराती—धावड़ा। अरबी—काहाटी। राजपुताना—धोंकड़ा, धोकड़ी। तामील—नमाइ, व्हेकली, तेलगू—सीरिमनु। उर्दू—वाकला। अंग्रेजी—Button Tree लेटिन—Anogeissus Latifolia (एनोजिसस लेटिफोलिया)।

वर्णन—

यह वृक्ष सारे भारतवर्षके पहाड़ी प्रदेशों में पैदा होता है। इसका वृक्ष बड़ा और सुन्दर होता है। इसके पत्ते अमरूदके पत्तोंके समान होते हैं। इसकी छाल सफेद रंगकी होती है। फल पकजाने पर चिकना और चमकदार होजाता है। इस वृक्षके एक प्रकारका सफेद रंग गोंद लगता है जो धावड़ीके गोंदके नामसे प्रसिद्ध है। यह सफेद रंगका और पारदर्शक होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे धावड़ा कसेला, शीतल, मधुर, चरपरा, अग्निदीपक, रुचिकारक और पाण्डुरोग, प्रमेह, कफ, पित्त, बवासीर और वातको दूर करता है। इसका फल शीतल, स्वादिष्ट, रूखा, कसेला, मलरोधक, वात वर्धक, और कफ-पित्त नाशक होता है। इसकी जड़ चरपरी, कसेली, पित्तकारक और अत्यन्त अग्नि दीपक होती है। इसका गोंद पौष्टिक और कामोद्दीपक होता है।

यूनानी मतसे—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जे में सर्द और तीसरे दर्जे में खुश्क होता है। किसी २ के मतसे यह सम शीतोष्ण है। इसके फूल काबिज़ हैं। ये पेटके कृमियोंको मारकर निकाल देते हैं। भूख बढ़ाते हैं, धातुस्राव और शीघ्र पतनको दूर करते हैं। इनके काढ़ेमें बैठनेसे बवासीर, अत्यधिक रजःस्राव और काँचका निकलना बन्द होजाता है। मेदेकी खराबीसे होनेवाली, दस्तों को दूर करनेके लिये इसके फूलोंको जायफल और मिश्रीके साथ देते हैं। खूनी बवासीर का खून बन्द करनेके लिये इसके पौने दो तोला फूलों को पानीमें भिगोकर, मल छानकर पौने दो तोला मिश्री मिलाकर पिलाना चाहिये। इसके फूलों को जलाकर सरसोंके तेलमें मिलाकर आगसे जले हुए स्थान पर लगानेसे शांति मिलती है।

उपयोग—

हैजा—हैजेके अन्दर इसके फूलोंका शीतनिर्यास बनाकर देनेसे लाभ होता है।

श्वेत प्रदर—इसके गोंदको दरदरा करके घीमें भूनकर शक्करकी चाशनीमें मिलाकर स्त्रीको

खिलानेसे श्वेत प्रदरमें लाभ होता है।

मात्रा—इसके फूलोंकी मात्रा ४ माशे तक है।

धाराकदम्ब

नाम:—

संस्कृत—नीप, महाकदम्ब, धाराकदम्ब, धूलिकदम्ब, भ्रमरप्रिय, भृङ्गवल्लभ, केशराढ्य, इत्यादि। हिन्दी—धाराकदम्ब, हलदू, करम,। बंगाली—केलिकदम्ब। गुजराती—हलदरवो। मराठी—हेद। तामील—मंजकदम्बे। लेटिन—Adina Cordifolia (एडिना कोर्डिफोलिया)।

वर्णन—

यह कदम्बकी एक उप जाति है। इसका वृक्षभी कदम्बके समान ही ऊंचा होता है। इसके पत्ते बड़े, गोल, हृदयाकृति, कुछ लम्बे, महुएके पत्तेके समान होते हैं। इसके फल गोल, सुगंधि युक्त और छोटे होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे धाराकदम्ब कड़वा, कान्तिको सुधारने वाला, शीतल, कसेला, चरपरा, वीर्य वर्द्धक तथा सूजन, विष, पित्त, कफ, व्रण और वातको नष्ट करने वाला होता है।

इसकी छाल कटु पौष्टिक, ज्वरनाशक, स्तम्भक और व्रण रोपक होती है। इसकी छाल को औटाकर व्रणोंके ऊपर लेप किया जाता है। सिर दर्दमें काली मिर्चके साथ इसको पीसकर सूंघनेसे लाभ होता है। ज्वरके साथ अतिसार होनेकी हालतमें इसकी छालका क्वाथ बनाकर देनेसे लाभ होता है।

इसकी छालके रासायनिक विश्लेषणसे इसमें सिनकोनाके अन्दर पाये जाने वाले अम्ल द्रव्यके समान एक द्रव्य पाया जाता है। इसके काढ़ेमें कुनेनके समान एक प्रकारका कड़वा पदार्थ पाया जाता है जो ज्वरके अन्दर लाभदायक है। कदम्ब की छालकी अपेक्षा इस वृक्षकी छाल अधिक उपयोगी होती है।

धानफरंग

नामः—

यूनानी—धानफरंग।

वर्णन—

यह एक पत्थर होता है जिसके नग बनते हैं। यह सोने, चांदी, तांबे और लोहे की खदानोंमें पाया जाता है। सोने की खदानमें पाया जानेवाला धानफरंग सबसे अच्छा होता है। यह आंख की बीमारीमें उपयोग में लिया जाता है। तांबे की खदानमें पाया जानेवाला धानफरंग आंखके इलाजमें काममें नहीं आता। नीबूके रसके साथ इस पत्थर को घिसनेसे अगर इसका रंग पीला उतरे तो उसे सोने की खदान का समझना चाहिये। सफेद रंग उतरने पर उसे चाँदी की खदानका, लाल रंग उतरने पर ताँबे की खदानका और काला रंग उतरने पर उसे लोहे की खदान का समझना चाहिये।

गुणदोष और प्रभाव :—

यूनानीमतसे यह चौथे दर्जेमें गरम और खुश्क है। यह स्वयं एक विषैली वस्तु है और विषके प्रभाव को दूर करनेवाली भी है। ताँबे की खदानके धानफरंग को नीबूके रसमें घिसकर खिलानेसे अफीम का जहर उतर जाता है। मगर यदि जहर न खाया हो तो इसके खानेसे आदमी मर जाता है। सुदाबके काढ़ेमें इसको घिसकर नाकमें टपकाने से मृगोमें लाभ होता है। इसको पीसकर आंखमें लगानेसे आंखकी ज्योति बढ़ती है और जाला कट जाता है। इसको बारीक पीसकर रेशमी कपड़ेमें छान कर लगानेसे जाला कटकर आंख की रोशनी तेज हो जाती है। अगर किसी चौपाये जानवर का पेशाब बन्द हो जाय तो इसको पीसकर उसकी आंखमें लगानेसे पेशाब खुल जाता है। इसके लेपसे श्वेतकुष्टके दाग़ भी मिट जाते हैं। इसको सिरके में पीसकर दाद या सिर की गंज पर लगानेसे फायदा होता है। बिच्छू के विष पर इसका लगाना लाभदायक है। इसके खानेसे बहुत बेचैनी पैदा हो जाती है। इसके दर्पको उतारनेके लिये दूसरे जहरोंके दर्पनाशक पदार्थ काममें लेना चाहिये। (ख० अ०)

धामन

नामः—

संस्कृत—धामनी, धनुवृत्त, धरवाना, धर्मन, महावल पिच्छिलका, रक्त कुसुम, रूत्त, स्वादुफला। हिन्दी—धामन, धामनी। गुजराती—धामन। पोरबंदर—धामन। मराठी—धामण। बंगाल—धामन, फारसा। तामील—सहेची, टाड़ा तर्रा। तेलगू—चरेची, जंना, नूलिजना, टाडा उड़िया—धामन। लेटिन -Grewia Tiliaefolia (ग्रेविया टिलाई फोलिया)।

वर्णन—

धामिन के वृत्त वहुत वड़े और लम्बे होते है। इसकी ऊँचाई ३० से ३५ फुट तक की होती है। इसके पिंड की गोलाई २ से ५ फुट तक होती है। इसके पत्ते वेरके पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ वड़े होते हैं। इसकी छाल आधा इंच मोटी और खरदरी होती है। इसकी कोमल डालियों और पत्तों पर रुएं होते हैं। इसके फल मटर के समान होते हैं। फागुन में इसके पत्ते गिर जाते हैं और चेतमें नये पत्ते आ जाते हैं। वेसाखमें इसके फूल लगते हैं। और जेठसे आसोज तक इसके फल पकते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे धामन कसेला, वीर्यवर्धक, मधुर, चरपरा, वल कारक, रूखा. हलका, धातुवर्धक, किंचितगरम, व्रणरोपक, तथा कफ, वात,दाह, सूजन, कंठरोग, रुधिरविकार, पित्त, खांसी और पीनसरोग को दूर करता है। इसका फल स्वादिष्ट, शीतल, कसेला और कफ वात नाशक होता है।

धामन की अन्तर छाल का रस १ से २ तोले तक की मात्रामें रक्तातिसारके अन्दर देनेसे लाभ होता है। खुजलीके ऊपर इसकी छाल को मसलनेसे तुरंत फायदा होता है। इसकी लकड़ीके चूर्ण की अथवा इसकी लकड़ीके कोयलेके चूर्ण की फक्की देनेसे उल्टियां होकर अफीम का विष उतर जाता है। कौंच की फली को स्पर्श करनेसे शरीरमें जो जलन और खुजली पैदा होती है। उसको मिटानेके लिये इसकी छाल का लेप करते हैं।

धाय

नाम—

संस्कृत—अग्नि ज्वाला, बहुपुष्पिका, धातकी, धात्री, धावनी, गुच्छपुष्पी, कुमुद, कुञ्जर, मधवासिनी, पारवती, रौद्रपुष्पिणी, सन्धपुष्पी, तीव्र ज्वाला, इत्यादि। बंगाल—धाइ फूल, धातकी, धौरा। हिन्दी—धा, धाई, धवल, सांठा, थावी,। गुजराती—धावनी, धावदिना। कच्छ—धावदी। पंजाब—दहाई, धा, धात्री, धावी खुर्द, थाई। तामील—वेलेकाइ। तेलगू—धातकी। लेटिन—Woodfordia Floribunda (वुडफोर्डिया फ्लोरिबुन्दा)।

वर्णन—

धायके वृक्ष प्राय सारे भारतवर्ष में पैदा होते हैं। इसका वृक्ष १० फीटसे भी ऊंचा होता है। इसके पत्ते अनारके पत्तोंके समान होते हैं।अनारके पत्ते कुछ अधिक हरे होते हैं। धायके पत्ते कुछ पीलाई लिये खरदरे होते हैं। इसके फूल लाल होते हैं। माघसे चैत्र तक इसके फूल लगते हैं। इसकी कलियां और पत्ते रंगनेके काममें आते हैं। इसके एक प्रकार का गोंद भी लगता है जो खाने के काममें आता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे धाय, चरपरी, शीतल, कसेली, मदकारक, कड़वी, हलकी, गर्भ स्थापक तथा रक्त प्रवाहिका, पित्त, तृषा, विसर्प, व्रण, कृमि, अतिसार और रुधिर दोष को दूर करती है।

धायके फूल स्वादिष्ट, रुखे तथा रक्तपित्त, अतिसार और विषविकार को दूर करते हैं। धायके वृक्ष की अपेक्षा धायके फूल अधिक गुणकारी होते हैं। इनका काढ़ा ३ दिन तक देनेसे प्रदर रोग दूर होता है। दन्त रोगोंमें भी यह बहुत लाभ दायक है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से यह समशीतोष्ण होती है। इसके फूल व इसका पंचांग काबिज है। अतिसार और प्रवाहिकामें इसके रूखे फूल ७। माशा मट्ठे के साथ पिलानेसे लाभ होता है। इसके फूलों को जखम पर लगानेसे जखम भर जाता है। इसके फूलों का शरबत बना कर पिलाने से खूनी बवासीरमें लाभ होता है। स्त्रियोंके श्वेत प्रदरमें भी यह बहुत लाभदायक है। इसको पीसकर अलसी के तेलमें मिलाकर जले हुए स्थान पर लगाने से फायदा होता है। इसको नासूर में रखने से नासूर भर जाता है। तालीफ शरीफ के मतसे इससे पेटके

कृमि मर जाते हैं। इसके सूखे फूल एक संकोचक और पौष्टिक द्रव्य है। श्लेष्मिक झि-ल्लियों की खराबी, खूनी बवासीर और यकृत की खराबी में ये लाभ दायक हैं। प्रसूतिके समय में इसके फूल एक बहुत ही निर्भय और उत्तेजक वस्तु है।

कोमान के मत से इसके फूलों का चूर्ण १० से २० ग्रेन की मात्रा में शहद के साथ देनेसे अतिसारमें बहुत लाभ होता है।

वापटके मतानुसार इसके ताजा पत्ते सर्प विषके अन्दर एक आश्चर्य जनक औषधि है। ऐसे केसोंमें इसके पत्तों का रस पिलाया जाता है। उसकी कुछ बूंदे नाकमें टपकाई जाती हैं और कुछ काटे हुए हिस्सेल पर गाया जाता है।

उपयोग—

रक्तप्रदर—इसके फूलोंको शहदके साथ चटानेसे रक्त प्रदर मिटता है।

जखम—इसके फूलोंका चूर्ण छिड़कनेसे जखम जल्दी भर जाता है।

खूनी बवासीर—इसके फूलोंका शरबत पिलानेसे खूनी बवासीर मिटता है।

नासूर—इसके चूर्णको अलसीके तेलमें मिलाकर लगानेसे व्रण, नासूर, जहरीले कीड़ों के डंक और अग्निदग्ध मिटते हैं।

धादोन

नाम—

यूनानी—धादोन।

गुणदोष और प्रभाव—

गुल—तालीफ शरीफमें लिखा है कि यह एक वृक्ष है। जो अपनी खासियतसे कफ, वायु और पित्तके दोषोंको मिटाता है। जहर, कोढ़ बवासीर और सन्निपात में भी यह लाभदायक है।

घुन्धुल

नामः—

बंगाल—घुन्धुल। उड़ीसा—सुसम्बर। बरमा—पेंगलेयोग। चिटगांव—करम्बोला। लेटिन—Carapa obovata (कारपा ओबोवेटा)।

वर्णन—

यह एक छोटी जातिका वृक्ष होता है। इसके पत्ते ७.५ से १५ सेंटिमीटर तक लंबे होते है। इसके फल नारंगीके आकारके होते हैं। यह वनस्पति बंगाल, बरमा, चिटगांव, सुन्दर बन और मलायामें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके फल छातीकी सूजन और श्लीपदमें लाभदायक माने जाते हैं।

घूटी

नामः—

गुजराती—घुटी। मराठी—कंदेल, कतरनी, कौंतेल, पचेंडा, पचूण्डा, रगोट। राजपुताना—अन्तेरा। तामील—नकुलिंजन। कच्छी—डुमरो, डुमरोजोझाड़। तेलगू—ओरिडोडा, दुदुप्पी गुलि, नेलुप्पि। लेटिन—Capparis Grandis. (केपेरिस ग्रेंडिस)।

वर्णन—

यह एक छोटी जातिका वृक्ष होता है। इसके वृक्ष १० फीटके करीब ऊँचे बढ़ते हैं। इसमें पतली डालियां आती हैं। कई वार ये डालियां बढ़कर लताओं की तरह फैल जाती हैं। इसकी डालीमें पत्तोंके डंखलके पास दो २ तेज अणीवाले कांटे होते हैं। इसके पत्ते गोलाई लिये हुए नोकदार, सुहावने और मुलायम होते हैं जो गर्मियोंमें आते हैं और फल गोलाई लिए हुए होते हैं जो बरसात में पकते हैं। यह वनस्पति आबू, पश्चिमी राजपूताना, कर्नाटक, पश्चिमी घाट और गोदावरीके किनारे पैदा होती है।

गुणदोष, और प्रभाव—

इसकी जड़ और छालको जलाकर उसकी राखको दूधमें पीसकर १॥ माशे की मात्रामें

शहदके साथ देनेसे हैजा और अजीर्णमें लाभ होता है। इसके पत्तोंको पीसकर चमड़े पर लगानेसे छाला उठता है ऐसा कहा जाता है। इसके पत्तोंका काढ़ा चर्म रोग और रक्तविकार पर दिया जाता है।

धूना

नाम :—

आसाम—धूना, विसजंग। नेपालका—गोगुलधूप। लेटिन—Canarium Bengalense, (केनेरियम बेंगालेंस)। C. Sikkimense. (के० सिक्किमेंस)।

वर्णन—

यह एक ऊँची जातिका हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है जो आसाममें सिलहट परगनेके अन्दर विशेष तौरसे पैदा होता है। इसके पत्ते ३० से ६० सेंटिमीटर तक लंबे होते हैं।

गुणदोष, और प्रभावः—

इस वृक्षमें एक प्रकारका गोंद निकलता है जो अम्बरके रंगका कठिन और चीठा होता है। हिमालयके पहाड़ी लोग इसको गोगुल धूप या नरओकपके नामसे पहिचानते हैं। यह गोंद पुराने और न भरनेवाले व्रणों पर लगाने से जल्दी लाभ करता है। इसके पत्तों और इसकी छाल का लेप गठिया और संधियोंकी सूजनपर किया जाता है।

धोधस मरवो

नाम :—

गुजराती—धोधस मरवो, मोटो समेरवो, उभोसमेरवो। मराठी—जंगली गेलिया। लेटिन—Alysicarpus Longifolius. (एलिसीकारपसलांगि फोलियस)।

वर्णन—

यह वनस्पति सारे भारतवर्ष के मैदानों में पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह श्वेत प्रदर को दूर करने के काम में ली जाती है।

धोल (गजधर)

नाम—

मराठी—धोल, धोंक, गजधर। गुजराती—पत्थर चट्टी, भींत चट्टी। बम्बई—गजधर। कच्छी—झामर वेल, पीरीसोदेड़ी। लेटिन—Lindanbergia Urticaefolia लिंडन बर्गिया अर्टिसीफोलिया।

वर्णन—

यह एक क्षुप जाति की वनस्पति है। इसके पौधे बरसातके अन्तमें बहुत पैदा होते हैं। यह पौधा १ बालिश्तसे १ हाथ तक ऊचा होता है। जहाँ यह पैदा होता है वहां बहुत तादाद में पैदा होता है। कई दफे यह पत्थर पर भी फैला हुआ रहता है। इसके पत्ते द्रोणपुष्पीके पत्तोंके समान, फूल पीले और फल छोटी फलियों के रूप में होते हैं। इस सारी वनस्पतिके ऊपर बहुत रुआँ होता है। यह वनस्पति सारे भारतवर्पमें पैदा होती है। पुरानी दीवारों पर, और नदी तथा तालावों की तलहटी में विशेप पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका रस पुरानी खांसी और ब्रोंकाइटीजमें दिया जाता है। इसका रस धनिये के रसके साथ मिलाकर चर्म रोगों पर लगाया जाता है। इसका पौधा सुगंधित और कुछ कड़वे स्वाद वाला होता है।

इसके पत्तों को पीसकर अनन्तवात (झामरा) पर बांधते हैं। इसके बीजों को पीसकर फोड़े फुन्सियों पर बांधनेसे लाभ होता है। इसके पत्तों को पानीमें उवाल कर उस पानीकी भाफ ज्वर रोगीको दी जाती है। इसके पत्तोंका रस जहरी जानवरोंके डंकपर लगाया जाता है।

घेनियानी

नाम—

हिन्दी—घेनियानी। बंगाल—कोकोरू। मराठी—हरदुली, अरछिरी। तामील—माली वेपम। तेजगू—बापनामुश्ती, कोगीटटिगी। उड़िया—वादलिया, बादर, वादुरकी। लेटिन—Olax Scandens (ओलेक्स स्केंडन्स)।

वर्णन—

यह वनस्पति पश्चिमी घाट, बाम्बे प्रेसीडेंसी, दक्षिण, करनाटक, सीलोन और कुमाऊँ अवध तथा विहारमें पैदा होती है। यह एक बहुशाखी झाड़ी होती है। इसके पत्ते ५ से लेकर ६ सेंटिमीटर तक लम्बे और फूल सफेद होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

केम्पवेलके मतानुसार छोटा नागपूरमें इसकी छालका काढ़ा ज्वर की वजहसे होनेवाली रक्ताल्पतामें दिया जाता है।

धौर

नाम—

हिन्दी—धौर, भिर्र, गिरिया। मराठी—हल्दू, हलदरवा, भेरिया। बम्बई—बिल्लू, भेरिया, हरदी, हुल्दा। मध्यप्रान्त—बहेरू, भिर्र, बिहरा, गिरिया। तामील—करुम्बोजू, मुडिराइ, पोराजु। तेलगू—बिल्लू। उड़िया—बेहरू, बिलुगा। लेटिन—Chloroxylon Swietenia. (क्लोरोक्सिलोन स्वेटेनिया)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जातिका वृक्ष होता है जो छोटा नागपुर, सतपुड़ा और दक्षिणी पश्चिमी हिन्दुस्तानमें बहुत पैदा होता है, इसकी छाल खुरदरी और कीरमची रङ्ग की होती है। इसके पत्ते आमने सामने जोडेसे लगते हैं। इसके फूल कुछ हरापन लिये हुए, छोटे, फल कुछ लम्बे और खाकी तथा काले रङ्गके और बीज भूरे रंग के होते हैं। औषधि प्रयोगमें इसकी छाल काममें आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पतिकी छाल संकोचक और ग्राही होती है। इसमें थोड़ासा वेदनानाशक धर्म भी होता है। इसकी छालको ठंडे पानीके साथ औटाकर चोट, मोच, सूजन और दर्द तथा जलनकी जगह लेप करनेसे शान्ति मिलती है।

इसके पत्तोंका लेप करनेसे व्रण जल्दी भर जाते हैं। संधिवात और गठियामें भी यह लाभदायक है।

इस वनस्पतिके अन्दर एक प्रकारका उपक्षार पाया जाता है। जिसके तत्वोंका संगठन अभी तक मालूम नहीं हुआ है। इस उपक्षारका नाम क्लोरोक्झिलीनाइन (Chloroxylonine.) है यह एक शक्तिशाली उद्दीपक या जलन करने वाला पदार्थ है। इसको चमड़ेपर लगाने से यह चमड़ेमें जलन और प्रदाह पैदा कर देता है।

धौरा

नाम:—

हिन्दी—चूरन, सूरन। बम्बई—तूरन। अवध—धौरा, धौरी। संथाली—सेकटा। तामील—कन्दीलंडाई, तोदरी। देहरादून—बेर, भाँड। लेटिन—Zyzyphus Rugosa (झिझीपस रूगोसा)।

वर्णन—

यह एक बेरकी जातिका वृक्ष होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके फूलोंको समान भाग नागर बेलके पान और आधे भाग चूनेके साथ मिलाकर दो २ रत्तीकी गोलियाँ बनाई जाती हैं। इन गोलियों को दिनमें २ बार देनेसे अत्यधिक रजःश्रावकी बीमारी में लाभ होता है।

नकछिंकनी

नाम—

संस्कृत—छिक्कनी, क्षवकृत, तीक्ष्णा, उग्रा, उग्रगंधा, घ्राणदुखदा, क्रूरनासा। हिन्दी—नकछिंकनी। बंगाल—मेचिट्ट, छिंकनी। मराठी—नाकशिकनी। गुजराती—छिंकनी, नकछिंकनी। उर्दू—नकछिंकनी। तेलगू—हरनगान। संथाल—वेदियाचिम। अरबी—अफकार। लेटिन—Centipeda orbicularis (सेंटिपेडा ऑर्बिक्यूलेरिस)। इंग्लिश—Sneezeweed (स्नीझवीड)

वर्णन—

यह एक छोटी जातिकी वनस्पति होती है। इसका पौधा १ बालिश्त भर ऊंचा होता है और जमीन पर फैला हुआ रहता है। इसके फूल गुच्छों में आते हैं। इसकी शाखाओं पर

बारीक २ रुएं रहते हैं। फूल नीमके फूलकी तरह सफेद होते हैं। सरदीके पिछले दिनों में यह वनस्पति तर जगहों पर पैदा होती है। इसके पत्तोंको मसलकर सूंघनेसे छींकें आती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे नकछिंकनी चरपरी, रुचिकारक, अग्निदीपक, हलकी, गरम, कसेली, तीव्रगंध युक्त तथा चर्मरोग, कफ, वात, श्वेतकुष्ट, कृमिरोग, रक्तविकार, भूतवाधा और नेत्ररोगों को दूर करनेवाली होती है।

शाढलके मतानुसार नकछिंकनी श्वास, खांसी, रुधिर विकार और विषविकारको दूर करनेवाली होती है।

यूनानीमत—इसके पत्ते वमन कारक, कफनिस्सारक, शांतिदायक और विरेचक होते है। ये खून बढ़ाते हैं, नाककी बीमारीको दूर करते हैं, रतौंधीको नष्ट करते हैं और गलेमें होनेवाले छाले, तथा कर्णपीड़ा, को मिटाते हैं, रुके हुए मासिक धर्मको जारी करते हैं। धवलरोग, गीली खुजली, दाद, जोड़ोंकी पीड़ा, कटिवात और कुक्कुर खांसीमें लाभदायक है। पीनसरोग और सूजनमें भी ये काममें लिये जाते हैं। इसका तेल कटिवातमें उपयोगी है।

यह वनस्पति मस्तिष्कको साफ करती है। कफ और वायुके हमलेको दूर करती है। फालिज और लकवेमें मुफीद है। कंपवात और गठियाको मिटाती है। कफ प्रकृति वालेकी काम शक्तिको बढ़ाती है। इसको मसलकर सूंघनेसे छींकें आती है और हिचकी बन्द होजाती है। १ माशे नकछिंकनीको गुड़में मिलाकर खानेसे नाभिका टल जाना अच्छा होजाता है। इसके पत्तों को सुखाकर पीसकर १ माशेसे शुरु करके धीरे २ बढ़ाते हुए ३ माशे तक करदेने पर १ हफ्तेमें बहुत बढ़ी हुई तिल्ली भी साफ होजाती है। इसे लेते समय पथ्यमें दही चांवल देना चाहिये।

सरदी के दिनोंमें चार रत्ती नकछिंकनी को गुड़ में मिलाकर खावें। एक एक रत्ती बढ़ाते बढ़ाते १ माशे तक बढ़ावें। अगर गरमी मालूम हो तो तुख्म खुरपा और मिश्रीके काढ़े के साथ खावें और पथ्यमें घी अधिक लें। इसके सेवनसे खाना खूब हजम होता है और भूख खूब लगती है। ४ भाग नकछिंकनी १० भाग अद्रक के रसमें पीसकर १० भाग घी में तलें। जब घी जलनेके करीब पहुँच जाय तो छान कर रख लें। इसमेंसे चनेके बराबर घी खानेसे भूख बहुत बढ़ती है। नकछिंकनी को पीस कर शहदमें मिला कर गर्भवती स्त्री की नाभि पर लेप करने से गर्भ गिर जाता है। इसके लेप से दाद भी मिटता है। नकछिंकनी २५ माशे, कस्तूरी १ रत्ती, समुद्र फल १२ और लौंग २५ इन सबको अदरकके रसमें पीसकर छायामें सुखा लें। इसको सुबह शाम थोड़ा सुंघानेसे जुकाम और नजला दूर हो जाता है। (ख०-अ०)

६ ।- बंगालमें नाकके भीतर १ फुन्सी होती है जिसका नाम "अहोवा" कहते हैं। जब यह निकलती है तब बहुत जोर से बुखार आता है और अगर जल्दी इलाज नहीं किया जाय तो बीमार मर जाता है। इस बीमारीमें नकछिंकनी, पीपला मूल, दो दो माशे और कस्तूरी आधा माशा पीस कर थोड़ा थोड़ा सुंघानेसे छींकें आकर बीमारीमें लाभ होता है।

नकछिंकनी के बीज और इस सारी वनस्पति के चूर्ण को हिन्दू चिकित्सक छींक लाने वाले पदार्थ की तरह उपयोगमें लेते आ रहे हैं। यह वनस्पति इस देशमें पीनस, मस्तक शूल और मस्तक की सरदी को दूर करनेके उपयोग में ली जाती है। यह एक गर्म और खुश्क वस्तु है और लकवा तथा सन्धियों के दर्दमें उपयोगी है। इसको पीसकर गरम करके गालों पर इसका लेप करनेसे दांतों की पीड़ा दूर हो जाती है।

रासायनिक विश्लेषण—

व्यास और सिन्हाने इसका रासायनिक विश्लेषण करके इसमें अलकेलाइड, ग्लुको-साइड और सेपानिन नामक पदार्थ पाये हैं।

मुजिर—इसके अधिक सेवन से यकृतमें दर्द पैदा होता है, अधिक सूंघनेसे छींकें बहुत आती हैं और आदमी घबरा जाता है।

दर्पनाशक—गाय का घी।

मात्रा—४ रत्तीसे १ माशे तक।

नकरा

नाम—

यूनानी—नकरा।

वर्णन—

यह एक वृक्ष होता है। इसकी ऊँचाई ७।८ फीट के करीब होती है। इसकी जड़ोंमें से बहुत सी डालियां निकलती हैं। जिनपर छोटे छोटे कांटे होते हैं। इसके पत्ते तिंदू के पत्तों से मिलते जुलते होते हैं। इनके किनारे लाल और मुलायम होते हैं। इसका फल गोल, कुछ लम्बा और खुबसूरत होता है। पकनेके बाद उसका रंग नारंगी हो जाता है। इस फलमें गूदा

बहुत कम निकलता है। इसमें १ बीज चिड़ियाके अण्डेके बराबर होता है। इस वनस्पति का स्वाद कड़वा मीठा और खट्टा होता है।

बीज का स्वाद कुछ मीठा और स्वादिष्ट होता है। इसे भून कर खाते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके बीज का मग़ज गरम, काम शक्ति वर्धक, धातु पैदा करने वाला और बदन को मोटा करनेवाला होता है।

नगनी

नाम—

बम्बई—पुन, सिरपून, पुने। मराठी—नगनी। तामील—पुंगू। तेलगू—पुने। मलयालम—कटपुन्ना। अंग्रेजी—मलाबार पुन। लेटिन—Calofhyllum elatum (केलोफिलम एलेटम)।

वर्णन—

वह एक ऊंची जाति का वृक्ष होता है। इसके पत्ते ७-५ से १२-५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वृक्ष लंका कनाड़ा और हिन्दुस्तान के दक्षिण पश्चिम किनारे पर पैदा होता है। इसमें गोंद बहुत निकलता है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका गोंद एक उत्तम संकोचक वस्तु है।

नगनद बावरी

नाम—

यूनानी—नगनद।

वर्णन—

यह एक पौधा होता है जो माल तुलसी या रीहां के पौदे की तरह होता है। कई लोग रीहां और नगनद बावरी को एक ही मानते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मत—कुछ युनानी हकीम इसको सर्द और कुछ इसे गरम और तर मानते हैं। यह प्यास को दूर करनेवाली और पित्त तथा वायु को नष्ट करने वाली होती है। इसको दही में मिलाकर कुछ दिनों तक पीने से सुजाक में लाभ होता है। बकरीके दूध के साथ इसको पीनेसे पारी का बुखार दूर होता है। खुजली और रक्तदोष में भी यह मुफीद है। १ तोला नगनद बावरी १० काली मिरचोंके साथ पीसकर ३ दिन तक खानेसे बवासीर की सूजन मिट जाती है। १ माशे नगनद बावरी, कागदी नीबू के पत्ते और काली मिरचके साथ उपयोगमें लेनेसे पुराना बुखार दूर होता है। रक्तविकारमें इसको पित्त पापड़ा के साथ लेनेसे लाभ होता है। इसको ७ माशा की मात्रामें १५ काली मिरचोंके साथ पीनेसे २० दिनमें श्वेतकुष्ट में लाभ होता है।

ऐसा कहा जाता है कि नगनद बावरी को साल भर तक रोजाना एक हथेली भर खाने से मनुष्य पर जहर का असर नहीं होता। अगर इसको अजवायन के साथ ६ महिने खाते रहें तो बाल सफेद नहीं होते। इन बातों में कितना सत्यांश है यह नहीं कहा जा सकता।

नमक

नाम:—

संस्कृत—लवण, सैंधव। हिन्दी—नमक। मराठी—मीठ। गुजराती—मीठू। फारसी—नमक। अंगरेजी Chloride of Sodium। लेटिन—Sodii cloridum (सोड़ी क्लोरिडम)।

वर्णन—

नमक मानवी भोजनमें पड़नेवाली एक अनिवार्य वस्तु है। इसको सभी कोई जानते हैं। इस लिये इसके विशेष विवेचन की आवश्यकता नहीं। इसकी कई जातियां होती हैं। जैसे—सेंधा निमक, साम्हर निमक, काला निमक, संचर निमक, बीड़ निमक इत्यादि। पर इन सबमें सेंधा निमक विशेष उत्तम होता है। इसलिये जहां कोई खास जाति का निमक लेने की हिदायत नहीं दी गई हो वहां सेंधा निमक ही लेना चाहिये।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे सेंधा निमक रुचिदायक, वीर्यवर्धक, नेत्रों को हितकारी, अग्निदीपक, शुद्ध, स्वादिष्ट, हलका, स्निग्ध, पाचक, शीतल, सूक्ष्म, हृदय को हितकारी, त्रिदोष नाशक तथा व्रणदोष, कब्जियत और हृदय रोग को नष्ट करनेवाला है।

सेंधा निमक आंखके लिये बहुत लाभदायक है। जिस मनुष्य का मल सूख गया हो और दस्त न आता हो उसको घी के साथ सेंधा निमक देनेसे तुरन्त दस्त आवेगा। सेंधा निमक तेल के साथ लगानेसे अनेक प्रकारके त्वचा रोगों को दूर करता है।

मलेरिया ज्वर और सेंधा निमक—

यूरोपके डाक्टर ब्रुक का कथन है कि जब मैं हंगरी और दक्षिण अमेरिकाके प्रान्तों में घूमता था तब मलेरिया ज्वर को दूर करनेके लिये नमक का एक बहुत सादा प्रयोग सफलताके साथ करता था। वह प्रयोग इस प्रकार है।

"बारीक पीसा हुआ नमक १ मुट्ठी लेकर हल्की आँचके ऊपर एक कढ़ाहीमें भूनता था। जब उसका रंग बदलकर जली हुई कॉफीके समान हो जाता था तब उसको नीचे उतारकर ठंडा करके १ बोतल में भर लेता था। इसमेंसे १ बड़ा चम्मच नमक गरम पानीके साथ रोगीको पिलाता था और उसके बाद २।३ घण्टे तक कुछ भी खाने को नहीं दिया जाता था। यह दवा लेनेसे रोगी को बेहद प्यास लगती है। फिर भी उसको बहुत थोड़ा पानी पीने को दिया जाता और भूख लगने पर हलका और पौष्टिक खाना दिया जाता था। सर्दी से बचनेकी रोगी को खास हिदायत दी जाती थी। दूसरे दिन सबेरे भी खाली पेट यही दवा पिलाई जाती थी। जिससे रोगी का ज्वर एकदम नष्ट हो जाता था। इकांतरा, तिजारी और चौथिया बुखार वालों को भी बुखार उतरनेके पश्चात यह दवा दी जाती थी। इस दवा का वास्तविक लाभ भूखे पेट लेनेसे ही मिलता है। इसलिए इसको हमेशा भूखे पेट ही लेना चाहिये। पिछले १८ वर्षोंमें सैकड़ों रोगियों पर मैंने इस नमक का प्रयोग किया है। जिन लोगोंने नियमपूर्वक इस दवा को ली तथा पथ्य का बराबर खयाल रक्खा, उनमेंसे शायद ही कोई रोगी निराश हुआ हो। इस सादे उपायसे हजारों रोगी आराम हुए हैं। इवीस नामक स्टीमर पर काम करनेवाले एक कर्मचारी का कई वर्षों का पुराना बुखार इस औषधि से २४ घण्टोंमें नष्ट होगया। अमेरिका के गरम भागोंमें बसनेवाले यूरोपियनोंमें मलेरिया ज्वर का बहुत प्राबल्य रहता है और क्विनाइन और शराब का व्यवहार करने पर भी उन लोगोंमें से बहुतसे लोग मर जाते हैं। मगर उनके नजदीक ही रहनेवाले जो लोग इस उपाय का अवलंबन करते हैं उनमें से अधिकांश आराम हो जाते हैं।"

डॉक्टर लीवाग लिखते हैं हमारे शरीरमें रक्त और पित्तमें आवश्यक सोडा, क्षार तथा पित्तमें रहने वाला लवण तत्व नमकके सेवनसे ही उत्पन्न होता है। नमकके बिना शरीर आरोग्य नहीं रह सकता। इसके अभावसे रक्तमें निकृष्टता पैदा होती है और ज्वर, रक्तस्राव, तथा विशूचिका इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं। इसलिये शरीरको स्वस्थ रखनेके लिये छोटी मात्रामें हमेशा इसका सेवन करना चाहिये। बड़ी मात्रामें लेनेसे यह अपना वामक, विरेचक और कृमिनाशक प्रभाव दिखलाता है। इससे भी अधिक प्रमाणमें यह उग्र और आंतोंके लिये दाह जनक होजाता है। डॉक्टर कटनके मतानुसार क्षयरोगमें नमक बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है।

नमक और कृमिरोग—

प्रतिदिन सबेरे शाम भोजन के पहिले १०।१५ रत्तीकी मात्रामें नमक सेवन करने से शरीरमें कृमि पैदा नहीं होते। आंतोंके भीतर रहने वाले बारीक कृमि नमक और पानीका एनेमा देनेसे नष्ट होजाते हैं।

अत्यधिक रक्तस्राव, क्लोरोफार्मके प्रयोग, हैजा तथा अनेक प्रकारके विषम ज्वरों में जब नाड़ी बहुत क्षीण होजाती है और शरीर ठंडा पड़ जाता है तब नमक का इंजेक्शन देनेसे आश्चर्य जनक लाभ होता है।

बिच्छूके जहरपर जब सब औषधियाँ निष्फल होजायँ तब गरम पानीमें नमक डालकर डंक वाले भागको उस पानीमें डुबानेसे शांति मिलती है पर वह पानी ठंडा न होजाय इसलिये बार २ उसमें दूसरा गरम पानी डालना चाहिये।

निमोनियां के अन्दर अगर फेफड़ोंमें बहुत वेदना होती हो तो नमककी पोटलियोंसे सेक करनेसे कफ पतला हो कर निकल जाता है। और वेदना रुक जाती है।

६० ग्रेन नमकको १ पाइंट खौलते हुए पानीमें मिलाकर फिर इसको १०० दर्जे फारेनहीट पर सर्द करलिया जाय तो एक प्रकारका नमकीन अर्क बन जाता है। बेहोशीकी हालतमें गुदा या छातीके नीचे ढीले गोश्तमें इसकी पिचकारी देनेसे अक्सर फायदा होता है। प्रसवके बादकी कमजोरी, खूनका बहना, इत्यादि रोगोंमें इस प्रयोगसे कई जानें बच गई हैं। बच्चोंके भारी कब्जमें इसकी पिचकारीसे लाभ होता है। १० छटांक पानीमें १ ड्राम नमक घोल कर लेनेसे शरीरके भीतरी रक्तस्रावमें लाभ होता है। मुंहसे होनेवाले रक्तस्रावमें आधे २ चम्मचकी मात्रामें थोड़ी २ देर बाद इसको देनेसे बड़ा लाभ होता है।

कई डॉक्टरोंका यह अनुभव है कि मृगी और आधा शीशीके रोगमें इसको १ ड्रामकी मात्रामें देनेसे कई दफे बड़ा लाभ होता है।

वमन लानेके लिये यह एक बहुत अच्छी जल्द असर करनेवाली, घरेलू दवा है। कई दफे इससे दस्तभी लगना शुरु होजाता हैं। थोड़ी मात्रामें यह पाचक और अग्नि वर्धक है। कीड़ोंको मारनेके लिये यह एक उत्तम वस्तु है। केंचुओंको निकालने और मारनेमें इसको आधे ड्रामकी मात्रामें देनेसे वड़ा लाभ होता है। धतूरे और अफीमके विषमें नमकको गरम पानीमें डालकर पिलानेसे लाभ होता है।

अगर दैवयोगसे किसीके पेटमें जोंक उतर जाय और वह आंतों या आमाशयमें चली जाय तो नमक का पानी पिलानेसे फौरन निकल आवेगी। नाइट्रेट आफ सिल्व्हरके जहर को उतारनेके लिये भी यह एक उत्तम वस्तु है।

नमक और हैजा—

आजकल की नवीन शोधों में हैजेके ऊपर हायपर—टॉनिक सोल्यूशन के इंट्रा व्हेनस इंजेक्शन देने का उपाय बहुत रामबाण माना जाता है। कॉलराके उपद्रवमें दस्त और उल्टी होकर जब रोगी की नाड़ी निर्बल हो जाती है, शरीर ठंडा हो जाता है और मृत्यु का नजारा सामने दिखलाई देने लगता है। ऐसे समयमें १ सेर जलमें (१०० तोला जलमें) २॥ तोला अच्छा निमक और उसमें थोड़ासा पोटास क्लोराइड और थोड़ासा केलशियम क्लोराइड मिलाकर हाय पोडरमिक सिरेंजके द्वारा इंजेक्शन दिया जाय तो मंत्रशक्ति की तरह काम होता है और रोगी की बचने की उम्मीद जीवित हो जाती है।

जिन स्थानों पर इस प्रकार पिचकारी देने की सुविधा न हो वहाँ पर हैजे का आक्रमण होते ही संचर मिलाया हुआ गरम जल रोगी को पिलानेसे तथा नमक मिले हुए गरम पानीसे स्नान करानेसे और प्रति दो-दो घण्टे पर नीबूके रसमें ३ माशा नमक और १० तोला जल मिलाकर पिलाने से भी बहुत अच्छा लाभ होता है। (जंगलनी जड़ी बूटी)

हैजा, प्लेग, शीतला, इनफ्ल्यूएंजा, निमोनिया, मलेरिया, इत्यादि अनेक प्रकार के रोगोंसे शरीर की रक्षा करने के लिये रक्त में जो रोग बीज नाशक शक्ति होती है वह रक्तके लाल परमाणुओंमें पाये जानेवाले लवण क्षार पर ही अवलम्बित है। जिस मनुष्य केर क्त कणोंमें से इस लवणक्षार का प्रमाण जितना कम हो जाता है उतनी ही उसके रक्त की रोग बीज नाशक शक्ति कम हो जाती है और हर प्रकार का रोग उसके ऊपर बहुत शीघ्र आक्रमण कर देता है। ऐसे रोगियोंके रक्तमें अगर वह घटा हुआ सोडियम क्लोराइड फिर से पूरा कर दिया जाय तो उसकी रोग निवारक शक्ति पुनर्जीवित हो जाती है और मनुष्य की रस क्रिया पद्धति भी सुधर जाती है।

कई लोगों को यह शंका होती है कि नमक का पानी पीनेसे वमन होती है। ऐसी स्थिति

में नमक का पानी पाचन शक्ति को कैसे तीव्र कर सकता है और वह कैसे हजम हो सकता है। इसके जवाबमें कहा जा सकता है कि पानी के अन्दर नमक का अंश अधिक होनेपर ही उसका वामक असर होता है। लेकिन यदि जलके अन्दर थोड़ी मात्रामें नमक मिलाकर गर्म किया हुआ पानी पिलाया जाय तो उसके बराबर वमन को रोकनेवाली कोई दूसरी दवा नहीं हो सकती। ४० तोले जलमें अगर एक तोला नमक मिलाकर उसको उबालकर उसको छटाँक डेढ़ छटाँक की मात्रा में पिलाया जाय तो वमन न होकर आसानी से हजम हो जाता है। अगर कोठे को शुद्ध करने के लिये वमन की जरूरत हो तो ४० तोला जलमें ४।५ तोला नमक मिलाकर उबालकर उसमेंसे २।३ छटांक पानी पिला देने से फौरन उल्टी होकर कोठे की शुद्धि हो जाती है। उसके पश्चात् सूक्ष्म मात्रा का नमक जल पिलानेसे बहुत अच्छा परिणाम नजर आता है।

निमोनिया के रोगमें रक्तमें का क्लोराइड बहुत कुछ नष्ट हो जाता है। यह बात डाक्टर लुइ कूने ने स्पष्ट रूपसे प्रतिपादित की है और इसीलिये आज-कल के कई डाक्टर निमोनिया में एमोनिया क्लोराइड, केलशियम क्लोराइड, मरक्यूरी क्लोराइड, इत्यादि औषधियों की योजना करते हैं और उससे अच्छा लाभ भी होता है। मगर यह पद्धति नुकसान दायक मानी जाती है। इसलिये इसके बदलेमें १०० तोला जल में २॥ तोला नमक या संचर मिलाकर उस पानी को धीरे धीरे पिलाया जाय अथवा नमकको अग्नि पर सेंककर काला पड़ने पर प्रतिदिन सबेरे, दुपहर और शाम को दो दो माशे की मात्रामें दिया जाय तो निमोनिया और मलेरिया दोनोंमें अच्छा लाभ होता है।

कफ प्रधान ज्वरमें अनेक अमेरिकन डाक्टर केलशियम सलफाइड का उपयोग करते हैं और देशी वैद्य खास कर लोकनाथ रसको व्यवहार करते हैं। इसमें भी केलशियम सलफाइड की मात्रा विशेष होती है। इसलिये जहांपर ये वस्तुएं न मिल सके वहां पर ऊंची लाल जाति का संचर उपयोगमें लेनेसे अच्छा लाभ होता है।

नमक और इनफ्ल्यूएंभा—

नमक को जलाने से उसमें से क्लोरिन गेस निकल कर हवामें मिलती है। यह हवा श्वासोच्छ्वासके द्वारा शरीरमें जाती है। अगर इसमें गेस का परिमाण अधिक मात्रामें होता है तो यह मनुष्य को बेहोश कर देती है। लेकिन यदि गेस का परिमाण साधारण यात्रामें होता है तो यह अनेक रोगों को नष्ट करनेमें उपयोगी सिद्ध होती है।

मनुष्य के गलेमें सबसे अधिक रोग कीटाणु रहते हैं और यह दवा उसी रास्तेसे भीतर जाती है। अगर इसमें क्लोरिन का अंश साधारण मात्रामें होता है तो यह गलेमें रहनेवाले रोग कीटाणुओं को नष्ट कर मनुष्य को स्वस्थ रहनेमें सहायक होती है। नमक का धुआं इनफ्ल्यूएभां की एक सर्वोत्तम दवा मानी जाती है। बम्बईके प्रसिद्ध रसायन शास्त्री

स्वर्गीय टी. के. गज्जर ने इनफ्ल्यूएंझा की रामवाण दवा टरक्लोराइड का नुस्खा एक कम्पनी को ५० हजार रुपये में वेचा था। इस औषधिमें भी नमक की ही प्रधानता थी। ईसवी सन् १६१३ से लेकर, १७ तक चलने वाले महायुद्धमें जिन सोल्जरों को क्लोरिन गेस या नमक का धुआं लग गया था उनको इन्फ्यूएंझा विलकुल नहीं हुआ। सन १६१७ और १८ में भारतवर्षमें इन्फ्ल्यूएंझा का दौरा वहुत भयंकर रीतिसे आया। और उस समय हजारों लाखों मनुष्यों की जाने इस भयंकर रोग की वलिवेदी पर वलिदान हो गई थी। पीछे मालूम हुआ कि अगर हवाके अन्दर क्लोरिन गेसका अंश हो तो इस रोगसे वहुत आसानी से मुक्ति हो सकती है। इसलिये यह रोग जव चलता हो तव अस्पतालों नाटकशालाओं, स्कूलों व सिनेमा घरोंमें क्लोरिन गेस छोड़ते रहनेसे इस रोगपर विजय प्राप्त की जा सकती है। क्लोरिन गेस की टंकी या सिलेंडर भरा हुआ तैयार मिलता है। इसी प्रकार रंग वेचने वालोंके यहां इसका व्लीचिंग पाउडर भी वेचा जाता है। नमक को अग्निके ऊपर डालने से यह क्लोरिन गेस वहुत आसानीसे प्राप्त किया जाता है। इस गेस से ब्रोंकाइटीज, निमोनियां, इत्यादि श्वास मार्गसे सम्वन्ध रखने वाला कोई रोग नहीं होता है।

मगर यह खयाल रखना चाहिये कि इस गेस की मात्रा हवाके अन्दर १ लाख भागमें १ भाग होना चाहिये। इससे अधिक मात्रा मनुष्य के लिये प्राणघातक होती है।

एक वार ग्वालियरमें सर्दी का रोग चला था और उससे लोगों को खांसीकी शिकायत होजाती थी। डॉक्टरों को यह मालूम होते ही वहां एक कमरा तैयार किया गया और उसमें पचास २ रोगियोंको वैठा २ कर नमक का धुआं या क्लोरिन गेस छोड़ना प्रारभकी। उसमें श्वासोच्छवास लेनेसे २४ घंटेके अन्दर उन लोगोंकी सर्दी और खांसी मिट गई। इसी प्रकारके अनेकों उदाहरणों से इस सिद्धांत पर छाप लग गई कि क्लोरिनगेस अर्थात् नमक का धुआँ सरदी, जुकाम नाककी सूजन, खांसी, हूपिंग कफ, इन्फ्ल्यूएंझा, निमोनिया और क्षयके जंतुओं को नष्ट करता है और उनको वढ़नेसे रोकता है। वहुतसे रोगियों को एक ही बार गेस देनेसे आराम होजाता है। कई रोगियोंको एकसे अधिकवार देना पड़ती है और कई रोगी ऐसे होते हैं जिनको अनेक वार देने पर भी कुछ लाभ नहीं होता।

इस प्रकार छूतके तथा दूसरे रोगोंसे बचनेके लिये संचर और सेंधा नमक यह एक वहुत अच्छा इलाज है। ऐसी खोजें पश्चिमी देशों में इस नवीन युगमें हुई है। (जंगलनी जड़ी वूंटी)

क्लोरिनगेस नियमित मात्रासे अधिक मात्रामें पहुँचने पर प्राण घातक हो जाती है। इस लिये इसको नियमित मात्रामें देनेके लिये यूरोपमें क्लोरिनटयूव्स वनाई जाती है। ऐसी टयूवमें से ७ वारमें इतना गेस छोड़ा जासकता है जिससे १० फीट लंवे, १० फीट चौड़े और १० फीट गहरे कमरेमें १ लाख भाग हवामे १ भाग क्लोरिनके हिसाबसे गेस फैल जाती है।

श्वास नलीके सारे विस्तार पर जो हलका गीलापन होता है उसीमें रोगके जंतु रहते हैं और बढ़ते हैं। इस गेस वाली हवामें यह गुण है कि यह उस सारे विस्तार पर लगकर सब प्रकारके रोग जंतुओं को नष्ट करदेती है।

मुजिर—नमक दिमाग और फेंफड़ेके लिये हानिकारक वस्तु है। कमजोर आदमीको भी यह नुकसान पहुँचाता है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नष्ट करनेके लिये तर और चिकनी चीजोंका उपयोग करना चाहिये।

मात्रा—इसको मात्रा १ माशेसे ७ माशे तक है।

नमक काला (संचर)

नाम:—

संस्कृत—अक्ष, सौवर्चल, रुच्य, दुर्गन्ध, कृष्ण—लवण, शूलनाशन, तिलक. विघगन्ध, इत्यादि। हिन्दी—काला नोन, चोहारकाड़ा, संचर नोन। बंगाल—संचर लवण। मराठी—पादे लोण। गुजराती—संचल। फारसी—नमकशिया, संचर नमक। करनाटकी—सावचल। तेलगू—नालु बुपु। लेटिन—Vnaqua Sodii, Chloridum. अनाकासोडी क्लोरिडम।

वर्णन—

फ़ारसी ग्रन्थोके मतानुसार यह एकप्रकारका काले रंगका नमक होता है जो सज्जी, सुहागा, आंवला, पियावांसाके पत्ते और नमक साम्हरके मिश्रणसे बनाया जाता है। जवाहरुल अदवियामें इसके बनानेकी तरकीब इसप्रकार लिखी है।

नमक साम्हर ४ पौंड, सूखा आंवला ५ औंस दोनोंको मिलाकर ४ हिस्से करें। १ हिस्से को हांडीमें रक्खें और आंच दें। जब दोनों खूब घुल जांय तो बाकी हिस्सोंको भी थोड़ा २ ऊपर डालते जायँ।३।४ घन्टेकी आंच देकर उसको ठंडा करलें।

जङ्गलनी जड़ी बूटीके लेखक लिखते हैं कि सनाय, कालीहरड़ और संचर खार इन तीनोंका मिश्रण, देहातोंमें सचरके नामसे मशहूर है। *

नोट—उपरोक्त दोनों वर्णनोंसे हमारा मतभेद है। हमारे यहाँ काला नमक और संचर नमक अलग २ माना जाता है। काला नमक सेंधे निमककी तरह बड़े २ ढेलोंमें आता। उसका रंग कुछ कालापन लिये हुए होता है और संचर नमक पापड़खार कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदके मतसे काला नमक उष्णवीर्य, रोचक, दीपन, पाचन, वातनाशक, हृदयको हितकारी, सुगन्धित, दस्तावर तथा गुल्म, शूल, विवन्ध, अफारा, अरुचि कृमि, और उदावर्तको नष्ट करता है।

यूनानी मत—

यूनानीमतसे यह दूसरे दर्जेमें गरम और खुश्क होता है। हाजमेंकी शक्तिको बढ़ाता है, वायुको नष्ट करता है। दस्त लाता है, पेटके फुल्लावको दूर करता है। हृदयके लिये लाभदायक है।

बनावटें—

नमक सुलेमानी—७० तोला उत्तम नमक लेकर अच्छी तरह सेंकना चाहिये। फिर एक रकाबी में उसको भरकर, उस रकाबी को कोयलेके अंगारोंसे भरी हुई सिगड़ी पर रखकर जब तक आग ठंडी न हो जाय तबतक पड़ी रहने देना चाहिये। फिर सेंधा नमक १० तोला, नौसादर १० तोला, राई १० तोला, अजमोद ६ तोला, काली मिरच ४॥ तोला, सफेद मिरच ३॥ तोला, अजखर ४॥ तोला और अमरवेल, जटामासी, भुनी हींग, स्याहजीरा ये चारों चीजें पौने दो दो तोला। तज, जीरा, कुसुमके वीज, सोंठ मुलेठी और सोया ये सब सवा २ तोला। इन सब चीजों का चूर्ण करके उस नमकमें मिला देना चाहिये। फिर उसको १ चीनी की बरनी में भरकर उस बरनी का मुँह मजबूती से बन्द करके जौ से भरे हुए कोठेमें ४० दिन तक गाड़ देना चाहिये।

यह औषधि जितनी पुरानी होती है उतनीही अच्छी होती है। इसको ८।६ रत्ती की मात्रामें आधे पकाये हुए अण्डेके साथ देनेसे मनुष्य की कामशक्ति बहुत प्रबल होती है। भोजनके साथ इसको लेनेसे मंदाग्नि, बदहजमी, पेट का आफरा, उदर शूल, विस्मृति विप, विकार इत्यादि रोग दूर होते हैं।

वज्रक्षार—समुन्दर नमक, सेंधा नमक, काचनमक, संचर नमक, जौखार, सुहागा, सज्जी। इन सबको समान भाग लेकर ३ दिन तक आंकड़े के दूधमें और ३ दिन तक थूहरके दूधमें खरल करना चाहिये। फिर इस औषधि का आंकड़े के सूखे पत्तों के ऊपर गाढ़ा २ लेप करके सुखा लेना चाहिये। फिर उन पत्तों को सराव सम्पुट में रखकर कपड़मिट्टी करके गजपुट में फूंक देना चाहिये। सब शीतल हो जाने पर औषधि को निकाल उसको बारीक पीस लेना चाहिये। उसके पश्चात् उसमें सोंठ, मिरच, पीपर, हरड़, बहेड़ा, आंवला, जीरा, हलदी और

चित्रक की मूल इन सब चीजों को समान भाग लेकर चूर्ण करके जितना ऊपरवाले चूर्ण का वजन हो उससे आधा इस चूर्ण को उसमें मिला देना चाहिये। फिर इस सब चूर्ण को बारीक खरल करके बोतलों में भर देना चाहिये।

इस चूर्णको ३ माशेकी मात्रामें गौमूत्र या कुमारी आसवके साथ लेनेसे सब प्रकारके उदर रोग, वायु गोला, शूल, अग्निमांद्य और अजीर्ण का नाश होता है। वायु प्रधान रोगों में इसको गरम जलके साथ, पित्त प्रधान रोगोंमें घीके साथ, कफ प्रधान रोगों में गौमूत्रके साथ और त्रिदोषज रोगों में कांजीके साथ दिया जाता है।

इस प्रकार संचर नमक, सेंधा निमक वगैरे नमकों में कई प्रकारके अमूल्य गुण रहते हैं। फिर भी रक्त विकार, सूजन, जलोदर इत्यादि रोगों में यह वस्तु बहुत नुकसान दायक होती है। इसलिये ऐसे रोगोंमें इसका उपयोग भूल करके भी नहीं करना चाहिये।

नमक साम्हर

नाम:—

संस्कृत—शाकम्भरीय, साम्भर, वसुक, रोम लवण, इत्यादि। हिन्दी—साम्हर नमक। बंगाल—सामलुण। मराठी—साम्हरमीट। गुजराती—वड़ागरुमीट। करनाटकी—गाढ़लवण। फारसी—मिलहे अवकील।

वर्णन—

साम्हर झीलके अन्दर जो नमक पैदा होता है वह साम्हर नमक कहलाता है। दैनिक खाने पीनेके काममें प्राय: यही नमक काममें आता है।

गुण दोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे साम्हर नमक दीपन, गरम, कोठेको साफ करने वाला, हलका, किंचित खट्टा, अभिष्यन्दी, पाकमें कड़वा, तीक्ष्ण, पित्तकारक, भेदक, कफ नाशक, सूक्ष्म तथा बवासीर, कफ, मल और वातको दूर करने वाला होता है।

नमक दरियाई (समुद्रनोन)

नाम:—

संस्कृत——समुद्र लवण, त्रिकूट, वशिर इत्यादि। हिन्दी—समुद्रनोन, पांगा। बंगाल—करकचनून। मराठी—मीठा। गुजराती—मीठूं। तेलगू—उदूं। फारसी—नमक। अरबी—मिलहशारा। लेटिन—Sodia Imuras (सोडिया इम्यूरस)।

वर्णन—

समुद्रके पानीमें से बनाये वाले नमकको समुद्र नमक कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे समुद्र नमक रुचिदायक, पचनेमें मधुर, तेज, कड़वा, स्वादिष्ट, भारी, किंचित गरम, दीपन, भेदक, खारा, कफ पैदा करने वाला, वात नाशक, कड़वा, रूखा और कुछ शीतल होता है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क है। भूखको बढ़ाता है पाचक है,पेटकी वायुको तोड़ कर निकाल देता है। दस्तावर है, शरीरके रोम छिद्रोंमें जल्दी घुस जाने वाला है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन खुजली पैदा करता है।

दर्पनाशक—घी, दूध, इत्यादि चिकने पदार्थ।

—

नमक बीड़

नाम—

संस्कृत—बीड़लवण। हिन्दी—विरया संचर नोन, कटीला नोन। बंगाल—विटनुन। मराठी—बीड़लोण। गुजराती—विड़लवण।

वर्णन—

शालिग्राम निघंटुके मतानुसार बीड़लवण प्रसारणीके क्षारसे बनाया जाता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतानुसार बीड़लवण हलका, गरम, रुचिकारक तीक्ष्ण अग्निदीपक. वात नाशक, रूक्ष तथा शूल, वात, प्रमेह, गुलम अजीर्ण, कब्जियत, हृदयरोग, जड़ता, कफ और दाद को दूर करने वाला है।

नमक काचिया

नाम :--

संस्कृत—काच लवण। हिन्दी—कचिया नोन। बंगाला—काला नोन। मराठी—वाँगड़ खार। गुजराती—बंगड़ी खार।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकके मतसे काचिया नमक रुचिकारक, कुछ खारा, पित्त जनक तथा दाह, कफ, वात, गुल्म और शूल का नाश करता है और दीपक है।

नमक खारी

नामः—

संस्कृत—औशर लवण। हिन्दी—खारी नोन। उस, बंगाल-खारी नोन। मराठी—खारादि मीठ। फारसी—वोरेअरमनी। अंग्रेजी—Carbonate of Soda लेटिन—Sodium Carbonas (सोड़ियम कारबोनाज)।

वर्णन—

खारा नमक ऊसर भूमिमें अपने आप पैदा होता है। इसको ऊस भी कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

खारी नमक कड़वा, वात, कफनाशक, दाह जनक, पित्त कारक, ग्राही और मूत्रको को सुखाने वाला होता है।

निमक का तेजाब

वर्णन—

खाने का निमक, तेजाव और गन्धक को मिलानेसे जो भाफ वनती है उसको पानीमें सोख लेनेसे यह तेजाव बनता है। असली नमक का तेजाव विलकुल साफ और पीले रंग का होता है। इसकी वोतल का मुंह खोलने से सफेद और तेज धुआं निकलता है। इसका स्वाद विलकुल खट्टा और तेज होता है। यह पानीमें करीव ३२ प्रतिशत घुलन शील होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

गले के अन्दर होने वाली प्राण घातक वीमारी डिप्थीरिया जिसको संस्कृत में रोहिणी रोग कहते हैं उसको जलाने के लिये इसको गलेके अन्दर लगाया जाता है। जवान पर होने वाले खराव जख्मों पर भी यह लाभ दायक है। निखालिस तेजाव वहुत तेज होता है और वह खिलाया नहीं जा सकता। इसको खिलानेके लिये २ भाग पानीमें १ भाग तिज़ाव मिलाकर डायल्यूटेड हाइड्रोक्लोरिक एसिड तैयार करते हैं। इसको ज्वरमें, वदहजमीमें, पेटके कृमियों को नष्ट करनेके लिये और यकृतके रोगों को दूर करनेके लिये दिया जाता है। डायल्यूटेड हाइड्रोक्लोरिक की मात्रा ५ बूंद से ३० बूंद तक होती है।

—

नरसल

नाम—

संस्कृत—विभीषण, छिद्रांत, दीर्घवंश, देवनाल, धामन, कीचक, कुच्छिरन्ध्र, लालवंश, महानल, नट, मृत्युपुष्प, वंशपत्र, इत्यादि। हिन्दी—नरसल, नल, वड़ा नरसल। गुजराती—नली। मराठी—देवनल, नल, ढवल.। वंगाल—नल, वड़ानल। मलयालम-काट्ट पुगइल। तामील—काट्टपुइले। तेलगू—अड़विपोगाकु। अंग्रेजी—Wild Tobacco लेटिन—Lobelia Nicotianaefolia (लोवेलिया निकोटिएनेइफोलिया।

वर्णन—

यह वनस्पति हिन्दुस्तान की दक्षिणी टांक और लंकामें पैदा होती है। इसके पौधे जलाशयके निकट जंगलोंमें पैदा होते हैं। इसके पत्ते ईखके पत्तोंके समान होते हैं। इसकी आकृति भी ईखके ही सदृश होती है। मगर यह ईखसे ऊंचाई में दुगुना, तिगुना होता है। इसके ऊपर १ फुट भर लम्वा सफेद रंग का तुर्रा होता है। इसकी लकड़ी भीतरसे पोली होती

है। इसकी डाली को तोड़नेसे भीतरसे सफेद रंग का दूध की तरह चीप निकलता है। इसकी २ जातियां होती हैं। एक छोटी और दूसरी बड़ी।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे छोटा नस्सल शीतल, रुचिकारक, कसेला, मधुर, वीर्यवर्धक, कड़वा, अग्निदीपक, मूत्रशोधक और विसर्प, मूत्रकृच्छ्र दाह, रुधिरविकार, पित्त, कफ, हृदयरोग, वस्तिशूल, योनिरोग और रक्तपित्त को नष्ट करता है।

बड़ा नरसल अत्यन्त मधुर, वीर्यवर्धक, किंचित् कसेला, [छोटे नरसलकी अपेक्षा अधिक शक्तिशाली और रसक्रियामें उत्तम होता है।

यह वनस्पति संकोचविकास प्रतिवंधक, कफनाशक और वामक होती है। शरीर पर इसकी क्रिया तम्बाकूसे मिलती जुलती होती है। श्वासोच्छ्वासके केन्द्र स्थान पर इसकी क्रिया प्रत्यक्ष दिखलाई देती है। छोटी मात्रामें देनेसे यह पहले रक्तके दवावको चढ़ाती है और वाद में कम करती है। इससे पसीना छूटता है और पेशावकी मात्रा बढ़ती है। वड़ी मात्रामें देने से दस्त होते हैं, वमन होती हैं और नाड़ी शिथिल हो जाती है। कभी कभी यह प्राणघातक भी हो जाती है।

दमेके लिये यह वनस्पति वहुत उपयोगी है। इससे श्वासनलिकाके संकोचविकासकी कमी हो जाती है और कफ निकल जाता है जिससे रोगीको शांति मिलती है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से यह साधारण हालतमें सर्द और खुश्क और जली हुई हालतमें गर्म और खुश्क होता है। यह आंखोंको ताकत देता है। पित्त और खूनके जोशको शांत करता है। योनिके मैलको साफ करता है, पेशाव लाता है, कुष्टमें लाभदायक है इसकी दूसरी जाति कब्जको दूर करती है, धातुवर्धक होती है. पेशावमें शक्कर जानेको रोकती है, सूजन को बिखेरती है और हरकिस्मकी गठियामें लाभदायक है। इसकी कोंपल कफके साथ खून जानेको दूर करती है, खांसी और उपदंशमें लाभ पहुँचाती है पेशावकी नालीके दर्दको दूर करती है। इसको तिलोंके तेलमें पकाकर गठिया पर लेप करनेसे लाभ होता है।

मुजिर—अधिक मात्रामें लेनेसे यह वामक और प्राणघातक हो जाती है।

दर्पनाशक—कतीरा।

नलीर

नाम—

यूनानी—नलीर।

बयान—

यह एक वेल होती है जो दूसरे वृक्षों पर चढ़ती है। इस वेलमें गठाने होती हैं और हर गठानके पास १ छोटा और सख्त पत्ता होता है। इसको चवानेसे जवान पर बहुत खुजली होती है। इसका स्वाद तेज और खट्टा होता है।

गुणदोष और प्रभाव :—

यह वनस्पति क्षुधावर्धक और मेदेको ताक़त देनेवाली होती है। खांसी, दमा, वात, पेटके कृमि, ववासीर और भोजनके वाद होनेवाली वमनको यह दूर करती है। इसकी जड़ कानके दर्दको दूर करती है। इसकी चटनी और आचार भी वनाया जाता है।

नलिकोरा

नाम:—

यूनानी—नलिकोरा।

बयान—

यह वनस्पति पहाड़ों पर पत्थरोंकी दर्जों में ऊगती है। इसकी शाखाएँ जमीन पर बिछी हुई रहती हैं। इसके पत्ते लाल मिरचीके पत्तोंसे मिलते जुलते रहते हैं। इन पत्तोंमें तुलसीके पत्तोंके समान गंध आती है। इसका स्वाद मीठा और कुछ कड़वा होता है। इसके अन्दर चेप भी रहता है। इसका शाक वनाकर भी खाया जाता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह वनस्पति त्रिदोपनाशक, क्षुधावर्धक, दस्त साफ लानेवाली, दांत और मुंहकी वीमारियोंमें लाभदायक और दमेको दूर करनेवाली होती है।

नरगिस

नामः—

हिन्दी—नरगिस। लेटिन—Narcissus Tazetta. (नरकिसस टेजेटा)।

वर्णन—

यह एक खुशबूदार फूलका वृक्ष होता है। इसके पत्ते, डाली, जड़ और बीज प्याजके समान होते हैं। इसके फूल बहुत खुशबूदार होते हैं। इसके पत्ते सफेद नीले और पीले रंगके होते हैं। यह बसन्तऋतुमें खिलता है। इसकी नर और मादा दो जातियां होती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानीमत-इसके फूल और पत्ते पहले दर्जेमें गरम होते हैं। इसके बीज बहुत गरम और खुश्क होते हैं। यह वनस्पति कफके कोपको नष्टकर देती है। इसका फूल सूंघनेसे सर्दीका जुकाम और नजला मिट जाता है। कुछ हकीमों का मत है कि इसे हमेशा सूंघा जाय तो जाड़ों में भी जुकाम न हो। सिर दर्द, गंज और खुजली में भी यह लाभदायक है। इसको आंखमें लगाने से नाखुना मिट जाता है। शरीरमें यदि कांटा या कील घुस गई हो तो इसके रसको लगाकर खींची जा सकती है। नरगिस की जड़को गायके दूधमें ८ प्रहर तक पकाकर फिर पीसकर कामेन्द्रिय पर लगाया जाय तो कामेन्द्रिय में बहुत जोश पैदा होता है और उसकी मोटाई और लंबाई बढ़ती है। इसकी जड़ को ३ माशे की मात्रामें पीसकर शहदके साथ देनेसे गर्भाशयसे मरा हुआ बच्चा निकल जाता है। मादा नरगिस को बारीक पीसकर जखम पर भुरभुरानेसे बहता हुआ खून बन्द हो जाता है। इसको योनिमें लेप करनेसे गर्भाशयके दोष निकल जाते हैं। इसको शहदमें पीसकर आगसे जले हुए स्थान पर लगानेसे शांति मिलती है। मादा नरगिस वमनकारक औषधियों में एक है।

नरगिस का तेल छाती पर मालिश करनेसे सीनेके परदों की वरम दूर हो जाती है। इसको गर्भाशयमें रखनेसे गर्भाशय का मुंह खुल जाता है। नरगिस के बीज कामशक्ति को उत्तेजना देनेवाले होते हैं।

मुजिर—नरगिस का फूल सूंघनेसे गरम मिजाज वालों को सिरदर्द पैदा होता है और दिमाग को भी नुकसान पहुँचता है।

दर्पनाशक—बनफशा, कपूर और नीलोफर।

मात्रा—६ माशे।

नमाम

नामः—

यूनानी—नमाम।

वर्णन—

यूनानी हकीमोंके मतसे यह रीहां (बन तुलसी) की जाति की वनस्पति है। इसके बीज रिहांके बीज से कुछ छोटे होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानीमत—यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है, वायुको बिखरेता है, पेटके कीड़ोंको नष्ट करता है, दोषोंको मुलायम करता है, पेशाब लाता है हृदयको शक्ति देता है, मरे हुए बच्चेको गर्भाशयसे निकालता है वमन, मतली और हिचकीको शांत करता है, यकृतकी सूजन, तिल्ली और सीनेके दर्दमें मुफीद है, गुर्दे और मसानेकी पथरीको तोड़ता है। शहद और पानीके साथ इसको देनेसे बिच्छूके विषमें और शिकंज बीनके साथ देनेसे ततैयेके विषमें लाभ पहुँचाता है।

सरदीकी सूजन और कफके दोषोंमें यह लाभदायक है। इसके लेपसे चेहरेकी कांति बढ़ती है। बनफशाके साथ इसको लेनेसे हृदयको शक्ति मिलती है। आमाशयकी खराबीसे पैदा हुई हिचकी को यह दूर करता है। इसके बीजोंको पीसकर यकृतकी सूजन और तिल्ली पर लगानेसे लाभ होता है। ७ माशेकी मात्रामें इसको सिरके के साथ लेनेसे खूनकी वमन रुक जाती है। पेटमें पड़ने वाले हर जातिके कीड़ोंको यह मारकर निकाल देता है। इसकी जंगली जाति बूंद २ पेशाब आनेकी बीमारीको दूर करती है। नमामका तेल बालोंपर लगाने और शरीर पर मलने से शक्तिदायक वस्तुका काम करता है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन फेंफड़े और गुर्देको नुकसान पहुँचाता है।

दर्पनाशक—कतीरा और बनफशा।

प्रतिनिधि—जंगली तुलसी।

मात्रा—बीजोंकी ४ माशे, पत्तोंकी १२ माशे।

नल ईश्वरी

नाम—

तेलगू—नल ईश्वरी। लेटिन—Aristolochia Tagala एरिस्टोलोकिया टेगेला)।

वर्णन—

यह ईश्वर मूलके वर्गकी एक वनस्पति होती है। इसकी झाड़ीनुमा वेल होती है। यह बंगाल, आसाम, सिलहट, बरमा और सीलोनमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका पौधा आंतोंकी शिकायतों को दूर करनेके उपयोगमें लिया जाता है।

नहानीखपट

नाम:—

संस्कृत—जया, जयंती, । गुजराती—नहानीखपाट, भोंयकांसकी, भोंयखपाट। कच्छी—पटखापटा। अंग्रेजी—Americanjute. Indian Mallow लेटिन—Abutilon Avicennae (एब्यूटिलन एविसिनेइ)।

वर्णन—

यह अतिबलाकी एक छोटी जाति होती है। इसके पौधे १ से लेकर २ हाथ तक ऊंचे होते हैं। इसके पत्ते अतिबलाके समान मगर बहुत कोमल और सुहावने होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

देहाती लोग इसकी जड़ की छालका क्वाथ काली मिरचके साथ सर्पविष को दूर करनेके लिये पिलाते हैं। इस वनस्पतिके दूसरे उपयोग अतिबल या बलबीजके समान ही होते हैं।

नन्हा झुनका

नाम :—

बंगाल—छोटा झुंझन। संथाल—नन्हा झुनका, खेतिका झुनका। तेलगू—सेरीगेली गिस्टा। लेटिन—Crotalaria Prostrata (क्राटालेरिया प्रोस्ट्रेटा)।

वर्णन—

यह सनकी जाति का ही एक पौधा होता है जो हिन्दुस्तान के शुष्क प्रान्तों, बरमा और सीलोनमें पैदा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

मुंडा जातिके लोग इस वनस्पतिको एक अग्निवर्धक औषधि की तरह काममें लेते हैं। बच्चोंके प्रवाहिका अतिसारमें यह विशेष रूपसे काममें ली जाती है।

नत्ता तिवसा

नाम :—

तेलगू—नत्तातिवसा। लेटिन—Cryptocoryne Spiralis (क्रिप्टोकोरिने स्पिरेलिस)

वर्णन—

यह क्षुद्र जाति की वनस्पति दक्षिणभारत और सीलोनमें पानीके गड्ढोंके किनारे पैदा होती है। इसके पत्ते शल्याकृति और नोकदार होते हैं। इसका स्वाद तीखा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

सीलोनके अन्दर यह एक मशहूर वनस्पति है। वहांके देशी वैद्य दूसरी औषधियोंके साथ इसका काढ़ा बनाकर बच्चों की वमन और खांसी रोकनेके लिये देते हैं। बड़े आदमियों की उदार सम्बन्धी शिकायतोंको दूर करनेके लिये तथा ज्वरमें इस औषधि का उपयोग होता है।

कर्नल चोपराके मतानुसार यह वनस्पति इपिकेकोनाकी प्रतिनिधि मानी जाती है। लेकिन न तो यह वामक है और न यह कफ निस्सारक है।

नरमा

नामः—

संस्कृत—उद्यानकार्पास। हिन्दी—नर्म, नरमा। मराठी—देवकापुस। बंबई—देवकपास। बुंदेलखंड—बुजाली, नरमा। मध्यभारत—देवमनुआ। ढाका—बोराइली। मलयालम-चेंपारुटी। सीमाप्रांत—मनुआ, नरमा। पंजाब—कपास। संथाल-भोगाकुस कोम, बुदीकसकोम। तामील—सेंबारुटी। तेलगू—पट्टी। अंग्रेजी—Tree cotton लेटिन—Gossypium Arboreum (गाँसिपियम आरबोरियम)।

वर्णन—

यह कपासकी जातिकी एक वनस्पति होती है मगर इसका वृक्ष बहुत बड़ा होता है और कई वर्षो तक टिकता है। इसका वृक्ष झाड़ीनुमा होता है। इसके पत्ते और फल भी साधारण कपासकी अपेक्षा बड़े होते हैं। इसके फूल लाल रंगके होते हैं। इसकी रूई बहुत मुलायम होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानीमत—यह पहले दर्जेमें गरम और दूसरे दर्जेमें खुश्क होता है। इसके पत्ते सूजनको बिखेरते हैं, मासिकधर्मको साफ करते हैं। इसकी जड़का काढ़ा पिलानेसे बुखार मिट जाता है। इसके पत्तोंको कालीजीरीके साथ पीसकर लेप करनेसे बुखारके बाद होनेवाले फोड़े फुन्सी मिट जाते हैं। इसके पत्तोंको दूधके साथ पीसकर पिलानेसे पेशाबकी तकलीफ दूर हो जाती है।

साधारण कपासकी अपेक्षा इस वनस्पतिमें स्निग्धता अधिक होनेकी वजहसे इसके पत्ते और इसकी जड़ें लेप करनेके उपयोगमें बहुत ली जाती हैं। जखम भरनेके लिये इसके कोमल पत्तोंको पनड़ीके पत्तोंके साथ पीसकर बांधते हैं। शरीरमें खुजली होने पर इसके पत्तोंको अरण्यजीरक या बावचीके साथ पीसकर उसका उबटन लगाया जाता है। बिच्छू काटने पर इसकी जड़को मनुष्यके पेशाबमें उबालकर दंश स्थान पर लेप किया जाता है और पत्तोंको पीसकर जहां तक जहर चढ़ जाता है वहां तक मालिश किया जाता है। सुजाकमें इसके पत्तोंको दूधके साथ पीसकर देते हैं। बच्चोंके नेत्राभिष्यंद रोगमें इसके पत्तोंको मांके दूध में पीसकर लेप करते हैं। इसके बीजोंको जीरा, सोंफ और वंशलोचनके साथ घोटकर पानीमें छानकर पिलानेसे सुजाकमें लाभ होता है।

बम्बईमें इसकी जड़ ज्वरको दूर करनेके काममें उपयोगमें ली जाती है।

इसकी रूई अग्निदग्ध घाव और दूसरी सर्जिकल बीमारियोंमें बाह्य उपचारके लिये बहुत उपयोगी वस्तु है। इसके बीज सुजाक, पुरातन प्रमेह, पुरातन मुत्राशय प्रदाह, क्षय और कुछ जुकाम सम्बन्धी बीमारियों पर अच्छा काम करते हैं।

नरक्याऊद

नाम :—

हिन्दी—नरक्याऊद। नीलगिरी—खोमनिग। तामील—कोडाइतानी। कनाड़ी—गब्बू-चेक्के, नरकाभू तेल। नेपाल—सुकर। लेटिन—Gironniera Reticulata. (गिरोनिएरा रेटिक्यूलेटा)।

वर्णन—

यह वृक्ष हिमालयमें, भारतके दक्षिणी टोक पर और लंकामें पैदा होता है। इसकी लकड़ी फीकी उदी रंगकी होती है और उसमें विष्ठाके समान दुर्गन्ध आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

लङ्काके अन्दर यह वनस्पति एक प्रभावशाली औषधिकी तरह काममें लीजाती है। दाद, खाज, खुजली इत्यादि रोगोंको दूर करनेके लिये तथा रक्तको शुद्ध करनेके लिये और रक्तकी गरमी को निकालनेके लिये इसकी लकड़ीको नीमके रसमें उबाल कर अथवा नीबूके रसमें मिलाकर देते हैं।

नवल

नाम :—

बम्बई—नवल। मुण्डारी—बुतरेदा, बुतसाद, तुइसंगा। लेटिन—Merremia Vitifolia. (मेरीमिया विटिफोलिया)।

वर्णन—

यह वनस्पति सीलोन और मलायामें विशेष तौरसे पैदा होती है। भारतवर्षमें भी कहीं २ यह मिलती है। यह एक झाड़ीनुमा पौधा होता है।

गुणदोष, और प्रभावः—

यह वनस्पति मूत्रकृच्छ, पथरी और पेशाव सम्बन्धी बीमारियोंमें उपयोगी मानी जाती है।

कोकणमें इसका रस ठंडा और मूत्रल माना जाता है। इसको दूध और शक्करके साथ दिया जाता है। इसके रसमें १ हिस्सा चूनेका पानी, आधा हिस्सा अफीम और चौथाई, हिस्सा ममीरा (Copti Teeta) मिलाकर एक प्रकारका लेप तैयार किया जाता है जो आंखों की सूजनको दूर करनेके लिये आंखोंके आसपास लगाया जाता है।

छोटा नागपुर की मुण्डा जाति के लोग इसकी जड़को उदरशूल दूर करने के काम में लेते हैं।

नन्द्रू

नाम—

पंजाब—वजरवंग, दंदर्वा, खरदाग, लेंगटेंग, नन्द्रू शोलर। लेटिन—Physochlaina Praealta (फिसोक्लेइनाप्रेइलटा)

वर्णन—

यह वनस्पति काश्मीरमें १२ हजार फीटसे साढ़े पन्द्रह हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके पत्ते जहरीले माने जाते हैं और ये बाल तोड़, फोड़ा और स्फोटक पर लगाने के काममें लिये जाते हैं। इनके स्पर्शसे मुंह पर सूजन आजाती है और इनके खानेसे गले और सिरमें विकृति पैदा हो जाती है।

नलेतिगे

नाम—

तेलगू—नलेतिगे, पेड्डागुमड्डी। उरिया—टकुआनोइ। लेटिन—Vitis Pallida (व्हिटिस पेलिडा)।

वर्णन—

यह एक झाड़ीनुमा वनस्पति होती है। इसके पत्ते ७.५ से १५ सेंटिमीटर तक डायमीटर के रहते हैं। इसके बीज मटरके समान होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति गठिया और सन्धिवात में उपयोगमें लीजाती हैं।

नरवेल

नाम—

बम्बई—नरबेल। लेटिन—Viburnum Foetidum (व्हिबुरनम फोइटिडम)।

वर्णन—

यह वनस्पति खासिया पहाड़ियां और आसाममें ३ हजार फीट से ५ हजार फीट की ऊंचाई तक होती है। यह एक झाड़ी होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति चरपरी कड़वी और संकोचक होती है और ऋतुस्राव को नियमित करनेके काममें ली जाती है। इसके पत्तों का रस एक वाइन ग्लास की मात्रामें रोजाना पीने से अत्यधिक रजश्राव और प्रसूतिके बाद होनेवाला रक्तस्राव बन्द हो जाता है।

नलिका

नाम—

संस्कृत—नलिका, विद्रुमलता, कपोत चरणा, अञ्जनकेशी, धमनी इत्यादि। हिन्दी—नलिका। करनाटक—वेसनलिके।

वर्णन—

यह सुगन्धि द्रव्य उत्तर खण्डमें नली नामसे प्रसिद्ध है। इसका स्वरूप मूंगेके समान होता है। कहीं कहीं इसे प्रवाली भी कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे नलिका चरपरी, कड़वी, तीक्ष्ण, मधुर, दस्तावर, हलकी, शीतल, नेत्रों को हितकारी तथा वातपित्त, रक्तपित्त, कृमि, विष, कफ, वातोदर, शूल, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, रुधिर विकार, तृषा, खुजली, कोढ़, ज्वर, घाव और बवासीर को दूर करती है।

नरोक

नाम—

यूनानी—नरोक।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति है। किरमानके पहाड़ोंमें पैदा होती है। इसके पत्ते खरबूजेके पत्तों की तरह होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

इसकी जड़को १॥ से २ रत्ती तक की मात्रामें खानेसे और थोड़ी सी गर्भाशयमें रखने से स्त्री बांझ हो जाती है। इसके टुकड़े को नासूर पर रखनेसे अथवा इसका लेप नासूर पर करनेसे नासूर भर जाता है। प्रसूतिके समय अगर स्त्री इसको हाथमें ले ले तो बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है। इसको १॥ रत्तीसे ज्यादा मात्रामें कभी नहीं लेना चाहिये।

(ख. अ.)

नर्तकिस

नाम—

यूनानी—नर्तकिस।

वर्णन—

यह एक वनस्पति है। इसका फल इंद्रायणके फल की तरह होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानीमतसे यह गरम और खुश्क है। इसके रस को सूँघनेसे नाक की दुर्गन्ध मिटती

है। इसका टुकड़ा नाकमें रखनेसे नकसीर का रक्त बन्द हो जाता है। इसको जैतूनके तेलमें पीसकर लगानेसे पसीना बहुत आता है। इसको शराबके साथ खानेसे बिच्छूके विषमें लाभ होता है। अगर छातीमें खून जम जाय तो इसके ताजा मगज को खिलानेसे कफके साथ निकल जाता है। इसके ताजा मगज को खिलानेसे पुराने दस्त बन्द हो जाते हैं।

नमली नारा

नाम :—

यूनानी—नमली नारा।

वर्णन—

इसका वृक्ष बड़गूंदे के समान मगर उससे कुछ छोटा होता है। इसके पत्ते भी बड़-गूंदेके समान लेकिन जरा नोकदार और खुरदरे होते हैं

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानीमतसे यह तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है, पेटके कृमियों को नष्ट करता है, बवासीर और धातुश्रावमें लाभदायक है, निमोनियां और पसलीके दर्द पर इसके पत्तोंको वांधनेसे लाभ होता है। इसकी छालको किसी अंग पर बांधकर रात भर रहने देनेसे उस जगह छाला पैदा हो जाता है।

नवारस

नाम:—

यूनानी—नवारस।

वर्णन—

यह वृक्ष रूम और सलीब की गीली जमीनोंमें बहुत पैदा होता है। इसके सारे झाड़ पर ऊनके समान रुआं जमा हुआ रहता है। इसका फूल पीला और खुशबूदार होता है। इसके कांटे सूई की तरह तेज होते हैं। इसके गोंदका रंग सुरखी लिये हुए सफेद होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानीमत—यूनानीमतसे इसकी जड़ तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क तथा दूसरे सब

अंग दूसरे दर्जेमें गरम और खुश्क होते हैं। यह वनस्पति पट्ठों को बीमारीके लिये बहुत उपयोगी है। इसके लगानेसे कटा हुआ पट्ठा जुड़ जाता है। अगर किसीके पट्ठोंमें बीमारी हो तो इसका काढ़ा बनाकर पिलाना चाहिये। इसका गोंद लगानेसे जखम भर जाता है और कटा हुआ पट्ठा भी जुड़ जाता है। अगर बदनमें कहीं चोट लग जाय या मोच आ जाय तो इसका लेप करनेसे बड़ा लाभ होता है। अगर किसी अंगसे बहता हुआ खून न रुके तो इसके चूर्णको भुरभुराने से रुक जाता है। (ख० अ०)

नाकुली

नाम :—

संस्कृत—गंधदा, नाकुली। हिन्दी—नाकुली। मलयालम—कानभेर। कनाड़ी—मरवाले। लेटिन—Saccolabium Papillosum (सेकोलेबियम पेपिलोसम)।

वर्णन—

यह वनस्पति बंगाल और हिमालयके निम्नवर्ती प्रदेशोंमें तथा सिक्किम और आसाममें पैदा होती है। इस वनस्पति की जड़ें पंसारी लोग रासनाके बदलेमें दे दिया करते हैं। मगर यह असली रासना नहीं है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति सार्सापरिला की एक उत्तम प्रतिनिधि है। गठिया और संधिवातके अन्दर यह लाभ पहुँचाती है। कानके अन्दर फोड़ा होनेसे जो कर्णशूल होता है। उसमें भी यह लाभ पहुँचाती है।

नागरमोथा

नाम—

संस्कृत—चक्रांग्ना, नागरमुस्त, नादेई, कच्छरुहा, कलापिनि, इत्यादि। हिन्दी—नागर मोथा। बंगाल—नागरमूथा। गुजराती—नागरमोथ्या। मराठी—लवाला, मोथे, नागरमोथे। फ़ारसी—मुश्के झामिन। तेलगू—कोलतुंगा मुस्त। पंजाब—डीला। तामील—कोटाइकिलंगू।

अरबी—सोड़, सोदेकुफी। लेटिन—Cyprus Scarious (साइप्रस स्केरिअस)।

वर्णन—

यह क्षुद्र वनस्पति भारतवर्षमें सब दूर पैदा होती है। इसका पौधा घासकी तरह होता है। इसकी जड़ बहुत गहरी होती है और जड़के नीचे काली २ छोटी २ गठानें होती हैं। जिस खेतमें यह घास होता है उस खेतमें दूसरी फसल होना बड़ी कठिन होती है। दूबकी तरह इसको भी किसी खेतसे नष्ट कर देना बड़ा कठिन है। इसकी गठानों में एक प्रकारकी उत्तम खुशबू आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे नागर मोथा चरपरा, कसेला, शीतल, कफ नाशक तथा पित्त, ज्वर, अतिसार, अरुचि, तृपा, दाह और श्रमको दूर करता है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह गर्म और खुश्क होता है। कफ और खांसीमें फायदा पहुँचाता है, कफ पित्त प्रधान ज्वरमें लाभदायक है, दस्तों को रोकने वाला है, तृपाशामक, मुंहके स्वादको ठीक करने वाला, त्रिदोप नाशक, दिल और मेदेकी बीमारीको दूर करने वाला और पेटके कृमियोंको नष्ट करने वाला होता है। यह पसीना लाता है, पेशाव बढ़ाता है, सुजाकमें इसका काढ़ा लाभदायक है। उसबेके साथ इसको जोश देकर पीनेसे उपदंशमें लाभ होता है। इसको पिलाने और लगानेसे बिच्छूका जहर उतर जाता है। नागर मोथेको मुंहमें रखनेसे अगर गलेमें जोंक चिपक गई हो तो निकल जाती है। इसको खानेसे वमन रुक जाती है। एक हिस्सा दूध और ३ हिस्से पानीमें नागर मोथेको डाल कर इतना औटावे कि पानी सब जल जाय और सिर्फ दूध रह जाय। उस दूधको पिलानेसे आंवके दस्त बन्द होते हैं। इसको उत्तर दिशाकी तरफसे पुष्य नक्षत्रमें अच्छे दिनमें उखाड़ कर एक रंगकी गायके दूधमें पिलानेसे मृगी रोग मिटता है।

नागर मोथेका धर्म साधारणतया चंदनके समान होता है। इसके अन्दर स्वेद जनन, मूत्र जनन, ग्राही और उत्तेजक धर्म प्रधान रूपसे रहते हैं।

इतने धर्मोंके रहते हुए भी यह वनस्पति किसी औपधिका प्रधान अङ्ग नहीं मानी गई है। हर जगह इसका सहायक औपधिकी तरह ही उपयोग होता है। अरुचि, आमातिसार, खूनी बवासीर और अजीर्णके रोगोंमें नागरमोथा गुणकारी होता है। संग्रहणीमें भी यह अच्छा काम करता है। ज्वर, पित्तज्वर और सूतिका ज्वरमें यह हमेशा काममें लिया जाता है। इससे घबराहट कम होती है, पसीना छूटता है, शरीरमें उत्तेजना पैदा होती है, जीभ सुधरती है और पेशाव साफ होता है। यह गर्भाशयका कुछ संकोचन करता है। स्त्रियोंका दूध बढ़ानेके

लिये और उनका दूध शुद्ध करनेके लिये नागरमोथा खिलाया जाता है और उसको पानीमें औटाकर स्तनों पर लेप भी किया जाता है। सुजाकमें भी नागरमोथा बहुत गुणकारी है। सुजाककी प्रथम और द्वितीय अवस्थामें यह विशेष लाभदायक होता है। इसका कृमिनाशक धर्म तो इसको बड़ी मात्रामें देनेसे ही दृष्टिगोचर होता है।

इसकी जड़ अग्निवर्धक और हृदयको लाभदायक मानी जाती है। यह पसीना लाने वाली और मूत्रल होती है। संकोचक होनेकी वजहसे यह प्रवाहिका या अतिसारमें लाभदायक है। मृगी रोगमें इसको जटामांसीके साथ देनेसे लाभ होता है। इसका काढ़ा सुजाक और उपदंशमें लाभ पहुँचाता है।

केस और हस्करके मतानुसार यह सर्पविषमें निरुपयोगी है।

नागदमनी

नाम—

संस्कृत—नागदमनी, बला, विषापहा, नागपुष्पी, नागपत्रा, महायोगेश्वरी, दुर्धर्षा, कन्दशालिनी, विषमर्दिनी इत्यादि। हिन्दी—नागदमनी, चिन्दार। बङ्गाल—नागदौन, बड़ा कनूर। गुजराती—नागदमनी। मराठी—नागदवण। फारसी—मारचोबिया। तामील—तुड़ेवाची, विषमुङ्गिल। तेलगू—केसरी चेट्टु। उर्दू—नागदौन। लेटिन—Crinum Asiaticum. (क्रिनम एसिया टिकम)।

वर्णन—

यह वनस्पति सारे भारतवर्षके गरम प्रान्तोंमें तथा बंगाल, कोकण और सीलोनमें पैदा होती है, यह जङ्गलमें भी पैदा होती है और इसकी खेती भी की जाती है। इसके पत्ते २।३ हाथ लम्बे, बालिश्त भर चौड़े और गुदगुदे होते हैं। इसके फूल सफेद और सुगन्धित होते हैं। इसकी जड़में एक कन्द रहता है जो सफेद रङ्गका होता है। औषधिमें इसका कन्द और पत्ते काममें आते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—भावप्रकाशके मतानुसार नागदमनी चरपरी, कड़वी, हलकी, ग्रहोंको शांत करनेवाली, विषनाशक, तथा पित्त, कफ, मूत्रकृच्छ्र, घाव, राक्षस बाधा और जालगर्दभ रोगको दूर करनेवाली होती है।

राजनिघन्टुके मतानुसार नागदमनी त्रिदोषनाशक, तीक्ष्ण, गरम, चरपरी, कड़वी, पेटके आफरेको दूर करनेवाली और कोठेको शुद्ध करनेवाली होती है।

निघन्टुरत्नाकरके मतानुसार नागदमनी गरम, कड़वी, हलकी, रुचिदायक, कोठेको शुद्ध करनेवाली, तीक्ष्ण, चरपरी तथा योनिदोष, मकड़ी और सांपका विष, कफ, वमन, कृमि, घाव, मूत्रकृच्छ, उदररोग, जालगर्दभ, त्रिदोष, प्रमेह, खांसी, कण्ठरोग, शूल, गुल्म, रुधिर विकार, सबप्रकारके विष, आफरा और ग्रहपीड़ाको दूर करनेवाली है।

नागदमनीके कन्दकी क्रिया शरीरमें इपिकेकोना, अडूसा, अथवा जङ्गली प्याजके समान होती है। छोटी मात्रामें यह पसीना लानेवाली और कफ निस्सारक है। बड़ी मात्रामें यह एक विश्वास योग्य सौम्य और उत्तम वामक वस्तु है। इससे होनेवाली वमन मनुष्यमें घबराहट और थकावट पैदा नहीं करती तथा मरोड़, जुलाब इत्यादि दूसरे दुष्परिणाम इससे नहीं होते। कोली कांदा या जङ्गली प्याज वमन लानेके लिये नहीं दिया जाता, मगर इसका कन्द निर्भय होकर दिया जाता है। इसके सूखे हुए कन्दमें ताजा कन्दकी अपेक्षा आधा गुण रह जाता है। रेक्टिफाइड स्पिरिटमें इसका तैयार किया हुआ अर्क बेकार होता है। इसी प्रकार इसका शरबत और अवलेह भी अधिक उपयोगी नहीं होते। वमन लानेके लिये इसके कन्दका ताजा रसही सबसे अधिक उपयोगी होता है। यह इस कामके लिये १ से लेकर २ तोले तक की मात्रामें दिया जाता है।

जावाद्वीपमें इपिकेकोनाके अभावमें इसके कंदका बहुत उपयोग किया जाता है। श्वास नलिकाकी सूजनकी पहली और दूसरी अवस्थामें इसके प्रयोगसे बड़ा लाभ होता है। बच्चों को भी यह बेखटके दी जा सकती है। जहरको उतारनेके लिये अथवा छातीमें भरे हुए कफको निकालनेके लिये इसको देनेसे वमनके द्वारा विष और कफ निकल जाता है।

हर प्रकारकी सूजनको दूर करनेके लिये इसके पत्तों पर अरंडीका तेल लगाकर जरा गरम करके बांधते हैं। इससे सूजन बहुत जल्दी उतर जाती है। बाल तोड़, विद्रधि, विसर्प, नारू वगैरे ऐसे चर्म रोगोंमें जिनमें पीव पड़ने का अन्देशा होता है, इन पत्तों को बांधनेसे पीव नहीं पड़ने पाता। कर्ण शूलमें इसके पत्तोंको गरम करके उनका रस निकाल कर कानमें टपकाया जाता है। दाद परभी इसके पत्तोंका रस लेप करनेसेलाभ होता है।

कार्टरके मतानुसार इसकी ताजी जड़ साधारण खुराकमें पसीना लानेवाली, ज्वर निवारक और अधिक मात्रामें वमनकारक होती है।

मलायामें इसकी जड़ विष निवारक मानी जाती है।

केस और महस्करके मतानुसार यह वनस्पति सर्प-विषमें निरुपयोगी है।

यूनानी मत —

यूनानी मतसे इसके पत्तोंका रस हर किस्मके जहर पर मुफीद है। किसी भी विषमें बीमारको इसकी जड़ १ माशेकी मात्रामें ५ काली मिरचके साथ पीसकर पिलानेसे लाभ होता है। अगर आदमी जहरसे बेहोश होगया हो तो नागदमनीके साथ १ दाना सफेद घुंघचीका मिलाकर देनेसे वह होशमें आजाता है। सरदीका बुखार, लकवा, अर्धाङ्ग, कंपवात और मकड़ीके विषमें भी यह लाभदायक है।

तालीफ शरीफमें एक दूसरी प्रकारकी नागदमनीका वर्णन लिखा है। उसका कथन है कि इसके पत्ते और इसकी जड़ें सांपकी तरह होती हैं। सैय्याद लोग इसको पहाड़से लाते हैं। हिन्दू फकीर भी इसको अपने पास रखते हैं। इसकी सफेद, लाल और काली ३ जातियाँ होती हैं, यह बदनको मोटा करती है, शक्तिदायक है, कफ और पित्तके उपद्रवको मिटाती है। कोई २ इसे सांपके जहरकी दवा मानते हैं। यह भूख बढ़ाती है, दस्त साफलाती है, प्रसूति रोगमें मुफीद है। धातुका गिरना, खांसी, और पेटके आफरे को यह दूर करती है।

नागदौन

नामः—

बम्बई—नागदौन—बंगाल—सुदर्शन, सुखदर्शन। गुजराती —नागरी कन्द। मद्रास—विषमुंगिल। मुंडारि—केंद्रिजादू। तेलगू—केसर चेट्टु। लेटिन—Crinum Defixum (क्रिनम डेफिक्सम)।

वर्णन—

यह नागदमनी की ही एक दूसरी उपजाति होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका कन्द वमनकारक, कफनिस्सारक और स्निग्धता पैदा करने वाला होता है।

मेडागास्कर में इसका कन्द कारबंकल, अंगुली विद्रधि और अग्निदग्ध की चिकित्साके लिये भीतरी और बाहिरी दोनों उपचारोंमें बहुत काममें लिया जाता है। कर्ण प्रदाहके अन्दर इसके पत्तोंके रसकी थोड़ीसी बूंदें कानमें टपकाई जाती हैं।

नागकेसर (नागचम्पा)

वर्णन—

संस्कृत—भुजंगाख्य, चांपेय, हेम, हेमकिंजल्क, केसर, नागकेशर, नागपुष्प, पुन्नाग केशर, इत्यादि। हिन्दी—नागकेशर, पुन्नाग। विहार—नागकेशर। बंगाल—नागेसर, नागकेसर। बंवई—नागचम्पा, थोरला चम्पा। मराठी—नागचांपा। फारसी—नरमिश्का। तामील—इसल, करुननगू, मन्नाइननगू, नागन चम्पागम। तेलगू—गजपुष्पयु, केसरायू, नागपंचकमू। इंग्लिश—Ceylon Ironwood लेटिन—Mesua Ferrea (मेसुआ फेरा)।

वर्णन—

यह एक मध्यम आकार का सुन्दर और सुशोभित वृक्ष होता है। इसकी पैदाइश सारे भारतवर्ष में और विशेष कर दक्षिणी कोकण, पूर्व बंगाल और पूर्व हिमालयमें होती है। इसके पत्ते शल्याकृति, फूल पीलापन लिये हुए सफेद रंगका और बहुत खुशबूदार होता है। इस फूलमें नरकेशर का पीले रंग का जो गुच्छा होता है उसीको नागकेशर कहते हैं।

नागकेशर के नामसे बाजारमें कई प्रकार की वस्तुएं मिलती हैं। मगर असली नाग केशर चम्पेके फूलमें रहने वाले पीले गुच्छे से ही बनती है। इसमें केशरिया रंगके छोटे छोटे तन्तु रहते हैं। लाल नागकेशर सुरंगी की सूखी हुई कलियों को कहते हैं और काली नागकेशर सुलतान चम्पे की सूखी हुई कलियों को कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से नागकेशर कड़वी, कसेली, आम पाचक, किञ्चित गरम, रूखी, हल्की तथा पित्त, वांति, कफ, रुधिरविकार, वात, कण्डू, हृदय की पीड़ा, पसीना, दुर्गन्ध, विष, तृषा, कोढ़, विसर्प, वस्तिपीड़ा, वात रक्त, कण्ठरोग और मस्तक शूल को नष्ट करती है।

भावप्रकाशके मतसे नागकेशर कसेली, गरम, रूखी, हलकी, आमपाचक तथा ज्वर, खुजली, प्यास, पसीना, वमन, उवकाई, दुर्गन्ध, कोढ़, विसर्प कफ, पित्त और विषको दूर करती है।

रक्तआम में और रक्तार्शमें गुदाद्वार की जलन को बन्द करनेके लिये यह एक उत्तम औषधि है। हाथ पांव की जलन को दूर करनेके लिये भी इसका उपयोग किया जाता है। अधिक कफ युक्त खांसीमें इसे देते हैं। बंगालमें सर्पदंशमें इसके फूल और पत्ते पिलाये

जाते हैं। इसके बीजों का तेल सन्धियों के दर्द और कमर की वेदनामें मालिश किया जाता है। खुजली पर भी यह लगाया जाता है।

चरक, सुश्रत और वाग्भट्ट के मतसे इसके पत्ते और फूल दूसरी औषधियोंके साथ मिलाकर सांप और विच्छूके विषपर देनेसे लाभ होता है।

इसके फूल संकोचक और अग्निवर्धक होते हैं। बहुत सी जगह पर इन्हें खांसी और कफ नाशक दवा की तरह काममें लेते हैं। जब खांसी में कफकी विशेषता होती है तब यह विशेष रूपसे काममें ली जाती है। नागकेशर का चूर्ण मक्खन और शक्करके साथ खूनी बवासीर का खून रोकनेके लिये और पैरो की जलन मिटानेके लिये सफलता पूर्वक उपयोग किया जाता है।

उत्तरी कनाड़ामे इसके बीजों का तेल सन्धिवात और गठियामें उपयोगी माना जाता है। खुजली की चिकित्सामें भी उपयोगी माना जाता है।

कोमानके मतानुसार इसके कच्चे फल पसीना लाने वाले होते हैं। इसके फूलों की कलियां रक्तातिसारमें उपयोगी मानी जाती हैं। इसके फूलों का शरबत रक्तातिसारके बीमारों पर प्रयोगमें लिया गया, जो इस बीमारी के साधारण बीमार थे वे तो इससे अच्छे हो गये मगर पुराने और गहरे बीमारों पर इसका कुछ भी असर नहीं हुआ।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। पित्त, कफ, और विषके विकारको दूरकरती है। हर प्रकारकी बवासीर और पेटके कृमियों का नाश करती है। इसके लम्बे इस्तेमालसे बवासीरके मस्से गिर जाते हैं। बवासीर के लिये इसके फूलके अन्दर की जर्दी को १३ माशे की मात्रामें रातको पानीमें भिगो दें। सुबह उस पानी को छानकर मिश्री मिलाकर पी ले। इससे ४० दिनमें मस्से सूख जाते हैं। नागचम्पे के इत्रकी मालिश कामेंद्रिय-पर करनेसे काम-शक्ति बहुत बढ़ती है इसको पानमें लगाकर खानेसे भी कामोत्तेजना होती है मगर यह गरम प्रकृति वालों को कभी नहीं खाना चाहिये। इसके बीजों की मगज को पोटलीमें बांधकर उस पोटली को पानीमें भिगोकर खुजली पर खूब मलें। इससे दोनों प्रकार की खुजली आराम हो जाती है। इसके बीजोंका तेल निकाल कर उसमें कपिला मिला कर लगाने से भी खुजली आराम हो जाती है।

तालीफ शरीफके मतानुसार यह पसीने की दुर्गन्ध को दूरकरती है। कुष्ठ, कफका उपद्रव और पित्त की तेजी को मिटाती है।

मुजिर—यह गरम प्रकृतिवालोंको गर्मी से होनेवाली यकृतकी बीमारी को और मसानेको नुकसान पहुँचाती है।

दर्पनाशक— कासनीके बीज, बंशलोचन।

प्रतिनिध—बालछड़ और खोपरा।

मात्रा—इसकी साधारण मात्रा ४ रत्तीसे १ माशे तक है। जो मिश्री और मक्खनके साथ दी जाती है। खजाइनुलअदवियाके मतानुसार इसकी मात्रा ४ माशे की है।

और इसके इत्र की मात्रा १ रत्तीकी है।

उपयोग—

रक्तार्श—नागकेशर और शक्कर को पीसकर मक्खनमें मिलाकर खानेसे बवासीर का खून बन्द हो जाता है।

पैरों की जलन—पैरों की पगतली पर इसका लेप करनेसे पैरों की जलन मिट जाती है।

सर्पदंश—सर्पके दंशित स्थान पर नागकेशर और इसके पत्तों का लेप करनेसे सर्प-विपमें लाभ होता है।

गठिया—इसके बीजोंके तेल को मर्दन करनेसे गठिया मिटती है।

बिगड़े हुए घाव—ऐसे बिगड़े हुए घाव जिनमें दुर्गन्धित पीव निकालता हो इसका तेल लगानेसे आराम हो जाते हैं।

श्वेत प्रदर—नाग केशरके चूर्ण को मट्ठेके साथ पीनेसे श्वेत प्रदरमें लाभ होता है।

गर्भपात—अगर किसी स्त्री को तीसरे महीनेमें गर्भ गिरने का भय होवे तो इसके चूर्ण में मिश्री मिलाकर दूधके साथ फक्की देना चाहिये।

नागबेल

नामः—

हिन्दी—नागबेल, नागफेनी, चराइ गोरवा, छगरियारुवा, मिंजुरगोरवा। बंगाल—वोरुना, गोड़ा। संथाल—भादू, मारक। आसाम—ओमाइ। कनाड़ी—नवलाड़ी। लेटिन—Vitex Padancularis (विटेक्स पेडनक्यूलेरिस)।

वर्णन—

यह निर्गुण्डीके वर्ग की एक वनस्पति है। इसका वृक्ष ६ से लेकर १२ मीटर तक ऊँचा होता। इसके पत्ते ११.१५ सेंटिमीटर लम्बे और २.५ सेंटिमीटर चौड़े होते हैं। यह वनस्पति बिहार, बंगाल, आसाम और तेनासिरम में पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

केंपबेलके मतानुसार छोटा नागपुरमें छातीके अन्दर होनेवाले दर्द को दूर करनेके लिये इसकी छाल को पीसकर उसका लेप किया जाता है।

ब्रिटिश मेडिकल जर्नलके फरवरी १९२१ के अंकमें इस वनस्पतिके सम्बन्धमें प्रतिपादित किया गया कि इसके पत्तों का शीतनिर्यास अथवा इसकी जड़का शीतनिर्यास मलेरिया टाइप के बुखारको दूर करनेके लिये और खासकर गरम देशोंमें होनेवाले भयंकर पैत्तिक ज्वरके (Blackwater Fever) दूर करनेके लिये दिया जाता है। मलेरिया ज्वर और ब्लेक वाटर फीवरके अनेकों केस इसके पत्तोंके शीत निर्याससे आराम किये गये हैं (J.C.S. Vaughan) ब्रिटिश मेडिकल जरनल फेब्रुआरी १९२१)

इसके सूखे पत्तों का रासायनिक विश्लेषण करने पर इसमें एक प्रकार का अलकेलाइड पाया गया है। चोपराके मतसे यह वनस्पति मलेरिया ज्वरमें निरुपयोगी सिद्ध हुई है।

नागन

नाम:—

यूनानी—नागन।

वर्णन—

यह एक वनस्पति है जो प्रायः मद्रासके बगीचोंमें बोई जाती है। इसका वृक्ष ७।८ फीट तक उंचा होता है। इसकी जड़ें जमीनमें आधा गज तक नीचे जाती हैं। तेलगू भाषामें इसकी जड़को पंजर कहते हैं। पंजर एक प्रकारके साँपका नाम है जिसके काटनेसे शरीरसे खून जारी हो जाता है। इस वनस्पति की जड़ उसके जहर को फायदा पहुँचाती है। इसके पत्ते १ गज लम्बे और बहुत घने होते हैं। इनका रंग कुछ पीलापन लिए हुये काला होता है। इसके पत्ते का आकार नागनके समान होता है। इसीलिये इसको नागन कहते हैं। इसके सिर पर सफेद फूल आता है जो बहुत खुशबूदार होता है। हर फूलमें ६ पंखड़ियां होती हैं।

गुणदोष और प्रभाव--

इसके पत्ते संधियों की सूजन पर बाँधनेसे सूजन बिखर जाती है और दर्द मिट जाता है। इसके पत्तोंके रसको कानमें टपकानेसे कर्ण-शूल मिटता है। इसका फूल ज्ञानेन्द्रियको शक्ति देता है। इसके फूलों का तेल लगानेसे बाल बहुत पैदा होते हैं। कामेन्द्रिय पर इसके तेल की मालिश करनेसे उसमें बहुत ताकत और सख्ती पैदा होती है।

नागोर

नाम—

यूनानी—नागोर।

वर्णन—

यह एक बड़ी जातिका वृक्ष होता है। इसमें डालियां बहुत होती हैं। इसके पत्ते चौड़े, लंबे और नोकदार होते हैं। इनका आकार तंबाकूके पत्तोंके समान होता है। इनपर रूआं बहुत होता है। इसके फूल खुशबूदार और फल गोल होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यह गरम और खुश्क होता है। सिर दर्द, कमरका दर्द और मूत्राशयके दर्दमें यह लाभदायक है फोड़े फुन्सीको मिटाता है पेटके कीड़ोंको नष्ट करता है, प्रमेहमें लाभदायक है, पारा खानेसे शरीरमें जो विकार पैदा होजाते हैं, वे इसके पत्तोंसे मिट जाते हैं।

नागसर गड़हा

नाम—

यूनानी—नागसर गड़हा।

वर्णन—

यह एक छोटी जातिकी वनस्पति होती है। इसका पौधा जमीन पर बिछा हुआ रहता है। इसके पत्ते कन्दोरीके पत्तों की तरह होते हैं।
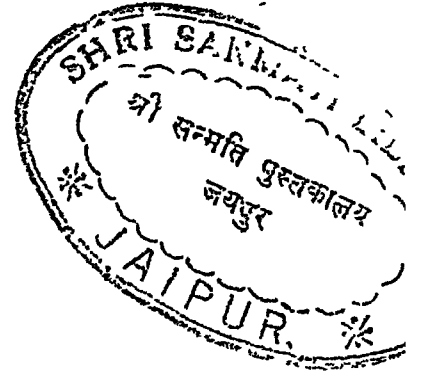
गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे इसकी जड़ें गरम और खुश्क होती हैं। सांपके जहर की यह मशहूर दवा है। कोढ़, उपदंश और जहरवामेंभ भी यह लाभदायक है, खांसी को दूर करती है, धातु-वर्धक और काम शक्ति को बढ़ाने वाली है तथा गठिया के दोषों को दूर करती है। इसको तीन माशे की मात्रामें गायके घीके साथ खिलानेसे और पथ्यमें अरहर की दाल, चांवल और अधिक मात्रामें घी खिलानेसे गठियामें बहुत लाभ होता है। इसकी जड़को २ माशे की मात्रामें पानके साथ रातको सोते समय खिलानेसे ३ दिनमें दमा आराम हो जाता है। छछून्दर के जहर पर इसको एक माशे की मात्रामें १२ दिन तक खिलाने से जहरका प्रभाव हो जाता है।

नाड़ीका शाक

नाम:—

संस्कृत—नाड़ीक, कालशाक, श्राद्धशाक, कालक, दीर्घचंचु, कंटी। हिन्दी—त काशाक, पटुआसाक, पात। मराठी - कड़चोंचे। नसीराबाद—दतराव। पोरबन्दर—ले चूंच। गुजराती—मोटी—छूंछ। तामील—पेरहि।। तेलगू- परिंट। कनाड़ी—त स्सिर। लेटिन—Ourchorus Triloocularis (कोरचोरस ट्रिलोक्यूलेरिस)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति की वनस्पति है जो बरसातके दिनोंमें पैदा होती है। इसके पौधे १ से लेकर २॥ फीट तक ऊंचे होते हैं। इसके पत्ते सुन्दर कंगरीदार १ से ४ इंच तक लम्बे, फूल पीले और फली तिधारी या चौधारी १ से लेकर ३॥ इंच तक लम्बी होती है। इसमें बहुत बीज होते हैं। इन बीजों का रंग खाकी या काला होता है। इनके दोनों सिरे दबे हुए रहते हैं। इनका स्वाद कड़वा होता है। इसके बीजों को राजजीरा कहते हैं। बरसात में गरीब लोग इसका साग बना कर खाते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वैदिक मत—आयुर्वेदिक मत से नाड़ीका शाक कड़वे और मीठेके भेदसे दो प्रकार का होता है। कड़वा शाक रक्तपित्त नाशक तथा कृमि और कुष्ठ को नष्ट करता है — पिच्छिल, शीतल, मलरोधक और कफवात कारक होता है।

नाड़ीके सूखे पत्ते ज्वर, विशेष करके पित्त और कफ ज्वर को नष्ट करने वाले होते हैं। ये जलदोष नाशक, पित्त, कफ और आम वात विनाशक हैं। अफीम के विष को दूर करनेके लिये इसके ताजे पत्तों का रस दिया जाता है।

इसके बीज स्नेहन और आनुलोमिक होते हैं। इनको ४० रत्ती की मात्रामें देनेसे यकृत् की क्रिया सुधरती है। आमवात और गुल्ममें भी ये उपयोगी हैं। ज्वरमें इसके बीजों और पत्तों की फांट बनाकर दी जाती है।

यूनानी मत

यूनानी मतसे इसकी दोनों जातियां सर्द और तर होती हैं। ये पित्तज बीमारियोंमें लाभदायक हैं। इसके पत्तों को भाफ से नरम करके फोड़ेपर बांधनेसे फोड़ा पक जाता है। रक्तविकार में भी यह लाभदायक है। इसको सूखी या गीली जलाकर उस भस्म को थोड़ी शहदके साथ चटानेसे तिल्ली आदि यन्त्रों के बहाव की रुकावट मिट जाती है। इसके पत्तों का हिम या फांट पिलानेसे ज्वर का दाह मिट जाता है। इसके तीन रत्ती चूर्णमें तीन रत्ती हलदी मिलाकर फक्की देनेसे तीव्र आमातिसार मिटता है। संखिया खानेवालेको ३।४ तोला नाड़ी के पत्तों को पीस कर पिलानेसे जहर उतर जाता है।

इसके अधिक सेवन से पेटमें वायु पैदा होती है और मेदा कमजोर हो जाता है।

नानका

नाम—

बंगाल—नानका। मुण्डारि—डेमडेमारा। तेलगू—निरोकंच। लेटिन Monochoria Vaginal's. (मोनो कोरिया व्हेगिनेलिस)।

वर्णन—

यह वनस्पति सारे भारतवर्ष, सीलोन और मलायामें पैदा होती है। इसके पत्ते ५ से लेकर १० सेण्टिमीटर तक लम्बे और ३-२ से ५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल कुछ ललाई लिये नीले रंगके होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

दन्तशूलको मिटानेके लिये इसकी जड़को चबाना चाहिए इसकी छालको शक्कर के साथ लेनेसे दमेमें लाभ होता है।

नावर

नाम—

पंजाब—नावर, वेली, ह्दर, मंडरी, मुराध, इत्यादि। कुमाड—पापेर। इंग्लिश—Blackcurrant, quinsy Berry। लेटिन—Ribes Nigrum. (रायवस नायग्रम)।

वर्णन—

यह वनस्पति पंजाब और काश्मीरमें विशेप रूपसे पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके फल ठंडे, मृदुविरेचक, शूलघ्न और वेदनानाशक होते हैं।

इंग्लैंडमें प्राचीनकालसे इसके फलोंसे एक प्रकारका अवलेह (Felly) तैयार किया जाता है जो गलेकी सूजन (Sore Throat) को दूर करनेके लिये लगाया जाता है। इसके पत्तों या छालका काढ़ा कुल्ले करनेके काममें लिया जाता है।

स्पेन, फ्रांस और इटालीमें इसके फल और पत्ते मूत्रल और कामोत्तेजक माने जाते हैं।

इसके ताजा पत्ते ग्रन्थिवातके ऊपर सूजन और दर्दको दूर करनेके लिये लगाये जाते हैं। इङ्गलिश वनस्पति शास्त्री इसके पत्तों और फूलोंको जङ्गली गाजरके बीजोंके साथ मिलाकर जलोदरमें (Passine Dropsy) किडनीको (गुर्दे) उत्तेजित करनेके लिये देते हैं।

नारङ्गी

नाम—

संस्कृत—नारंग, नागरंग, मुखप्रिय, इरावत, गन्धाढय योगरंग, इत्यादि। हिन्दी—नारंगी, सन्तरा, अमृत फल, कामलानींबू। बम्बई—नारंगी, सन्तरा। बंगाल—कामलानींबू, नारंगी। गुजराती—नारंगी। मराठी—सन्तरे। पंजाब—नारंगी, सन्तरा। तेलगू—नारंगमू। तामील—नारंगम्। अंग्रेजी—China Orange, orange Tree लेटिन—Citrus Aurantium (सायट्रस ओरंटियम)।

वर्णन—

नारंगी या सन्तरेका वृक्ष सारे भारतवर्षमें, विशेप कर नागपुर और सिलहटमें पैदा होता है। नारंगी या सन्तरेका फल सारे भारतवर्ष में आमतौरसे खाया जाता है। इसको सब कोई जानते हैं। इसलिये इसके विशेष परिचयकी आवश्यकता नहीं।

गुणदोष और प्रभाव--

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदके मतसे नारंगी खट्टी और मीठी दोनो प्रकारकी है। यह कफ, पित्त और आमकारक है। यह कठिनता से पचनेवाली, कुछ दस्तावर, अत्यन्त अम्ल, वातनाशक और मधुर होती है। खट्टी नारंगी—हृदयको हितकारी, अम्ल, बलवर्धक, विषघ्न, भारी, रुचिकारक, सारक, उष्ण, सुगन्धित, स्वादु तथा आम, कृमि, वात, श्रम और शूलको नष्ट करती है।

सन्तरे का रस ज्वरनाशक, प्यास बुझाने वाला, ग्राही, रक्त पित्तनाशक और रक्त वर्धक है। इसके फलकी छाल दीपन, मृदुस्वभावी, सुगन्धित और कटु पौष्टिक है। इससे भूख लगती है और आमाशयको बल मिलता है। इस फूकेल मृदु स्वभावी होते हैं।

सन्तरेका रस ज्वरके अन्दर बहुत लाभदायक होता है। ज्वरमें ५।६ सन्तरे रोज खानेको देने पर भी कोई नुकसान नहीं होता। अतिसार और वातरक्तमें भी यह उत्तम पथ्य है।

इसके फलकी छाल शिथिलता प्रधान अजीर्ण, अग्निमांद्य और निर्बलतामें देते हैं। इसकी छाल १ औंस, ताजी नीमकी छाल १ ड्राम, लौंग आधा ड्राम और खौलता हुआ पानी १० औंस, इन सबको एक बर्तन में १५ मिनिट तक बन्द करके फिर छानकर १ से २ औंस तककी मात्रामें देनेसे आमाशय पर अच्छी क्रिया होती है।

कम्बोडिया में इसके पत्ते ब्रोंकाइटीज की बीमारीमे उपयोगमें लिये जाते हैं। नारंगीके फूलोंका अर्क निकाल कर १ या २ औंसकी मात्रामें हिस्टीरिया, मृगी और दूसरी नर्वस बीमारियों में आक्षेप-निवारक और उपशामक वस्तुकी तरह देते हैं।

नारंगीका पुल्टिस—विसर्पिका इत्यादि बहुत से चर्म रोगों में लाभदायक होता है। नारंगीका फल विषनाशक भी माना जाता है। इसका रस उत्तेजक और शांतिदायक होता है।

सन्तरेके फलमें व्हिटामिन "ए" और "बी" साधारण मात्रामें तथा व्हिटामिन "सी" विशेष मात्रामें पाया जाता है। १॥। छटांक नारंगीके रसमें व्हिटामिन "सी" ६८ मिलिग्रामकी मात्रामें पाया जाता है। अतः जिन लोगोंकी हड्डियां और दांत कमजोर हों, पायरियाकी शिकायत हो, पाचन शक्ति की कमजोरी हो, रक्तभार बढ़ा हुआ हो, लकवा या गठियाकी शिकायत हो, या गर्भवती स्त्रीको अधिक वमन आती हो। ऐसे रोगोंमें नियमित रूपसे सन्तरेका रस सेवन करनेसे बड़ा लाभ होता है। सन्तुलित भोजनके साथ नित्य आधसेर सन्तरेका रस पीनेसे पायरिया रोग नष्ट होजाता है। इसमें व्हिटामिन A. B. C, के अलावा लोहा और अन्य कई पदार्थ पाये जाते हैं। सन्तरेका प्रयोग तन्दुरुस्ती और बीमारी दोनोंमें ही किया जासकता है।

मीठे सन्तरेका रस बुखार, दमा और निमोनियामे भी दिया जाता है। उपवासके दिनोंमे इसके रससे बहुत सहारा मिलता है, साथ ही लाभ भी होता है। तन्दुरुस्ती की हालतमें झिल्लीके साथ सन्तरेकी फांकों को खाना चाहिये।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जे में सर्द और तर है। नारंगी के फूल उत्तेजक हैं। इनको सूंघनेसे सरदी और जुकाम दूर होता है। इसका काढ़ा ज्वर में लाभदायक है। इसका रस पौष्टिक, मूत्रल, बवासीर में लाभदायक, बढ़ी हुई तिल्लीको अच्छी करने वाला, छातीके दर्दमें लाभदायक, और कटिवातको दूर करने वाला होता है। इसका फल खट्टा, मीठा, ठंडा, कामोत्तेजक, आंतोंका संकोचन करनेवाला लीवर को शक्ति देने वाला, वमन और मतली रोकने वाला, पित्त प्रकोपको दूर करने वाला, और छातीके दर्द में लाभदायक है। इसका छिलका कृमि नाशक, वमन और चर्म रोगोंको दूर करनेवाला होता है। इस छिलके का रस पित्तज अतिसारमें लाभदायक है।

उपयोग —

गर्भवतीका अतिसार—मीठी नारंगीका शरबत पिलानेसे गर्भवतीका अतिसार मिटता है।

उदर शूल और मंदाग्नि—नारंगीकी फांकका छिलका उदरशूलमें लाभदायक है। दूसरी उपयोगी औषधियोंके साथ मिलाकर इसको देनेसे साधारण मंदाग्नि और सब शरीरकी निर्बलता मिटती है।

बांइठे—नारंगी के फूलों का भफकेसे खींचा हुआ अर्क २॥ तोलेसे ५ तोले तककी मात्रामें पिलाने से बांइठे मिटते हैं।

स्त्रियोंका आवेश रोग—नारंगीके फूलों का खिंचा हुआ अर्क पिलानेसे स्नायुजाल की एंठन और स्त्रियों का आवेश रोग मिटता है।

ज्वर और खांसी—नारंगी की फांक का गूदा निकालकर उस पर शक्कर डालकर उसको गरम करके खिलानेसे ज्वर और खांसी में लाभ होता है।

पित्त का अतिसार—नारंगी का शर्बत पिलानेसे पित्त का अतिसार मिटता है।

वमन—नारंगी के छिलके का चूर्ण बनाकर चटानेसे वमन मिटती है।

पेटके कृमि—नारंगीके छिलके के क्वाथमें हींग डालकर पिलानेसे पेटके कृमि मिटते हैं।

दाद—ऐसे दाद जिनके भीतरका भाग सफेद रहता है और ऊपर खुरंट रहता है नारंगी का पुल्टिस बांधनेसे मिट जाता है।

रुधिर विकार—चिरायतेके अर्कमें नारंगी का शरबत मिलाकर पिलानेसे रुधिर शुद्ध होता है।
खुजली—खुजली और फुन्सी पर इसके ताजा छिलकों को रगड़नेसे लाभ होता है।

नारी

नाम:—

पंजाब—नारी। बंगाल—बेखुजबाज। मराठी—धाकटाशेरल। मुंडारि—गरारा, नेआरा। तामील—अटलारी। तेलगू—कोंडेमाली। लेटिन—Polygonum Barbatum (पोली गोनम बारबेटम)।

वर्णन—

यह एक चूका वर्ग की वनस्पति है। इसका पौधा बहुत छोटा होता है। इसके पत्ते ७·५ से १२·५ सेन्टिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल सफेद और छोटे होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

मलाबारमें इसके बीज कालिक उदर शूलको दूर करनेके लिये दिये जाते हैं। पटनेमें इसकी जड़ एक संकोचक और ठंडी औषधि की तरह काममें ली जाती है। चीनमें इसके पत्तों का काढ़ा घावों को धोनेके लिये उपयोगी माना जाता है।

नारियल

नामः—

संस्कृत—नारिकेल, दृढ़फल, लांगली, जुंग, स्कंदफल, श्रीफल, तृणराज, सदाफल, सदापुष्प, महाफल, नीलतरु, तोयगर्भ, इत्यादि। हिन्दी—नारियल, श्रीफल, खोपरा। बंगाल—नारिकेल, डाब, नारियल। बांबे—नारियल, महाद, माड़। गुजराती—नारियल, नारेल। तेलगू—नालिकेरम्मू, नारि केदामू, मांगली। तामील—इदेगाम, केलि, नालिगेरम। कोकण—माड़। फ़ारसी—जोज हिन्दी, वादिंज, नर्गिल। लेटिन—Cocos nucifera (कोकोस नुसीफेरा)। इंग्लिश—Cocoanut कोकोनट।

वर्णन—

नारियल का वृक्ष बहुत बड़ा होता है। यह खजूर और ताड़के वृक्षोंके समान एकदम

सीधा और ऊंचा बढ़ता है। इसके ऊपरके भागमें खजूरके समान पत्ते लगते हैं। उन्हीं पत्तोंके बीच नारियल लगते हैं। हिन्दू धर्म शास्त्रोंमें नारियल को मंगल द्रव्य माना गया है। इसलिये इसे सब कोई जानते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदके मतसे नारियल भारी, स्निग्ध, शीतल, वीर्यवर्धक, कठिनता से पचनेवाला, बस्तिशोधक, बलकारक, पौष्टिक, कफकारक, स्वादिष्ट, संकोचक तथा शोष, तृषा, पित्त, वातपित्त, रुधिर दोष, दाह और क्षत क्षयका नाश करता है।

यह स्वादु रसयुक्त, पाकमें मधुर, हृदय को हितकारी, भारी, पित्तनाशक, मदकारक, श्रम नाशक, और कामशक्ति को बढ़ानेवाला है।

कोमल नारियल—पित्तज्वर, रक्तविकार, तृषा, वमन, दाह और रक्तपित्त से उत्पन्न हुए रोगों का शीघ्र ही नाश करता है।

पका नारियल—दाह कारक, पित्तजनक, भारी, मलरोधक, रुचिदायक, मधुर, बलवर्धक और वीर्यवर्धक होता है।

सूखा नारियल—सूखा नारियल कठिनतासे पचनेवाला, दाह कारक, भारी, स्निग्ध, मलरोधक तथा बल, वीर्य और रुचि को पैदा करनेवाला होता है।

नारियल का दूध—नारियल का दूध बलकारक, रुचिदायक, भारी, पचनेमें स्वादिष्ट, स्निग्ध, वीर्य वर्धक, दाह कारक, किंचितगरम तथा वात, कफ, गुल्म और खांसी को दूर करता है।

नारियल का पानी—कच्चे नारियल का जल विरेचक, शीतल तथा वमन, मूर्च्छा और पित्त ज्वर को दूर करता है। पके नारियल का जल मलरोधक, भारी और शीतल होता है।

नारियल का फूल—नारियल का फूल शीतल, मलरोधक और रक्तातिसार, रक्तपित्त, प्रमेह और सोम रोग को दूर करता है। नारियलके फूल का जल भारी, वीर्यवर्धक, तत्काल मद कारक, अत्यन्त स्निग्ध, अम्ल, कफकारक, पित्तजनक तथा कृमि और वात नाशक है।

नारियल की ताड़ी—नारियल की ताड़ी अत्यन्त स्निग्ध, तत्काल मदकारक, भारी और वीर्यवर्धक होती है। दुपहरके पश्चात् यही ताड़ी अम्ल भाव युक्त होकर कफ कारक, पित्त जनक और कृमि नाशक हो जाती है।

नारियल का तेल—नारियल का तेल वाजिकरण, भारी, क्षीणधातु वाले मनुष्योंके लिये पौष्टिक, वातपित्त नाशक तथा मूत्राघात, प्रमेह, श्वास, खांसी, राजयक्ष्मा, और स्मरण शक्ति की कमीमें लाभदायक है तथा क्षत रोग को भरने वाला है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे इसकी छाल दांतों के लिये और गीली खुजलीके लिये लाभदायक है। इसका फल मीठा, कामोत्तेजक, मूत्रल और ज्वर, पक्षाघात, बवासीर, यकृत सम्बन्धी रोग और रक्त सम्बन्धी रोगोंमें लाभदायक है। इसके सेवनसे मनुष्य का वजन बढ़ता है। सर्द प्रकृति वाले लोगों को होने वाले कटिवात और किड़नीके दर्दमें यह लाभदायक है। इसका खमीर उठाया हुआ रस या इसकी ताड़ी अग्निवर्धक और कृमिनाशक होती है। इसका तेल मीठा, बलवर्धक, मूत्रल, कृमिनाशक, बालों को बढ़ाने वाला और कमरके दर्द, बवासीर, गीली खुजली और सूजन को नष्ट करनेवाला होता है।

इसकी जड़ एक मूत्रल द्रव्य की तरह काममें ली जाती है। गलेके छालों को दूर करनेके लिये यह एक संकोचक द्रव्य की तरह काममें ली जाती है। मूत्र सम्बन्धी बीमारियोंमें भी यह उपयोगी मानी जाती है।

इसकी जटा घावमें से बहनेवाले खूनको रोकनेके लिये और रगड़ तथा जोंकके काटने पर उपयोगी मानी जाता है।

इसके फूल संकोचक माने जाते हैं। इसकी ताजा ताड़ी शान्तिदायक और मूत्रल मानी जाती है।

इसका अपरिपक्व फलबच्चों को होने वाले गलेके छालोंमें लगाया जाता है। नारियल का पानी एक बहुत अच्छा तृषाशामक पदार्थ है। प्यास युक्त ज्वरमें और पेशाबसम्बन्ध रोगोंमें यह उपयोगी है। यह चाहे जितनी मात्रामें बिना किसी हानि के दिया जाता है। यह रक्त को भी शुद्ध करता है। बंगालके अन्दर आमतौर पर यह विश्वास किया जाता है कि नारियल का दूध अण्डकोषोंकी सूजन और अण्डकोषोंमें पानी भर जानेपर अच्छा लाभ करता है।

इसका ताजा दूध कमजोरी को दूर करनेके लिये सफलता पूर्वक दिया जाता है। क्षय की प्रारम्भ अवस्थामें और धातु विकृति से होने वाली कमजोरी पर यह बहुत लाभ-दायक है। बड़ी मात्रामें देनेसे यह मृदु विरेचक का काम करता है और कभी कभी इससे जुलाब भी हो जाता है।

कम्बोड़ियामें इसकी जड़, इसका दूध, इसका तेल, इसका गूदा और इसकी नरेटी औषधि प्रयोगमें काममें ली जाती है। वहां इसकी जड़ मूत्रल मानी जाती है। इसकी जड़ का काढ़ा सुजाक, ब्रोंकाइटीज और ऐसे यकृत सम्बन्धी रोगों में जिनमें पीलिया की शिकायत नहीं होती है दिया जाता है। इसका दूध विरेचक समझा जाता है। और यह कफके साथ खून जाने की बीमारीमें और प्रादाहिक ज्वर में दिया जाता है इसका तेल प्रधानतया मलहम बनानेके काममें लिया जाता है और यह मलहम गीली खुजली और दाद पर लगाया जाता है। इसका गोला दूसरी औषधियों के साथमें चमड़ेपर होने वाले व्रणों और खासकर नाक की श्लेष्मिक झिल्ली पर होने वाले व्रणोंपर खिलानेके काममें लिया जाता है। इसकी लकड़ी बवासीरके इलाजमें उपयोगी मानी जाती है।

केस और महस्करके मतानुसार एक नारियलका दूध और उसका खोपरा बड़े सवेरे खाली पेट खानेसे पेटमें पड़ने वाले चुन्ने (H‹ ok worm) बाहर निकल जाते हैं।

सुआरोग और नारियल—

सुआ या सूतिका रोग प्रसूतिके समय स्त्रियोंको होनेवाला एक महा भयंकर रोग है। इस रोगसे प्रतिवर्ष हजारों स्त्रियोंका जीवन खतरेमें पड़ जाता है। नारियलके द्वारा इस रोगकी चिकित्सा बहुत सफलतापूर्वक की जाती है। कोकणमें जहां कि नारियल बहुत पैदा होते हैं यह औषधि कोकाकी औषधिके नामसे प्रसिद्ध है। इसके बनाने की तरकीब इसप्रकार है।

नारियलके वृक्ष पर नारियल लगनेके पहिले नारियलका फूल लगता है। यह फूल जब कलीके रूपमें रहता है तब इसको नारियलका कोका या नारियलकी पोइ कहते हैं। ऐसी बिना खिली हुई एक पोइको लाकर उसका छिलका निकाल कर उसके अन्दरके दानोंको एक लकड़ीकी खरलमें डालकर बारीक कूट लेना चाहिये। फिर जायफल, जायपत्री, लवंगा, मिर्च और सोंठ, ये सब चीजें दो २ तोला और केशर १॥ तोला लेकर, पीसकर, कपड़ेमें छानकर उसमें मिला देना चाहिये। फिर इन सब चीजोंको उस लकड़ीकी खरलमें डालकर एक जीव हो जाने पर उसकी १४ गोलियां बना लेना चाहिये। अगर पोइ ताजी नहीं होती है तो औषधि भुरभुरी होनेसे गोलियां नहीं बनती है। अगर ऐसा हो तो उसमें थोड़ा गायका दूध मिला लेना चाहिये। पर जहां तक बने वहां तक ताजी पोइ लेना ही उत्तम होता है।

इन १४ गोलियोंमें से प्रतिदिन सवेरे शाम एक २ गोली पाव भर गायके दूधके साथ देना चाहिये। पथ्यमें सिर्फ गायका दूध पीनेको देना चाहिये। अगर सिर्फ अकेले दूधसे न रहा जाय तो थोड़ा सांठी चावलका भात दिया जा सकता है। मुँहमें रुचि पैदा करनेके लिये कुछ अदरक भी दिया जा सकता है। मगर पानीका इस औषधिमें बहुत सख्त परहेज रखना

पड़ता है। प्यास लगने पर भी सिर्फ गायका दूध ही पिलाया जाता है। औषधि चलनेके समय अगर भूलसे भी रोगीको पानी दे दिया जाय तो उसके जीवनकी आशा नहीं रहती है।

रोगीकी स्थितिके अनुसार ७।१४ अथवा २१ दिन तक यह औषधि दी जाती है और औषधि पूरी होनेके पश्चात भी ४।५ दिन तक पानी पीनेको नहीं दिया जाता है। नहाना मना रहता है। यहां तक कि पानी का स्पर्श करनेकी भी मनाई रहती है। इसके पश्चात धीरे २ दूधका प्रमाण घटाते हुए भातका प्रमाण बढ़ाते जाना चाहिये और धीरे-२ पानी देना भी शुरू करना चाहिये।

इस औषधिको लेनेसे भूख अच्छी लगने लगती है। दूध पचता है जिससे शरीरमें रक्त वृद्धि होकर नाड़ी भरपूर चलने लगती है। चेहरे पर तेज और लाली दिखने लगती है। रोगीको प्रसन्नता अनुभव होने लगती है। पहिले ही सप्ताह में इस औषधिका गुण दृष्टि गोचर होने लगता है। अगर भूख अच्छी तरह लगने लगे, दिन भरमें ४।५ सेर दूध हजम होजाय और रोगके लक्षणों में कमी दिखलाई दे तो यह औषधि अपना काम कर रही है ऐसा समझना चाहिये। अगर रोगकी प्रारंभिक स्थितिमें ही इसको दे दिया जाय तो बहुत जल्दी लाभ हो सकता है। सूतिका रोगके सिवाय क्षय, संग्रहणी और मंदाग्नि पर भी यह औषधि बहुत अच्छा काम करती है।

बड़ोदा स्टेटके चीफ मेडिकल ऑफिसर डॉक्टर सर भालचन्द्र कृष्ण भाटवडेकरने भी अपने अवला संजीवन ग्रंथमें इस औषधिको बहुत प्रशंसा की है।

नारियलकी पाई सब जगह सुलभ नहीं होती है। जहां नारियलके वृक्ष होते हैं। वहीं पर यह प्राप्त हो सकती है। अतः जिन लागों का यह नहीं मिल सके उनको यह औषधि तैयार रूपमें पनवेलके आर्यौषधि कारखानेसे मंगा लेना चाहिये। वहां पर इसकी २८ गोलियां ५ रुपये में मिलती हैं।

जंगलनी जड़ी बूटीके लेखक वैद्यशास्त्री शामलदास लिखते हैं कि हमारे पास सूतिका रोगवाली एक ऐसी स्त्री चिकित्साके लिये आई जो बंबई के अनेकों नामांकित डॉक्टरों और वैद्योंके पास चिकित्सा करवा चुकी थी और वहाँसे उसको जवाब मिल चुका था। हमने उसको पनवेलसे मंगाई हुई औषधि देना प्रारम्भ की और उसे सिर्फ दूधके पथ्य पर रखा। जिसके परिणाम स्वरूप वह असाध्य केस बहुत सफलताके साथ अच्छा होगया। इसी प्रकार बंबईके सर आदमजी की फर्म पर काम करनेवाले एक मुनीम को जो कि संग्रहणीके भयंकर रोगसे पीड़ित था और जो बम्बई, जैपुर और इन्दौर वगैरे के प्रसिद्ध चिकित्सकोंसे इलाज करा चुका था और उसे कोई लाभ नहीं हुआ था, वह भी हमारे पास आया और हमने इसी औषधिके द्वारा आराम किया।
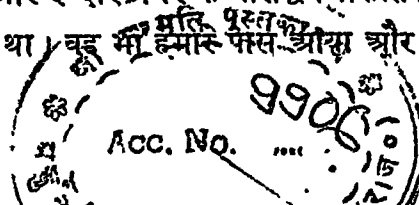
रासायनिक विश्लेषण—

रासायनिक विश्लेषणमें खोपरे के अन्दर मांसवर्धक द्रव्य ५॥ प्रतिशत, चर्बी ३५॥। प्रतिशत और पानी ४६॥। प्रतिशत होता है। मलाबार में नारियल का गुड़ बनाया जाता है। इसमें पानी १॥। प्रतिशत, ईखजन्य शक्कर ८७ॐ प्रतिशत और इनव्हर्टशुगर (Invert Sugar) ६॥। प्रतिशत रहती है। सूखे हुए गुड़में ८९ॐ प्रतिशत शक्कर रहती है। कोमल नारियलके दूध में ग्लूकोज ३॥। प्रतिशत और ईखजन्य शक्कर अल्प मात्रामें पाई जाती है। पके हुए नारियलके दूधमें ईखजन्य शक्कर ४। प्रतिशत होती है। मगर इसमें ग्लूकोज नहीं होता है। नारियल का तेल रसशास्त्र की दृष्टिसे सुदावके तेलके समान होता है। इसमें अम्लता रहती है। ताजे पके हुए नारियल को सुखाकर तुरन्त उसका तेल निकालनेसे उसमें अम्लता नहीं होती। इसका ताजा निकाला हुआ तेल चर्बी के बदलेमें काममें लिया जाता है और चर्बी की अपेक्षा श्रेष्ठ सिद्ध हो चुका है। मलहम तैयार करनेमें चर्बी की अपेक्षा नारियल का तेल विशेष उपयोगी होता है।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार नारियलकी नरेटी जलाकर प्राप्त किया हुआ तेल कुष्ट नाशक होता है। नारियलके खोपरेका तेल केश वर्धक, कृमिनाशक, व्रणरोपक, कफको दूर करने वाला और सूजनको नष्ट करने वाला होता है।

कोमल नारियलका पानी शीतल, मूत्रल और तृषाशामक होता है। कोमल नारियलका दूध मूत्रल और शांतिदायक होता है नारियलकी ताड़ी बलदायक, दीपन पाचक, कोठेकी वायुको नष्ट करने वाली, ज्वर नाशक और वाजि करण होती है। इसका खोपरा कृमिनाशक होता है।

पेटमें चपटे कृमि पड़ने पर नारियलका खोपरा खिलानेसे वे जन्तु मर जाते हैं और कोई जुलाबकी दवा देने पर वे बाहर निकल जाते हैं। नारूके रोगमें खोपरेके साथ हींग देनेसे लाभ होता है। पके हुए नारियलका स्वरस खांसी, क्षय और कमजोरी में दिया जाता है। इससे कब्ज मिट जाती है। आपरेशन या शस्त्र क्रिया करनेके पूर्व कोमल नारियलका दूध देनेसे रक्त श्राव कम होता है। कोमल नारियल का पानी ज्वर और सुजाकमें दिया जाता है। हैजेकी वमनको रोकनेके लिये भी यह उपयोगी है। पुराने नारियलको कसकरके उबाल करके निकाला हुआ तेल खांसी और क्षय रोगमें काडलीव्हर आईलके बदलेमें दिया जाता है। इस तेलको निकालते समय अगर उसमें थोड़ा अगर डाल दिया जाय तो वह तेल उत्तम व्रण रोपक हो जाता है। ज्वरकी वजहसे अगर किसीके बाल खिर गये हों तो सिरमें नारियल का तेल डालनेसे नये बाल पैदा हो जाते हैं। मेद रोगमें खोपरेका तेल खिलानेसे शरीरके अन्दर बढ़ी हुई चर्बी कम हो जाती है।

उपयोग—

दाद—नारियलकी नरेटीके टुकड़े करके उनको हांडीमें भरकर पाताल यन्त्रसे तेल निकाला जाता है। इस तेलको दाद पर लगानेसे दाद मिट जाता है।

अग्निदग्ध—पके खोपरेमें से निकाले हुए दूधमें तेल डालकर आगपर औटाकर अग्निसे जले हुए स्थानपर और सिरकी गंजपर लगाया जाता है।

कफक्षय—खोपरेको पानीके साथ पीसकर पानीमें उसका दूध बनाकर पिलानेसे कफ क्षयके रोगियों को बड़ा लाभ होता है।

रक्तश्राव—नारियलकी शाखाके नीचेके भागमें बाहरकी ओर रुई जैसा एक कोमल, हलका और भूरे रंगका पदार्थ चिपका रहता है। उसको घाव, चोट या जोंकके डंकपर लगानेसे खूनका बहना बन्द हो जाता है।

चर्मरोग—नरेटीका चोया लगानेसे सब प्रकारके चर्मरोग मिटते हैं।

हैजेकी वमन—हैजेकी वमन अगर किसी दूसरी औषधिसे बन्द न होवे तो नारियलका जल पिलानेसे अवश्य बन्द होजाती है।

गर्भावस्थामें बालकको सुन्दर बनाना—इसके वृक्षमें से निकलने वाली ताड़ी या मीठा मादक रस गर्भवती स्त्रीको हर सप्ताहमें २।४ वार लगातार पिलाते रहनेसे गर्भमें बालकका रंग पलट जाता है। अर्थात काले रंगकेमां वापके बालक का रंग गेहुँआ, गेहुँए रंगवाले मां बापोंके बालक का रंग गोरा और गोरे रंग वाले मां बापों के बालकों का रंग यूरोपियनों की तरह हो जाता है।

पित्तज्वर—नारियलके फूलोंके गुलकन्दमें खस और सफेद चन्दनका बूरा मिलाकर पानीके साथ पिलानेसे पित्त ज्वरमें बहुत लाभ होता है, वमन मिट जाती है, कलेजेमें ठंडक होती है और अतिसार तथा मुखपाक मिटता है।

हिचकी—नारियलकी जटाकी राखको पानीमें घोल कर उस पानीको नितार कर पिलानेसे हिचकी आना बन्द हो जाता है।

चोट और मोच—पुराने नारियलकी गिरीको बारीक कूटकर उसमें चौथाई हिस्सा पीसी हुई हल्दी मिलाकर पोटलीमें बांध कर सेक करनेसे चोट और मोचकी पीड़ा तथा सूजन मिट जाती है।

आधा शीशी—नारियलके पानीको नाकमें टपकानेसे आधा शीशीमें लाभ होता है।

शीतला—दूध पीने वाले बालक की मांको ७ दिन तक नारियलकी गिरी खिलानेसे बच्चेको शीतला कम निकलती है।

गर्भाशयकी पीड़ा—प्रसूतिके पश्चात् गर्भाशयमें पीड़ा होती हो तो खोपरा खिलानेसे लाभ होता है।

नारदेन

नाम—

यूनानी—नारदेन।

वर्णन—

नारदेन एक प्रकारके घासकी खुशबूदार जड़ होती है। इसका रंग पीला हलदीके समान होता है। नेत्र बाला की तरह बहुतसे तार इस पर लगे हुए होते हैं। जड़की उत्तमता उसके मोटेपन, उसकी सुगन्ध और उसके पीले रंगसे मानी जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जे में गरम और तीसरे दर्जे में खुश्क है। इसको पीनेसे फ़ालिज, लकवा और पीलियामें लाभ होता है। पेशाब और मासिक धर्म अधिक आता है। सूजनमें भी लाभ पहुँचता है। इसके काढ़ेके टबमें बैठनेसे यकृत, गुर्दे और गर्भाशयकी बीमारियोंमें लाभ पहुँचता है। इसको गरम मलहमों में भी शामिल करते हैं।

नारू की बूटी

नामः—

हिन्दी—यूनानी—नारूकी बूटी।

वर्णन—

यह एक क्षुद्र जातिकी वनस्पति है। इसका पौधा जमीनसे सिर्फ ४ अंगुल ऊँचा उठता है। इसमें बहुत सी डालियां तारके मुआफिक निकलती हैं। ऐसा मालूम होता है मानों तारोंका गुलदस्ता हो। इसकी डालियोंके चारों तरफ बालके समान तंतु रहते हैं। इसके फूलकी पँखड़ियां गुलाबी होती हैं। फूल बहुत छोटा होता है। फूल पकने पर उसमें घुड़ी बँधती हैं। यह धनियेके दानेसे भी छोटी होती है और दानोंके अन्दर बीज होते हैं। यह वनस्पति नारूके बीमारोंके लिये मुफीद है। इसीलिये इसको नारूकी बूटी कहते हैं।

गुण दोष और प्रभाव—

इस सारी वनस्पतिको पीसकर नारू पर लेप करनेसे नारू निकल जाता है।

नावां

नाम:—

संस्कृत—रक्तपूरक। हिन्दी—नावां। यूनानी नाय।

वर्णन—

यह एक छोटी जातिकी वनस्पति है। जो राज़पुताना और मालवेमें बहुत पैदा होती है। इसकी छोटी और बड़ी दो जातियां होती हैं। इसकी शाखाएँ पतली और गिरहदार होती हैं। इसके पत्ते लम्बे और चौड़ाई लिये हुए होते हैं। इसके पत्तोंका स्वाद बहुत कड़वा होता है। कड़वेपनमें यह कुनेनसे कम नहीं होती।

गुणदोष और प्रभाव—

राजपूताना और मालवामें यह वनस्पति बुखारका एक घरेलू इलाज है। यहांके लोगों का विश्वास है कि इसके पत्तोंको ३ दिन तक घोटकर पिलानेसे कैसा ही तीव्र बुखार हो निकल जाता है। इसके १ तोला पत्तोंको २१ मिरचोंके साथ घोटकर ३ दिन तक पीनेसे नारू बिलकुल निकल जाता है।

यूनानी मत—

यूनानीमत से यह तीसरे दर्जेमें गरम और खुश्क है। वायु और कफको मिटाती है। भूख बढ़ाती है। इसके पत्तोंका शीत निर्यास जीरा, काली मिरच और लहसनके साथ देनेसे मासिक धर्म और पेशाव साफ होता है। गठिया और अर्धाङ्गवायु में भी यह मुफीद है। इसके सेवनसे पेटके कीड़े मर जाते हैं।

नासपाती

नाम—

संस्कृत—अमृतफल। हिन्दी—नासपाती। काश्मीर—अमरूद, वतंक, किश्ता वाहिरा, नासपाती। अफगानिस्तान—अमरूचा। पंजाव—वातंग, वतंक, चारकेंत, ली, नाक, नासपाती, संकेत, टांग, टांगी। तामील—पेरीकेइ। तेलगू—वेरीपांडू। अंग्रेजी—Pear. लेटिन—Pyrus Communis. (पयरस कम्यूनिस)।

वर्णन—

नासपातीका बड़ा वृक्ष होता है। इसके पत्ते अमरूदके पत्तोंके बराबर मगर कुछ चौड़े होते हैं। इसकी कई जातियां होती हैं। जैसे—जंगली, पहाड़ी, वस्तानी, इत्यादि। वस्तानीमें भी खुरासानी, चीनी, काश्मीरी, इत्यादि कई जातियां होती है। इसमें चीनकी नासपाती सबसे अच्छी होती है। काश्मीरकी नासपाती भी बहुत मीठी होती है जिसको नाक कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे नासपाती धातुवर्धक, मधुर, भारी, रुचिकारक, अम्ल, वातनाशक और त्रिदोपको शान्त करनेवाली होती है।

यूनानी मत—

यूनानीमतसे यह दूसरे दर्जेमें गरम और तर है। मीठी नासपाती समशीतोष्ण होती है।

मीठी नासपाती देरसे पचनेवाली और काविज होती है। इसके लेपसे नजलेमें लाभ होता है, यह दिमाग़में तरावट पैदा करती है, दिल और आमाशयको ताकत देती है, पागलपन को मिटाती है, तृपाशामक है, मसानेकी जलन व सूजनको शान्त करती है, दिमागमें गेस चढ़नेसे रोकती है, शफरी (चीनी नासपाती) प्यास और पित्तको शांत करती है, फेफड़ेके दर्दको मिटाती है, वमनको रोकती है। इसको कुचल कर रस निकाल कर उसका सत तैयार करके देनेसे मेदेको ताक़त है मिलती और दस्त वन्द होजाते है। इसके लेपसे आंखकी सूजन उतरती है, इसके सेवन से कफके साथ खून जाना रुकता है। इसके बीज फेंफड़ेके दर्दको दूर करते हैं, धातुवर्धक हैं और आमाशयके कीड़ोंको मारकर निकाल देते हैं।

इसके वृक्ष का गोंद सूजन को उतारता है। दोषों को पकाता है। फेफड़े के दर्द और

जखममें मुफीद है। इसके पत्तों का पीसकर पिलानेसे सांपके विषमें लाभ होता है। इसके पत्तों व लकड़ी की राख जखम पर भुरभुरानेसे जखम भर जाता है।

मुजिर—यह सर्द मिजाज के बुड्ढों और कफ प्रकृति वालोंके पेटमें फुलाव और उदर शूल पैदा करती है। कच्ची खानेसे गुर्देको नुकसान पहुँचाती है। इसका गोंद तिल्ली को नुकसान पहुँचाता है।

प्रतिनिधि—बिही।

मात्रा—बीज की १४ माशे और गोंद की ६ माशे।

उपयोगः—

रक्तातिसार—नासपातीके शरबतमें बेलगिरि या अतीस मिलाकर चटानेसे रक्तातिसार मिटता है।

रक्त की वमन—इसके शरबतमें बेर की मींजी भुरभुराकर चटानेसे रक्त की वमन मिटती है।

पित्त की मस्तक पीड़ा—नासपातीके स्वरसमें शक्कर डालकर पिलानेसे पित्त की मस्तक पीड़ा मिटती है।

खूनी बवासीर—इसके मुरब्बेमें नागकेसर मिलाकर खिलानेसे बवासीर का खून बन्द होता है।

मन्दाग्नि—इसके रसमें पीपल भुरभुराकर पिलानेसे पित्त की मन्दाग्नि मिटती है।

अरुचि—इसके रसमें सेंधा निमक, काली मिरच और भुना हुआ जीरा भुरभुराकर चटानेसे अरुचि मिटती है।

नासपाती खट्टी

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मतसे यह पहले दर्जेमें खुश्क होती है। मेदे और जिगर को ताकत देती है। भूख पैदा करती है। मतली को रोकती है। खून और पित्त की तेजी को शान्त करती है। शरीर में नया खून पैदा करती है।

इसको शराब पीनेके बाद खाना और इसको खाने के बाद स्नान करना बहुत बुरा है।

नासपाती जंगली

गुणदोष और प्रभाव—

वर्णन—

इसका वृक्ष साधारण नासपातीसे छोटा और फल भी छोटा होता है। यह दूसरे दर्जे में सर्द और तीसरे दर्जेमें खुश्क है। कब्ज पैदा करती है, पेटमें सुद्दे जमाती है, इसको सुखाकर चूर्ण करके खानेसे दस्त बन्द होते हैं। इस चूर्ण को जखम पर छिड़कनेसे जखम भर जाता है।

निर्मली

नाम :—

संस्कृत—कतकम, तोयप्रसादनम्, अम्बुप्रसादः, तिक्तमरिचः, गुच्छफल। हिन्दी—निर्मली पायपंसारी। बंगाल - निर्मली। बम्बई-गजराह, निर्मली। मध्यप्रान्त—कुवी। दक्षिण—चिलबिज। मराठी—निर्मली, चिलबिंग, गजरा। पंजाब—निर्मली। तामील—अक्कोलम, कदालि तेलगू—अंडूगू। उर्दू—निर्मली। इंग्लिश - Clearingnut Tree लेटिन—Strychnos Potatorum (स्ट्रिकनस पोटेयेरम)।

वर्णन—

निर्मली के वृक्ष मध्य प्रान्त, दक्षिणी भारत, बंगाल और बिहारमें होते हैं। इसके वृक्ष बकायनके वृक्षके बराबर और कोई कोई इससे बड़े भी होते हैं। इसकी छाल गहरे धुएं के रंग की होती है। इसके फूल सफेद और खुशबूदार होते हैं। पत्ते तणगछ के पत्तों की तरह होते हैं। इसका फल पकने पर जामुन की तरह काला पड़जाता है और उसके अन्दर एक बीज गूदेमें लिपटा हुआ, कुचले का आकार का मगर उससे कुछ छोटा निकलता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मतसे निर्मली वृक्ष चरपरा, कड़वा, लेखन, रुचिकारक, हलका, नेत्रों को हितकारी, कसेला, शीतल, विशद, मधुर तथा तृषा, दाह, विष, गुल्म, शूल, कृमि, प्रमेह, नेत्ररोग और जलको निर्मल करने वाला होता है। इसका कोमल फल—नेत्रों को हितकारी, वात वर्धक, शीतल तथा रक्तपित्त, तृषा, विष और मोहको दूर करता है।

इसका तरुण फल दुर्जर, रुचिकारक, कफ और पित्त को नष्ट करनेवाला होता है। इसका पका फल पित्त कारक, वमन कारक, पसीना लाने वाला तथा सूजन, पाण्डुरोग, विष, जुकाम और कामला रोगको दूर करने वाला होता है।

इसके बीज नेत्रों को हितकारी, कसेले, भारी, जलको निर्मल करने वाले, मधुर तथा पथरी, वात, कफ, मूत्रकृच्छ्र, तृपा, नेत्र रोग, विप, प्रमेह, और मस्तक रोग को दूर करते हैं।

निर्मली की जड़ सब प्रकारके कुष्टों को दूर करनेवाली है।

बहुत प्राचीनकालसे भारतवर्षमें निर्मलीके बीज जल को साफ करनेके उपयोगमें लिये जाते हैं। सुश्रुतसंहिता में भी पानीके प्रकरणमें इनका वर्णन किया गया है। औषधिके रूपमें इनका प्रधान प्रयोग नेत्र रोगोंके ऊपर बाहरी उपचार की तरह किया जाता है।

इसके बीजों को पीसकर शहदमें मिलाकर थोड़ी सी कपूर मिला कर उसका लेप आंखोंके आस पास किया जाता है। इससे आंखोंके अन्दर से पानी का बहना बन्द हो जाता है। इनको पीसकर पानी में कुछ सेंधे नमकके साथ मिलाकर आंखोंके आस पास लगानेसे नेत्र शुक्ल रोग और चक्षुप्रदाह दूर होते हैं।

मद्रासमें इसके बीज मधुमेह और सुजाकमें उपयोगी माने जाते हैं।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह वनस्पति समशीतोष्ण है। इसके बीजों को पानीमें पीसकर नाभि के आस पास लेप करनेसे पेटके कीड़े मर जाते हैं। इनको पीसकर सांपके काटे हुए को भी खिलानेसे लाभ होता है। इसके ४ दानों को पानीमें पीसकर मिश्री मिलाकर पिलाने से सुजाक में लाभ होता है, बन्द पेशाब खुल जाता है और जलन मिट जाती है। ७ दिन तक खानेसे पूरा लाभ होता है। इसके ४ दानों को पानीमें पीस कर दहीमें मिलाकर चीनी के प्यालेमें रखकर मुंह पर कपड़ा बांध कर रात भर पड़ा रहने दें, सवेरे उसको खालें। इस प्रकार ७ दिन तक खानेसे और पथ्यमें दही चांवल लेनेसे सुजाक, पेशाब की जलन और पेशाब के साथ खून जाना बन्द होता है। इसके बीजों को जला कर खानेसे बवासीर से जानेवाला खून बन्द हो जाता है।

निर्मली के बीजो को पीस कर आंखमें लगानेसे अर्जुन रोग मिटता है। आंख की कई बीमारियोंमें इसके बीज काम आते हैं। इनको आंखमें लगाने से आंख की ज्योति बढ़ती है। निर्मलीके १ बीज को पीस कर मट्ठे में मिलाकर ७ दिन तक खिलानेसे बहुत दिनों के पुराने दस्त जो किसी दवासे बन्द न होते हों वे बन्द हो जाते हैं।

इसके बीजों को पीसकर दूधके साथ फक्की लेनेसे सुजाक में लाभ होता है। निर्मली को जला कर उसकी राखमें थोड़ीसी शक्कर मिला कर खानेसे खूनी बवासीर मिटता है। निर्मली को शहदमें पीसकर आंखमें लगानेसे मोतियाबिंद मिटता है। इसके बीज को मट्ठे के साथ पीस कर शहद मिला कर खानेसे सब प्रकारके प्रमेह मिटते हैं।
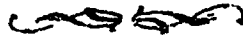
निर्गुण्डी

नाम:—

संस्कृत—इन्द्राणी, नीलपुष्पा, नील निर्गुण्डी, निर्गुण्डी, शेफाली, सुरसा, सुवाहा, श्वेत सुरसा। हिन्दी—निर्गुण्डी, निंगोरी, सम्भालु, सिंदुआरी। बंगाली—निर्गुण्डी, निंपिन्दा, समालु। बरार—सेमालू। बम्बई—निर्गुण्डी, कतरी, लिंगुर शिवारी। गुजराती—नगोड़, नगोरम निगोड़, निर्गोरी। मराठी—निगुण्डी, लिंगड़। फारसी—वंजानगश्त, सिसवन। पंजाब—बनकाहू, मरवा, मरवार, विन्ना, मावा, मोरीन, सनक, खारी। तामिल—निर्कुण्डी, नोचि, सिन्दुवरम्। तेलगु- नल्लाहा विली. मिन्दुवरम्। इंगलिश—Indian Privete (इण्डियन प्रिवेट)। लेटिन—Vitex Negundo (विटेक्स नेगुण्डो)।

वर्णन—

निर्गुण्डीके वृक्ष ८ से लेकर १० फीट तक ऊँचे होते हैं। इनमें पतली पतली बहुत सी शाखाएं निकली हुई होती हैं। ये शाखाएं फीकी, सफेद और भस्मी रंग की होती हैं। इसके पत्ते जुड़मा और तीन तथा पांचके झुण्डमें लगे हुए रहते हैं। ये ऊपर की तरफ सफेद रंगके रोंएदार होते हैं। इस वृक्षके ऊपर हलके नीले रंगके छोटे फूल आते हैं। इसके फल काले रंगके होते हैं।

इस सारे पौधेमें एक प्रकार की तीव्र और अरुचिकारक गन्ध आती है। इस वनस्पति की दो जातियां होती हैं। एक सादे पत्तेवाली और दूसरे कंगूरेदार पत्तेवाली। कंगूरेदार पत्तेवाली जाति अधिक प्रभावकारी और अधिक गुणकारी होती है। यही जाति औषधि-उपयोगमें ली जाती है। औषधिमें इसका पञ्चांग उपयोग में लिया जाता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे निगुण्डी कड़वी, तीखी, तूरी, हलकी, गर्म, दीपन, वातनाशक, वेदना शामक, कुष्टघ्न, व्रणशोधक, व्रणरोपक, शोथघ्न, कफनिस्सारक, ज्वर-नाशक, पार्यायिक ज्वरोंको रोकनेवाली, खांसी को दूर करनेवाली, मूत्रल, आर्त्तव, कृमिनाशक, मज्जा-तन्तुओं को शक्ति देनेवाली, बलवर्धक और परम रसायन है।

निगु ण्डीका सूजन को नष्ट करनेवाला, वेदनानाशक और वातनान्तक गुण बहुत प्रभावशाली है। इन कार्योंमें इसकी जितनी प्रशंसा की जाय वह कम है। जिन रोगोंके अन्दर सूजन प्रधान होती है उन रोगोंके अन्दर यह एक अकसीर औषधि है। किसी भी प्रकार की सूजन, फिर चाहे वह शरीरके भीतर हो चाहे बाहर, इस औषधिसे दूर होती है। फेफड़े की सूजन, फेफड़ेके परदे की सूजन, आंतोंके परदे की सूजन, सन्धियों की सूजन, तीव्र आमवातमें होनेवाली सन्धियों की सूजन इत्यादि हर प्रकार की सूजन में इसके बराबर लाभ पहुँचानेवाली दूसरी औषधि शायद ही कोई हो। वैसे पुनर्नवा, नागदमन, कटकरंज, वच्छनाग, अफीम, पारा, सोना इत्यादि कई औषधियां आयुर्वेदमें सूजन को दूर करने वाली बतलायी गयी हैं, मगर निर्गुण्डी इन सबमें अग्रगण्य, गुणकारी और सर्वसुलभ है। किसी भी विकारसे पैदा हुई सन्धियों की सूजन अथवा दूसरी सूजनमें दर्द और सूजन को कम करनेके लिये निगु ण्डीके समान उस्ताद औषधि शायद ही कहीं नसीब हो।

हर प्रकार की सूजनमें इसको देने की पद्धति इस प्रकार है: –

इसके पत्तोंको थोड़ा कुचालकर एक मिट्टी की हण्डीमें डालकर, उस हण्डीमें ढकनी लगाकर, उस ढकनी की सन्धियों को कपड़ मिट्टीसे बन्दकर चूल्हे पर चढ़ाकर हलकी आंच दी जाती है। जब यह मालूम होने लगे कि भीतरके पत्ते गर्म हो गये हैं, तब उस हण्डियाको उतार कर, उसकी ढकनी को खोलकर भीतरके पत्तों को निकालकर सूजनके ऊपर बांधते हैं। इस कार्यके लिए अगर निगु ण्डीके पत्तेके साथ थोड़े नीम और धतूरेके पत्ते भी डाल दिये जायं तो विशेष लाभदायक होते हैं। चार घण्टेके बाद इन पत्तों को खोलकर फिर पीछे उसी प्रकार गर्म करके दुबारा बांध दिये जाते हैं। हाथ पैरमें होनेवाली लचक और मोच पर भी इन पत्तों को बांधनेसे बड़ा लाभ होता है। कण्ठमालमें भी इसके पत्तोंके सेंकसे और इसके पत्तोंके स्वरसको नाकमें टपकानेसे विशेष लाभ होता है।

नारू रोगमें भी इसके पत्तों का स्वरस पिलानेसे और इसके पत्तोंसे सेंक करनेसे लाभ होता है। कानके अन्दर पीब पड़ने की हालतमें इसके स्वरससे सिद्ध किये हुए तेलको शहदके साथ कानमें डालते हैं। व्रण, कुष्ठ, कफयुक्त विसर्प, रक्तपित्त वगैरह चर्म रोगोंमें निगु ण्डी का अन्त:प्रयोग और बाह्यप्रयोग दोनों किया जाता है। सुजाक की पहली अवस्थामें निगु ण्डीका काढ़ा बहुत गुणकारी होता है। सुजाकके रोगियोंका कभी कभी पेशाब बन्द हो जाता है, ऐसी स्थितिमें, इसके पत्तों के गर्म काढ़ेमें रोगी को बिठानेसे पेशाब बहुत जल्दी हो जाता है।

कफ ज्वर और फेफड़े की सूजनमें निगु ण्डी का स्वरस अथवा इसके पत्तों का काढ़ा पीपरके साथ दिया जाता है और इसके पत्तों का सेंक किया जाता है।

यद्यपि निगु ण्डी एक उत्तम शोथघ्न औषधि है, पर इससे दस्त साफ नहीं होता है;

यह इसमें एक बड़ा दोष है। इसलिए, शोथरोगमें इसको देनेके पहले रोगी को जुलाब दे देना चाहिए और बीच बीचमें जब भी कब्जियत हो, तब जुलाब देते रहना चाहिए। अथवा इसके आनुलोमिक धर्म की कमी को दूर करने के लिए इसके साथ नागदन्ती को मिलाकर देना चाहिए।

गलेके अन्दर होने वाली नवीन सूजनमें इसके सूखे पत्तोंको चिलममें रखकर पिलाये जाते हैं और इसके पत्तोंका काढ़ा छोटी पीपर और चन्दनके साथ बनाकर पिलाया जाता है।

बारीसे आने वाला मलेरियाज्वर, सूतिकाज्वर और दूसरे प्रकारके ज्वरों में इसके पत्तोंका चूर्ण, पंचांगका स्वरस, फाण्ट अथवा काढ़ा बनाकर देते हैं और इसके काढ़ेसे रोगीके शरीरको धोते हैं। इससे रोगीके शरीरकी गर्मी और दुर्गन्ध कम होती है और पेशाब साफ होता है। मलेरिया ज्वरमें अगर रोगीका यकृत् या तिल्ली बढ़ गयी हो तो निर्गुण्डीके पत्तोंका चूर्ण हरड़ और गोमूत्रके साथ देते हैं अथवा निर्गुण्डीके पत्ते काली कुटकी और रसोतके साथ देते हैं। ज्वरके अन्दर होने वाली वमन और घबराहटको कम करनेके लिए निर्गुण्डीके फूल शहदके साथ देना चाहिए। सूतिका ज्वरमें निर्गुण्डीको देनेसे गर्भाशयका संकोचन होता है और भीतर की गन्दगी निकाल कर साफ हो जाती है। गर्भाशय और उसके भीतरी भागमें होने वाली सूजन भी इससे उतर जाती है और वह पूर्वस्थितिपर आजाता है।

पेटके अन्दर होने वाला वात संचय और उससे होने वाले उदर शूलमें इसके पत्तोंके स्वरसको काली मिर्च और अजवाइनके साथ देते हैं। इससे मनुष्यकी पाचन-शक्ति सुधर जाती है और पेटके अन्दर वायुका संचय नहीं होता। यकृत् की क्रिया सुव्यवस्थित रखनेके लिए निर्गुण्डीको भांगरेके साथ देते हैं। जलवातमें निर्गुण्डीको पेटमें देनेसे और इसके पत्तोंको पीसकर हाथ पांव पर बांधनेसे बहुत लाभ होता है। निर्गुण्डी मज्जा तन्तुओंके लिए भी एक पौष्टिक पदार्थ है। इसलिए मज्जातन्तुओंकी थकावटसे होने वाले रोगों में इसको देनेसे बड़ा लाभ होता है।

सब प्रकारके रोगोंमे निर्गुण्डीको शिलाजीतके साथ देनेसे बड़ा लाभ होता है। निर्गुण्डी और शिलाजीतका मिश्रण अमृतके समान है।

सन् १६२४ के अखिल भारतीय वैद्य-सम्मेलनके अध्यक्ष कविराज योगीन्द्र नाथ सेन एम. ए. ने निर्गुण्डीके तेलका एक चमत्कार पत्रोंमें प्रकाशित करवाया था। उन्होंने लिखा था कि अहमन सिंह नामक एक वृद्ध मनुष्यको उसके दुश्मनोंनें खूब मारकर एक खेतमें डाल दिया था, वहांसे उसके सम्बन्धी उसको उठाकर अस्पतालमें लेगये। उसके शरीरमें कई घाव लगे हुए थे और घाव तो वहांकी चिकित्सामें आराम होगये, मगर उसके बांए हाथ पर एक बड़ा और गहरा घाव था जो दिन दिन अधिक सड़ता जाता था। तीन महीने तक डाक्टरोंने उसको

अच्छा करनेके लिए बहुत परिश्रम किया मगर जब वह और भी अधिक सड़ गया तब उन्होंने उससे कहा कि तू लखनऊ जाकर अपना हाथ कटवा डाल। इसी अर्से में प्रसंगवश मेरा वहाँ जानेका काम पड़ा और मैंने उस रोगीके घावपर निर्गुण्डीके पत्तोंके रससे सिद्ध किया हुआ तेल लगाना प्रारम्भ किया। सब लोगोंने आश्चर्यके साथ देखा कि उसका वह न भरने वाला घाव तीन हफ्तेमें बिलकुल भरकर बराबर होगया।

खांसी दमा और निर्गुण्डी—

सिद्धनित्यनाथ अपने रस रत्नाकर नामक ग्रन्थमें लिखते हैं कि निर्गुण्डीके पत्तोंका रस एक बर्तनमें डालकर हलकी आंचसे पकाना चाहिए। जब वह गुड़की चासनीके समान गाढ़ा हो जाय तब उसको उतार लेना चाहिए। दमा, खांसी और क्षयके रोगियोंको वमन, विरेचन इत्यादि पंचकर्मों से शरीरको शुद्ध करके इस अवलेहका सात दिन तक सेवन करना चाहिए। इसके सेवनसे मुँह, नाक, आंख और कानके रास्तेसे इन रोगोंके रोगोत्पादक जन्तु निकल जाते हैं। इसके सात दिनके सेवनसे खांसी और क्षय में बहुत लाभ होता है और तीन महीनेके सेवनसे मनुष्यकी वृद्धावस्था दूर होकर दीर्घायु प्राप्त होती है। जब तक यह प्रयोग चालू रहे तब तक अन्न और जल का त्याग करके सिर्फ दूध पर रहना चाहिए।

कीर्तिकर और बसुके मतानुसार इसके पत्ते सुगन्धित, पौष्टिक और कृमिनाशक होते हैं। निर्गुण्डीके पत्तोंका काढ़ा जुकामयुक्त ज्वरमें सिर दर्द में, तथा कानोंके बहरेपनमें दिया जाता है। इसके पत्तोंके रसमें ऐसे पदार्थ हैं, जो प्रसूतिके समय होनेवाले स्रावको दूर कर देते हैं और घावोंके अन्दरके कृमियोंको नष्ट कर देते हैं। इसके पत्तोंसे सिद्ध किया हुआ तेल नासूर और कण्ठमालाके फोड़ों पर लाभदायक माना जाता है।

इसके पत्ते सन्धियोंकी सूजन, गठिया और सुजाककी वजहसे होनेवाली सूजनमें उपयोगी होते हैं। कोकणमें इसके पत्तोंका रस भांगरा और तुलसीके पत्तोंके रसके साथ अजवाइनका चूर्ण मिलाकर छः मासेकी मात्रामें सन्धिवातको दूर करनेके लिए दिया जाता है। बढ़ी हुई तिल्लीको ठीक करनेके लिए इसका दो तोला रस दो तोले गोमूत्रके साथ मिलाकर प्रतिदिन सवेरे पिलाया जाता है।

सीलोनमें इसके पत्ते छाल और जड़ दन्तशूल, सन्धिवात और नेत्ररोगोंको दूर करनेके लिए दिये जाते हैं और ये पौष्टिक शान्तिदायक और कृमिनाशक समझे जाते हैं।

चरक और सुश्रुत के मतानुसार इसका पौधा सर्पविष और बिच्छूके विष पर उपयोगी होता है।

रावर्टके मतानुसार सर्पविषके केसोंमें इसकी जड़, छाल और पत्तोंको कुचलकर दंश स्थान पर लेप किया जाता है और इसके पत्तोंका ताजा रस रोगीकी वेहोशी और अचेतनता को दूर करनेके लिए नाकमें टपकाया जाता है और इसकी जड़ और छालका काढ़ा वनाकर पिलाया जाता है।

कैस और महस्करके मतानुसार इसका पौधा सर्पविषमें विलकुल निरुपयोगी है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से निगुंण्डी गर्म और खुश्क है। यह कफकी अधिकताको मिटाती है। वायु, खुजली और खूनके उपद्रवोंको दूर करती है। सर्दीकी वीमारियोंमें वहुत मुफीद है, वुद्धिको वढ़ाती है, आंखकी रोशनीको तेज करती है, उदरशूल और सूजनमें लाभदायक है, पेटकी कृमियोंको मारकर निकाल देती है। भूख वढ़ाती है, इसको घिसकर कामेन्द्रिय पर लेप करनेसे कामेन्द्रियकी शिथिलता दूर होती है। चार तोला निगुंण्डीको चार तोला सोंठके साथ पीसकर आठ पुड़िया वाध लें, इसमेंसे एक एक पुड़िया रोजाना दूधके साथ लेनेसे मनुष्यकी कामशक्ति वहुत वढ़ती है। इसके पत्तोंको पीसकर पागल कुत्तेके काटे हुए स्थान पर लगानेसे उसका विष नष्ट हो जाता है। आधा शीशीमें सिरके जिस हिस्सेमें दर्द हो उसके दूसरी तरफके नथनेमें इसके रसकी पांच वूँदें टपकानेसे दर्द दूर हो जाता है।

वनावटें:—

निगुंण्डीकल्प—निगुंण्डी की जड़का चूर्ण ३२ तोला लेकर उसमें ६४ तोला शहद मिलाकर, घी भरनेसे तर हुई हांड़ीमें भर देना चाहिए, फिर उस पर ढकनी लगाकर उस ढकनीकी सन्धियों को कपड़मिट्टीसे वन्द करके एक महीने तक अनाजके कोठेमें दवा देना चाहिए। उसके पश्चात् उसको निकालकर एक तोलेसे दो तोले तक की मात्रामें सवेरे शाम खा लेना चाहिए। इस प्रकार एक महीने तक सेवन करनेसे मनुष्य सब रोगोंसे रहित होकर वृद्धावस्थासे मुक्त होता है। यदि हर साल एक महीने इस औषधि का सेवन कर लिया जाय तो मनुष्य कई प्रकार के शारीरिक रोगोंसे मुक्त रहता है। अगर इसी औषधि को गोमूत्रके साथ सेवन किया जाय तो कुष्ठ, नासूर, खुजली, गुल्म, तथा तिल्ली की वृद्धि इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

निमुर्डी

नामः—

मराठी—निमुर्डी । लेटिन—Blumea, Eriantha (ब्लूमिया एरिन्था)।।

वर्णन—

यह ककरौंद की जातिकी एक वनस्पति होती है। इसके पत्ते २·५ से ७·५ सेन्टीमीटर तक लम्बे और १·३ से ३·८ सेन्टीमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति बुन्देलखण्ड, कोंकण, मद्रास और दक्षिणी प्रदेशोंमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पति का रस एक शान्तिदायक पदार्थ की तरह काममें लिया जाता है। इसके पत्ते निर्गुण्डी और कुम्भीके पत्तेके साथ सेंक करनेके काममें लिये जाते हैं। इसका गर्म काढ़ा जुकाम और सर्दी को दूर करनेके लिए पसीना लानेवाली वस्तु की तरह दिया जाता है और इसका शीत निर्यास मूत्रल और ऋतु स्राव नियामक माना जाता है।

निराधारी

नाम—

हिन्दी—निराधारी। गुजराती—अमरवेल। मराठी—निर्मूली। काठियावाड़—चिदिओ लेटिन—Cuscuta Hyalina (कस्क्यूटा हेलेना)।

वर्णन—

यह अमरवेलि की ही एक दूसरी उपजाति है। यह बलूचिस्तान, सीमाप्रान्त और अबिसीनियामें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

ब्लेटर और हलवर्गके मतानुसार हिन्दुस्तानके मरु भूमिवाले प्रान्तोंमें इसका पौधा पानीमें उबालकर छाती के दर्द दूर करनेके लिए दिया जाता है।

—

नियाम नियम

नाम—

मलाया—नियाम नियम। सीलोन—नमनम। मलयालम—इरिया। लेटिन—Cynometra Couliflora (सिनोमेट्रा, कोलीफ्लोरा)।

वर्णन—

यह वनस्पति विशेषकर मलायामें पैदा होता है। हिन्दुस्तानके बगीचोंमें भी कहीं कहीं यह बोयी जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके बीजोंसे तैयार किया हुआ तेल गलित कुष्ठ और दूसरे चर्म रोगों पर लगानेके काममें लिया जाता है।

निर्विष

नाम :—

संस्कृत—निर्विषा, अपविषा, विषभवा, विषहन्त्री। हिन्दी—निर्विष, निर्विषी। बंगाल—निर्विषी। मराठी—मुस्त। लेटिन—Kyllingia Trileps (किलिञ्जया ट्राइलेप्स)।

वर्णन—

यह एक क्षुद्र जाति की वनस्पति होती है। इसकी दो जातियां होती हैं। एक जाति की जड़ जमीनमें सीधी जाती है और दूसरी जाति की जड़ जमीनमें फैली हुई रहती है और इसमें गठान रहती है। इसके पत्ते रोएंदार होते हैं। इसकी जड़में नागरमोथे की तरह सुगन्ध आती है। इसका स्वाद कड़वा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मतसे यह वनस्पति कड़वी, ठण्डी और कफवात तथा रक्त रोग को नष्ट करनेवाली होती है। इसके गुण साधारणतया नागरमोथे की तरह होते हैं। इसकी जड़की फांट बनाकर ज्वरमें और मधुमेह में प्यास को दूर करनेके लिए देते हैं। इसको अधिक मात्रामें देनेसे वमन हो जाती है। इसकी जड़को तेलमें उबालकर उस तेल को खुजली दूर करनेके लिए शरीर पर मला जाता है। इसका काढ़ा व्रण धोनेके काममें आता है।

यूनानी मत —

यूनानी मत से यह वनस्पति त्रिदोष नाशक और रक्तविकार को दूर करनेवाली होती है। यह हर प्रकारके जहरको दूर करने में सहायता पहुँचाती है। हर प्रकारके जखम पर लगानेसे यह जखमको जल्दी भर देती है। इससे सिद्ध किया हुआ तेल फोड़े फुन्सियों पर लगानेसे फोड़े फुन्सी मिट जाते हैं। जिस बच्चे को मृगी आती हो उसको थोड़ी सी निर्विषी उसकी मां के दूधमें घिसकर सुंघानेसे लाभ होता है। इसके सेवनसे गुर्दे का दर्द दूर होता है और गुर्दे को ताकत मिलती है। ज्वर और कफ के दस्तों को भी यह बन्द करती है, खांसी और वमनमें लाभ पहुँचाती है। हृदय, आमाशय, यकृत् और मस्तिष्कको ताकत देती है। इसकी साधारण मात्रा ३ मासे तक है, जो गाय के दूधके साथ दी जाती है।

इसकी जड़ोंसे एक प्रकार का तेल बनाते हैं, जो यकृत् की क्रिया को बढ़ाने और गुदाद्वार की खुजली को मिटाने के काममें लिया जाता है।

निसोथ

नाम :—

संस्कृत—त्रिवृत्. सुवहा, त्रिपुटा, त्रिभंडी, रेचनी, मालविका, श्यामा, इत्यादि। हिन्दी—निसोथ, पनीलर। बगाल—तेओरी, दूधकल्मी। पंजाव—चितबउस। गुजराती—नसोतर। मराठी—निशोतर। तामील—चिवदे, शिवदइ। तेलगू—तेल्लतेगड़। अंग्रेजी—Indian Jalup लेटिन—Ipomoea Turpethum (इपोमिया टरपेथम)।

वर्णन—

निसोथ की काली, सफेद और लाल ये तीन जातियां होती हैं। इस वनस्पति की बेल होती है। इसके पत्ते नोकदार होते हैं। इसके फूल का रंग नीला होता है। इसकी बेल की लकड़ीमें तीन धारें होती हैं। सफेद निसोथ के फूल सफेद, काली निसोथके फूल नीले और लाल निसोथ के फूल लाल होते हैं। औषधि प्रयोगमें सफेद निसोथ ही विशेष उपयोगी मानी जाती है। इसका फल गोल होता है और हर एक फल में चार चार बीज होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मतसे निसोथ मधुर, रूखी, तीक्ष्ण, वात जनक, कसेली,

तिक्त, कटुपाकी, रेचक तथा मलस्तम्भ, संग्रहणी, कफोदर, सूजन, पांडुरोग, कृमि, प्लीहा, ज्वर, पित्त, कफ, वातरक्त, उदावर्त और हृदयरोग को हरने वाली है।

काली निसोथ सफेद निसोथकी अपेक्षा हीन गुण वाली होती है। किन्तु विरेचन गुण इसमें तीव्र है तथा यह मूर्च्छा, दाह, मद और शान्ति पैदा करती है।

लाल निसोथ कड़वी, चरपरी, गरम, रेचक तथा संग्रहणी को नष्ट करनेवाली है।

निसोथ एक उत्तम रेचक वस्तु है। पेटके अन्दर इस की क्रियां जेलपके समान होती है। इससे पानीके समान पीले रंगके दस्त होते हैं। इसको अकेली देनेसे पेटमें मरोड़ पैदा होती है। इसलिये इसको सोंठके साथ देना चाहिये। इसको छोटी मात्रामें देनेसे आंतों की और आमाशय की पाचन शक्ति बढ़ती है। जेलप की अपेक्षा यह कुछ मृदुस्वभावी होती है।

विरेचनके लिये जिन रोगोंमें यूरोपके अन्दर जेलप देने का रिवाज है उन रोगोंमें भारतके अन्दर निसोथ दी जाती है। सुख विरेचन द्रव्योंमें यह श्रेष्ठ मानी जाती है। जलोदरमें इसको देनेका विशेष रिवाज है। आमवात और वातरक्तमें भी यह विशेप गुणकारी है। वातरोगोंमें और खिन्न वृत्तिवाले मनुष्यों को यह विशेप उपयोगी होती है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह तीसरे दर्जे में गरम और दूसरे दर्जे में खुश्क है। यह कफकी बीमारीको नष्ट करती है। मस्तिष्क, आमाशय, यकृत, और गर्भाशय में जमे हुए कफको पतला करके दस्त की राहसे निकाल देती है। फालिज, लकवा और संधिवातमें मुफीद है। आमाशयकी खराबीसे जो खांसी होती है वह इसके सेवनसे मिट जाती है। निसोथको काबुली हर्रके साथ देनेसे मिरगी और पागलपन में लाभ होता है।

शरह गाजरूनीने कहा है कि निसोथमें कफको पतला करके निकाल देनेकी खासियत है। सोंठ वगैरहके साथ देनेसे यह गाढ़े और जमे हुए कफको भी निकाल देती है। निसोथके चूर्ण को अधिक बारीक नहीं पीसना चाहिये और न कपड़ेमें छानना चाहिये। अधिक बारीक होनेसे यह मेदे और आंतों में चिपक जाता है। हां अगर यदि इसको माजूनमें मिलाना हो तो इसको खूब बारीक पीसना चाहिये।

हकीम अब्बू कासमका मत है कि निसोथको थोड़े थूहरके दूधमें तर करके सुखा कर जलोदर वालेको देनेसे बड़ा लाभ होता है। कई ताक़त वर आदमियों को यह प्रयोग दिया गया और उनका जलोदर जाता रहा। मगर यह प्रयोग कमजोर आदमियोंको नहीं देना चाहिये। क्योंकि इससे बहुत जोरके दस्त लगते हैं।

काली निसोथ एक जहरीली वस्तु है। इसको लेनेसे वहुत जोरसे दस्त आते हैं। सिरमें चक्कर और जलन पैदा होती है और आवाज खराव होजाती है।

भारतवर्ष में वहुत पुराने जमानेसे यह वनस्पति जुलावके उपयोगमें लीजारही है। गठिया और और अर्धाङ्गमें इसका जुलाव वहुत ख्याति प्राप्त है। अगर इसको कावुली हर्रके साथ मिलाकर लिया जाय तो माली खोलिया और अर्धाङ्गमें भी लाभदायक होता है।

मुजिर—इसके अधिक सेवनसे आंतों को नुकसान पहुँचाता है। गरम प्रकृति वालों को भी यह हानिकारक है।

दर्पनाशक—इसका दर्पनाशक कतीरा और ववूलकी छाल है।

प्रतिनिधि—काला दाना।

मात्रा—४ माशे।

नीम

नाम—

संस्कृत—निम्ब, नियमन, नेतर, पिचुमन्द, सतिक्तक, अरिष्ट, सर्वतोभद्र, सुभद्र, पारिभद्रक, हिंगु, पीतसार, रविप्रिय इत्यादि। हिन्दी—नीम। वंगाल—नीमगाछ। मराठी—कडु निम्ब। गुजराती—लीमड़ो। तेलगू—वेप। तामील—वेंवू। उर्दू—नीम। अंगरेजी—Indan Lilac (इंडियन लिलाक)। लेटिन—Azadirachta Indica (एमाडिरेक्टा इंडिका)।

वर्णन—

नीम-भारतवर्षकी एक अनोखी नियामत है। इसके वृक्ष हिन्दुस्तानमें सव दूर कसरतसे पैदा होते हैं और यह यहां के जन समाजमें रात दिन काममें आने वाली एक घरेलू दवा है। इसे सव कोई जानते हैं। इसलिये इसके विशेष वर्णनकी आवश्यकता नहीं है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे नीम हलका, शीतल, कड़वा, ग्राही, व्रणशोधक, वालकोंके लिये हितकारी तथा कृमि, वमन, व्रण, कफ, शोथ, पित्त, विष, वात, कुष्ठ, हृदयकी जलन, श्रम, खांसी, ज्वर, तृषा, अरुचि, रुधिर विकार और प्रमेहको नष्ट करता है।

नीमके पत्ते नेत्रोंके लिये हितकारी, पचनेमें कड़वे और कृमि, पित्त, अरुचि, विषविकार और कुष्टको नष्ट करते हैं।

नीमकी कोंपलें या कोमल पत्ते संकोचक, वातकारक तथा रक्त-पित्त, नेत्ररोग और कुष्टको नष्ट करनेवाले होते हैं।

नीमके फूल पित्तनाशक, कड़वे तथा कृमि और कफको नष्ट करने वाले हैं।

नीमके डंखल खांसी, श्वास, ववासीर, गुल्म, कृमि, और प्रमेहको दूर करने वाले हैं।

नीमके कच्चे फल अथवा कच्ची निंवोरी रसमें कड़वी, पचनेमें चरपरी, स्निग्ध, हलकी, गरम तथा कोढ़, गुल्म, ववासीर, कृमि और प्रमेहको दूर करने वाली हैं।

पक्की निंवोरी मीठी, कड़वी, स्निग्ध तथा रक्तपित्त, कफ, नेत्ररोग, उरक्षत और क्षय रोगको नष्ट करने वाली है।

निम्बोरी की मग़ज कुष्ट और कृमियों को नष्ट करने वाली है। नीमके बीजोंका तेल कड़वा और कुष्ट तथा कृमि रोगको नष्ट करने वाला होता है।

नीमका पंचांग, रुधिर विकार, पित्त, खुजली, व्रण, दाह और कुष्टको दूर करता है।

द्रव्य गुण विवेचन—

नीम तिक्त रस है, शीतवीर्य है और विपाकमें कड़वा है। तिक्त रस होने पर भी लागों को इसे खानेके वाद अरुचि नहीं होती। अधिकतर जितने तिक्त रस वाले पदार्थ होते हैं सभी अरुचिकर होते हैं। परन्तु नीममें यह खास विशेषता है कि वह स्वयं अरुचिकर होते हुए भी अरुचिका नाशक है। यह खानेमें बुरा मालूम होता है परन्तु अरुचि वालोंके लिये तुरन्त लाभ पहुँचाने वाला और अमृत तुल्य है। नीमकी कोमल पत्तियोंको घीमें भूनकर खानेसे भयंकरसे भयंकर अरुचि तुरन्त नष्ट हो जाती है।

नीम पचनेमें कड़वा है। जो चीज़ पचनेमें कड़वी होती है वह हलकी होती है। उसका वीर्य पर बुरा असर पड़ता है और वह वायुको वढ़ाने वाली तथा मलको वांधने वाली होती है। विपाकमें कटु होनेकी वजहसे नीमका वीर्य पर खराव असर पहुँचता है। यदि नीमका कुछ दिनों तक वरावर सेवन किया जावे तो मनुष्यकी काम शक्ति घटने लगती है और कुछ दिनोंके वाद वह नपुंसक होने लगता है। इसी वजहसे वहुतसे साधु सन्त अपनी प्रवल काम शक्तिको जीतनेके लिये वारहों मास नीमका सेवन किया करते हैं।

राजनिघंटुकारने नीमको शीतल और तिक्त लिखा है। उनके मतसे यह कफ, व्रण, कृमि, वमन और शोथको शान्त करता है, कफका भेदन करता है, नानाप्रकारके पित्तके दोषोंको जीतता है और हृदयकी जलनको शान्त करता है मगर सुश्रुतमें नीमको गरम, रुक्ष और

कटुविपाकी लिखा है। इससे मालूम होता है कि नीम तत्कालिक रूपसे चाहे शीतल हो मगर उसका अन्तिम परिणाम गरम ही है। क्योंकि नीमको मन्दाग्नि नाशक भी लिखा है और यदि वह शीतल होता तो मन्दाग्निकी चिकित्सामें उसका उल्लेख नहीं किया जाता। क्योंकि मन्दाग्निकी चिकित्सामें प्रायः उष्ण द्रव्योंका ही प्रयोग होता है। शीतल पदार्थोंसे वायुकी वृद्धि होती है और वायुकी वृद्धिसे मन्दाग्नि होती है। यदि मंद जठर वालेको शीतल पदार्थ दिये जायँ तो उसकी वायु और भी बढ़कर जठराग्निके बचेखुचे हिस्सेको नष्ट कर डालती है।

इसलिये यद्यपि कई निघंटुकारोंने इसको शीतवीर्य लिखा है। फिर भी सुश्रुत संहिता का यह मत कि नीम उष्ण वीर्य है, असंगत मालूम नहीं होता।

रासायनिक विश्लेषण—

रासायनिक विश्लेषण करने पर इसके बीजोंमें एक प्रकारका कड़वा और स्थायी तेल पाया जाता है। यह तेल रंगमें गहरे पीले रङ्गका होता है, स्वादमें खराब और कसेला रहता है। इसमें स्टिआरिक, ओलेक और लॉरिक एसिडस रहते हैं।

राय और चटर्जीने इसका रासायनिक विश्लेषण करके निम्नलिखित तत्व पाये हैं।

(१) सलफर .४२७ प्रतिशत।

(२) एक पीले रंगका कड़वा तत्व—सम्भवतः यह कोई उपक्षार है। (३) रेजिन्स—(४) ग्लुको साइडस और (५) अम्लद्रव्य।

सन् १९३१ में सेन और बनर्जीने स्पष्ट किया कि इसके तेलमें जो कड़वा तत्व रहता है वह सोडियम साल्टकी वजहसे रहता है।

महात्मा गान्धीको कुछ प्रश्नोंके उत्तरमें कुनूरके न्यूट्रीजन रिसर्च डायरेक्टर डाक्टर एक्राइडने नीमकी पत्तियोंके विषयमें निम्न मत जाहिर किया।

हमने अपनी प्रयोगशालामें नीमकी पत्तियोंका रासायनिक विश्लेषण किया। पहिले जिन अनेक हरी पत्तियोंका विश्लेषण किया गया है उनके मुकाबलेमें इन पत्तियोंमें पोषक तत्व अधिक मात्रामें पाये जाते हैं। पकी हुई पत्तियों और कोंपलों दोनोंमें ही प्रोटीन, केलशियम, लोहा और विटामिन A पर्याप्त मात्रामें पाये जाते हैं और इस दृष्टिसे नीमकी पत्तियां चौंलाई, धनियां, पालक, इत्यादि कई तरकारियोंसे अधिक श्रेष्ठ है।

डाक्टर आर० एन० खोरीके मतानुसार नीमके बीजमें एक तरहका तेल होता है जो मारगोसा या नीमके तेलके नामसे मशहूर है। इसकी छालमें एक तरहका स्वाभाविक कड़वा-

पन रहता है। इसके अतिरिक्त इसमें मार्गोनाइज्ड लोहसे मिला हुआ थोड़ा फास्फोरस, चीनी, कांसी तथा गन्धक काफी तादादमें पाये जाते हैं।

नीमके अन्दर विटामिन A का पाया जाना एक महत्वपूर्ण वस्तु है। यह विटामिन रतौंधी, अनेक प्रकारके दूसरे नेत्ररोग, गुर्दे और मूत्राशयकी बीमारियां, शरीरकी बढ़तीका रुक जाना, रक्तरोग, इत्यादिको दूर करता है। यह विटामिन नीमकी पत्तियोंमें बहुत काफी तादाद में पाया जाता है।

डाक्टर देसाइके मतसे नीम की छालमें एक उड़नशील तेल, एक प्रकार का कड़वा रालमय द्रव्य, गोंद, शक्करके समान एक पदार्थ, कत्थेके समान एक कषाय द्रव्य और एक कड़वा रवेदार द्रव्य पाया जाता है। कड़वा रवेदार द्रव्य इसकी अन्तर छालमें विशेष पाया जाता है। बाहरी छालमें कषाय द्रव्य विशेष पाया जाता है। सिर्फ अन्तरछालका काढ़ा बनानेसे उसमें राल-मय कटुपदार्थ और रवेदार कटुपदार्थ उतरता है। इसमें पाया जाने वाला कड़वा पदार्थ अलकोहलमें ६० प्रतिशत घुल जाता है। यह पानीमें अच्छी तरह नहीं घुलता। परन्तु क्षार स्वभावी द्रव्योंके साथ इसकी छाल को औटानेसे वह पानीके साथ मिल जाता है। छालके अन्दर जो कड़वा द्रव्य होता है वह अम्ल स्वभावी होता है। पत्तोंमें यह कड़वा द्रव्य कम होता है। मगर छालमें पाये जानेवाले कड़वे द्रव्य की अपेक्षा यह पानीमें जल्दी और अधिक तादादमें घुल जाता है। इसके बीजोंमें ४० प्रतिशत तेल रहता है। इस तेल में गन्धक की मात्रा भी पाई जाती है।

मलेरिया ज्वर और नीम:—

नीम की अन्तर छाल शीतल, पार्यायिक ज्वरों को रोकने वाली, ग्राही, कटुपौष्टिक, और रसायन होती है। मलेरिया ज्वर को रोकनेके लिये नीम की छाल का धर्म सिनकोना की छाल के समान है। इसमें पाया जाने वाला कड़वा, रवेदार, अम्ल स्वभावी द्रव्य त्वचाके रास्तेसे बाहर निकलता है। जिससे त्वचामें उत्तेजना पैदा होती है और त्वचा की जलन शान्त होती है। इसकी ऊपर की छालमें ज्वर नाशक धर्म कम होता है। इसका संकोचक धर्म विशेष प्रधान है।

नीमकी छाल का उपयोग सिनकोना और संखिया की तरह होता है। इसका अर्क या काढ़ा बनाकर देने की अपेक्षा चूर्ण बनाकर देना विशेष लाभ दायक होता है। इसका संकोचक धर्म दूर करनेके लिये इसके साथ कुटकी, सोंठ, मिर्च, वगैरह औषधियाँ मिलाकर दी जाती हैं। जीर्ण विषम ज्वरमें इसका तेल बहुत गुणकारी सिद्ध हुआ है। छाल की अपेक्षा तेलका असर अधिक जल्दी और अधिक अच्छा होता है। सूजन युक्तज्वर और उष्णज्वरमें नीम की छाल

अधिक उपयोगी होती है। इसके पत्तों का रस भी ज्वर को दूर करने के लिये दिया जाता है। ये सब चीजें भोजनके पहिले दी जाती हैं।

मेजर डी. वी. स्पेंसर अपने रिकार्ड आफ इंडियन फीवार्स १८९९ (Record of Indian Fevers 1899) में नीम की औषधोपचार सम्बन्धी उपयोगिताके सम्बन्धमें लिखते हैं कि :—

"मैंने नीमके पत्ते, छाल, तेल, और सभी हिस्सों को औषधि प्रयोग में लेकर के देखा है।"

(१) पत्ते:—इसके मुट्ठी भर पत्तों को लेकर पीसकर उनकी टिकड़ी वनाकर पुल्टिस की तरह विस्फोटक, वाल–तोड़ और फोड़े फुन्सियों पर लगानेसे उत्तेजक और कृमिनाशक असर होकर जल्दी लाभ होता है।

इसके २ औंस ताजा पत्तों को १ पिंट खौलते हुए पानीमें डालकर उसको २ औंस की मात्रामें पिलानेसे यह एक उपयोगी कटुपौष्टिक वस्तु का काम करता है। इसका प्रधान असर यकृत पर होता है जिसके परिणाम स्वरूप दस्त का रंग गहरा पीला हो जाता है।

इसका यह निर्यास प्राचीन मलेरिया ज्वरमें भी वहुत उपयोगी सिद्ध होता है। हालां कि इस कार्यमें यह नीमके तेलके समान प्रभावशाली नहीं है। उपदंशके प्राचीन रोगियोंके लिये भी यह एक शक्ति शाली धातु परिवर्तक वस्तु है। मैंने इसको गलित कुष्टके रोगियों पर भी उपयोग में लिया मगर एकाध केसको छोड़कर अधिकांश केसोंमें इसका उपयोग विशेष फलप्रद नहीं रहा।

(२) नीम की छाल :—

इसकी छालमें संकोचक पार्यायिक ज्वरों को दूर करनेवाले और धातु परिवर्तक तत्व रहते हैं। इसकी छाल का उपयोग भी इसके पत्तों की तरह निर्यास वना कर ही किया जाता है।

(३) नीम का तेल :—

मेरे खयालसे नीममें पाया जाने वाला तेल ही औषधि प्रयोग के सम्वन्ध में सबसे अधिक महत्व पूर्ण तत्व है। शरीरके ऊपर इसको लगानेसे यह उत्तेजक, कृमिनाशक और धातु परिवर्तक असर वतलाता है। प्राचीन उपदंश की वजहसे होने वाले फोड़े, फुन्सी, वदगांठ और दुष्ट व्रणोंके ऊपर यह एक वहुत उपयोगी वस्तु है। इसके प्रयोग से दुष्ट और न भरने वाले घाव भी भर जाते हैं। अगर इसके शुद्ध तेलका असर अधिक उत्तेजक हो तो इसके

साथ समान भाग ब्लेण्ड आइल (Bland oil) मिलानेसे इसका उत्तेजक धर्म कम हो जाता है। नीमका तेल परोपजीवी कीटाणुओंसे होनेवाले चर्म रोगोंपर जैसे दाद, खुजली, इत्यादि पर बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। जहां पर कि किसी भी प्रकार के परोपजीवी कीटाणुओंके होने का सन्देह हो वहां इसका उपयोग करने से वे सब कीटाणु नष्ट होकर, त्वचा स्वस्थ हो जाती है। अगर परोपजीवी कीटाणु चर्मके अन्दर अधिक गहरे घुस गये हों तो ऐसे स्थानों पर इस तेलको कम से कम १० मिनिट या इससे अधिक समय तक मालिश करना चाहिये।

मलेरिया ज्वर के प्राचीन केसोंमें इसके तेलको ५ से १० बूंद की मात्रामें दिनमें २ बार देनेसे अच्छा लाभ होता है। मैं इसको गत १२ वर्षोंसे प्राचीन मलेरिया ज्वरके केसोंमें काममें ले रहा हूँ और यह निस्सन्देह भावसे कह सकता हूँ कि ऐसे ज्वरोंमें यह एक उत्तम औषधि है। उपदंश, कुष्ट और दूसरे चर्म रोगोंमें भी इसका असर अच्छा होता है।

कोमानके मतानुसार इसकी छालका टिंचर मलेरिया ज्वरके केसोंमें पार्यायिक ज्वर निवारक वस्तु की तरह काममें लिया गया और बहुत उपयोगी पाया गया। इसको ऊपरी छाल का काढ़ा भी मलेरिया ज्वर के अन्दर दिया गया और उसका भी परिणाम संतोषजनक रहा। प्राचीन चर्म रोगोंमें इसके इसेंसकी १ से १० बूंद पानीके साथ दी गई जिससे रोगी की जनरल स्थितिमें भी सुधार हुआ और उन रोगियों को जो दूसरी औषधियां दी गईं थीं उनको भी इससे मदद पहुँची।

डॉक्टर कारनिस लिखते हैं कि मैंने सिनकोना की छाल और संखिया के साथ मलेरिया ज्वरमें नीम की छाल का तुलनात्मक अध्ययन करके देखा है। ६ दिनोंके अन्दर मैंने ६० बुखार के रोगियों पर सिनकोना का प्रयोग करके देखा उनमें से ४६ अच्छे हुए। ३८ रोगियों पर संखिया का प्रयोग किया, जिनमें २६ को लाभ हुआ। परन्तु १३४ रोगियों पर जब नीम की छालका प्रयोग किया तब उनमें ६ दिनोंके अन्दर ही १०९ रोगी आराम हुए। ज्वरके अतिरिक्त ज्वरसे होनेवाली कमजोरी को भी दूर करके यह शरीरमें शक्ति का संचार करती है।

डाक्टर वेरिंग का कथन है कि तरह २ के मलेरिया ज्वरमें नीम का बहुत उपयोग होता है। यह शीत को रोकता है और ज्वर तथा अन्यान्य कारणोंसे उत्पन्न हुई कमजोरी को भी दूर करता है।

चर्मरोग, कुष्ठ और नीमः—

वैसे तो नीम मनुष्य शरीरमें होनेवाले अनेक रोगोंमें काम आता है। मगर इसका प्रधान क्षेत्र कुष्ट, चर्म रोग और रक्त रोग है। यह विश्वास किया जा सकता है कि चर्म रोगों को दूर करनेके लिये संसारमें इसके बराबर दूसरी औषधियां नहीं हैं।

कुष्ठ रोगियोंके लिये प्रकृतिने विशेष रूपसे नीमको उत्पन्न किया है। प्राचीन आर्य ग्रन्थोंमें लिखा है कि कुष्ठके रोगी को बारहों मास नीमके पेड़के नीचे रहना चाहिये। नीम की लकड़ीमें दतून करना, प्रातःकाल १ छटांक नीम की पत्तियों का स्वरस पीना, समूचे शरीरमें नीम की पत्तियोंके स्वरस की और नीमके तेल की मालिश करना तथा भोजनके बाद दोनों दफे पांच २ तोले नीम का मद पीनेसे बहुत लाभ होता है। कुष्ठसे पीड़ित रोगियों की शय्या पर नित्य नीम की ताजी पत्तियां बिछाना चाहिये। नीम की पत्तियों का रस निकालकर उस रसको जलमें मिलाकर उस जलसे कुष्ठके रोगी को नित्यप्रति नहाना चाहिये। नीमके तेलमें नीम की पत्तियों की राख मिलाकर कुष्ठके व्रणों पर रोज लगाना चाहिये।

नीमके फूल, फल और पत्तियां बराबर २ लेकर सिलपर खूब महीन पीसलें और शरबत की तरह पानीमें घोलकर पीना आरम्भ करें। पहिले २ माशेसे लेना शुरू करें। बढ़ाते बढ़ाते ६ माशे तक बढ़ायँ। इस प्रकार ४० दिन तक सेवन करनेसे श्वेत कुष्टमें बहुत लाभ होता है।

अन्यान्य चर्म रोगोंमें इसके पत्तों का रस पिलानेसे और उसका लेप करनेसे अच्छा लाभ होता है। दाद, सड़नेवाले व्रण, माताके व्रण, इत्यादि रोगोंमें यह औषधि बहुत लाभदायक है। नवीन रोगोंकी अपेक्षा प्राचीन रोगोंमें इसका विशेष उपयोग होता है। फिरंगोपदंश और रक्तपित्तमें इसके पत्तों का रस अथवा बीजों का तेल पिलानेसे और शरीर पर उसका मालिश करनेसे आश्चर्यजनक लाभ होता है। बदगांठ और दूसरे व्रणों की सूजन को दूर करनेके लिए इसके पत्तों को कुचलकर गर्म करके बांधना चाहिये। नीम का तेल एक उत्तम कृमिनाशक और पीब नाशक पदार्थ है। इसको पेटमें देनेसे अथवा बाहर लगानेसे कृमि नष्ट हो जाते हैं। कंठमाला पककर अगर उसमें घाव पड़ गया हो अथवा उसमें नासूर पड़ गया हो तो उसमें नीमके तेल की बत्ती बनाकर रखनेसे वह भर जाता है। जीर्ण ज्वर, जीर्ण-विषम ज्वर, भिन्न २ प्रकार के चर्मरोग, कुष्ट, फिरंगोपदंश इत्यादि रोगोंमें इसके तेलकी ५ से लेकर १० बूंदे दिनमें दो बार देना चाहिये।

संधिवात, आमवात, जोड़ोंके दर्द, इत्यादिमें नीमके तेल का मालिश करनेसे लाभ होता है। नीमके तेलमें यह धर्म इसके अन्दर पाये जानेवाले गंधक की वजहसे रहता है। आमवात में इसका तेल खिलानेसे भी बड़ा लाभ होता है।

एक्झिमा और नीम—

एक्झिमा आजकल के नवीन प्रचलित चर्म रोगोंमें एक प्रधान रोग हो गया है। इसका प्रचार भी दिन ब दिन भारतवर्षमें बहुत हो रहा है। इसके लिये कोई माकूल इलाज अभी तक नहीं निकला है। ऐसा कहा जाता है कि शरीरमें उपयुक्त विटामिन की कमी होनेसे यह रोग

पैदा हो जाता है। ऐलोपेथी में इस रोग को दूर करनेके लिये कई प्रकार की औषधियां और इंजेक्शन निकले हैं। मगर अभी तक यह विश्वास नहीं हो सका है कि इन उपचारोंसे यह रोग जड़ से चला जाता है।

इस ग्रन्थके लेखक की निगाहमें इसी प्रकारके दो केस एक्जिमाके आये। एक रोगीके घुटनेसे लेकर सारी पिंडली बुरी तरहसे सड़ गई थी। जगह २ से उसमें पीव बहता था। डाक्टरों ने उसको पैर कटानेकी सलाह दी थी जिससे वह गरीब बहुत घबरा गया था दैवयोगसे वह हमारे सम्पर्क में आया और हमने उसको १ तोला मंजिष्टादि क्वाथ, १ तोला नीमकी छाल, १ तोला पीपलकी छाल और १ तोला नीम गिलोयका क्वाथ, प्रति दिन देना प्रारम्भ किया। एक महिने तक नियमानुसार इस क्वाथका सेवन करनेके बाद आश्चर्यके साथ देखा गया कि उसका वह पैर जो अच्छे २ डाक्टरों के द्वारा असाध्य घोषित कर दिया गया था, बिलकुल दुरुस्त होगया और आज ५ वर्ष होगये उस स्थान पर फिर एक फुन्सी भी नहीं हुई। इसी प्रकार और भी १।२ एक्जिमाके केसों में इस ग्रंथके लेखकने उपरोक्त प्रयोगसे बहुत सफलता प्राप्तकी है और यह शिफारिसकी जाती है कि जिन वैद्योंके हाथ में इस प्रकारके एक्जिमाके दुःसाध्य केस होवे भी इस प्रयोगको अवश्य अजमाकर देखें।

नीम और चेचक—

यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि चेचक एक बहुत ही भयंकर रोग है और जब यह उग्ररूप धारण करलेता है तब तो फिर चिकित्सा विज्ञानके सारे प्रयोग बिलकुल बेकार होजाते हैं और इसीलिये हिन्दुस्तानमें इस व्याधिको दैवी प्रकोप समझकर इसकी चिकित्सा देवी पूजन, पाठ, धूप, इत्यादि धार्मिक कृत्योंके द्वाराकी जाती है।

आयुर्वेद शास्त्रमें जो चेचक की चिकित्सा लिखी गई है उसमें सबसे अधिक नीम ही का प्रयोग देखने को मिलता है। वस्तुतः नीम इस रोग की एक खास और सर्व सुलभ औषधि है। जो लोग चेचक के दिनों में नीमका सेवन करते हैं। उन्हें या तो चेचक निकलती ही नहीं और यदि कभी निकली भी तो अधिक उग्र नहीं होती।

यदि किसी मुहल्लेमें चेचक फैली हुई हो तो उससे बचनेके लिये निम्न लिखित प्रयोग करना चाहिये।

नीमकी लाल रंगकी कोमल पत्तियां ७, और काली मिरच ७ इनको नियमपूर्वक १ महीने तक खानेसे १ साल तक चेचक निकलनेका डर नहीं रहता।

नीमके बीज, बहेड़ेके बीज और हल्दी। इन तीनोंको बराबर लेकर शीतल जलमें पीस छानकर कुछ दिनों तक पीनेसे शीतला निकलनेका डर नहीं रहता।

३ माशे नीमकी कोपलोंको १५ दिन तक लगातार खानेसे ६ महीने तक चेचक नहीं निकलती; अगर निकलती भी है तो आंखें खराब नहीं होती।

यदि चेचकके दाने शरीरसें निकल आवे तो उस अवस्थामें बड़ी सावधानी. पवित्रता, और धैर्यके साथ रोगीकी सेवा करना चाहिए। यदि चेचक निकलनेपर किसी प्रकारका उपद्रव नहीं हो तो भूलकर भी औषधि प्रयोग नहीं करना चाहिए। क्योंकि बिना उपद्रवकी चेचक स्वयं समय आने पर अच्छी हो जाती है। यदि चेचकमें उपद्रव हो तो उस मौके पर भी सिर्फ नीम ही के द्वारा रोगीका उपचार किया जाय तो बहुत उत्तम लाभ होता है।

रोगीके कमरेमें नित्यप्रति ताजे नीमकी पत्तियां टांगना चाहिये। कमरेके दरवाजें तथा खिड़कियोंमें नीमकी पत्तियोंकी वन्दनवार बांधना चाहिये।

यदि रोगीको अधिक दाह हो तो उसके बिस्तर पर कोमल पत्तियां बिछाना चाहिए। जब बिस्तरे पर की पत्तियां मुरझाजायँ तब उनको बदल देना चाहिये।

चेचकके व्रण पर कभी भी मक्खियां नहीं बटने पावें इस बातका खूब ध्यान रखना आवश्यक है। परिचारिकाको उचित है कि वह नीमकी पत्तियोंका चँवर बनाकर उसीसे चेचकके रोगीके शरीर पर हवा करती रहे और मक्खियोंको उड़ाती रहे।

यदि रोगीको अधिक जलन मालूम हो तो नीमकी पत्तियोंको पीसकर पानीमें घोलकर कपड़ेसे छान लेना चाहिए और मथानीसे उस पानीको मथकर उसका फेन रोगीके शरीर पर लगाना चहिए। इससे जलन शीघ्र शांत हो जाती है।

चेचकके दानोंमें इतनी गर्मी होती है कि रोगी उसे बरदाश्त नहीं कर सकता। उसकी गरमीसे रोगीको अगर चैन नहीं पड़े तो ऐसी दशामें नीमकी कोमल पत्तियोंको पीसकर चेचकके दानों पर लेप करना चाहिए। नीमके बीजोंकी गिरीको पानीमें पीसकर लेप करनेसे भी जलन शान्त होती है। बीजों अथवा पत्तियोंको पानीके साथ पीसकर खूब पतला लेप करना चाहिए। चेचकके दानों पर भूलकर भी कभी मोटा लेप नहीं करना चाहिए।

रोगीको यदि अधिक प्यास लगती हो तो नीमकी छालको जलाकर, उसके अङ्गारेको पानीमें डालकर बुझावें और उसी पानीको छानकर रोगी पिलावें। इससे प्यास शांत हो जायगी। यदि इस प्रयोगसे भी प्यास नहीं रुके तो १ सेर पानीमें १ तोला कोमल पत्तियोंको औटाकर जब आधा पानी शेष रह जाय तब उतारकर छानकर रोगीको पिलावें। इससे प्यास जरूर शान्त हो जायगी। प्यासके अतिरिक्त यह प्रयोग चेचकके विष और ज्वरके वेगको भी हलका करनेवाला है। इसके प्रयोगसे चेचकके दाने शीघ्र सूख जाते हैं।

कभी कभी चेचकके दाने ठीकसे न निकल कर बहुत कम निकलते हैं जिससे चेचककी गर्मी और विष शरीरके अन्दर ही रह जाता है। परिणाम यह होता है कि रोगी शरीरके भीतरी गर्मीको सहनेमें असमर्थ होकर छटपटाने लगता है और प्रलाप करने लगता है। यदि ऐसी अवस्था उत्पन्न हो जाय तो नीमकी हरी पत्तियोंका रस सवेरे, दुपहर और शामको एक एक तोलेकी मात्रामें पिलाना चाहिये इससे दाने खूब खुलकर निकल आते हैं।

जब चेचकके रोगीके व्रण सूख जायँ तब उसे नीम की पत्तियों को पानीमें उबालकर उसे ठंडा करके उसीसे स्नान करवाना चाहिये। स्नानके बाद निबोंलियोंके तेलकी सारे शरीरमें मालिश करना चाहिये।

जब चेचक के दाने अच्छे हो जाते हैं। तब उनकी जगह पर छोटे २ गड्ढे दिखाई देते हैं और आकृति बिगड़ जाती है। उन स्थानों पर यदि कुछ दिनों तक नीमका तेल अथवा नीम के बीजों की मगज को पानीमें पीसकर लगाया जाय तो वे दाग मिट जाते हैं।

चेचक होनेके बाद बहुतसे रोगियोंके सिरके बाल झड़ जाते हैं। ऐसी दशामें सिरमें कुछ दिनों तक लगातार नमीके तेल की मालिश करनेसे फिरसे बाल जल्दी जम जाते हैं।

नीम और बवासीर—

बवासीर के ऊपर भी यह औषधि उपयोगी साबित हुई इसके दो प्रयोग नीचे दिये जाते हैं।

(१) प्रतिदिन नीमके २१ पत्तोंको लेकर मूंगकी भिगोई और धोई हुई दालके साथ पीसकर बिना किसी प्रकार का मसाला डाले हुए उसकी पकौड़ी बनाकर, घी में तलकर खाना चाहिये। इस प्रकार २१ दिन तक इन पकोड़ियों को खानेसे हर तरहके बवासीर निर्बल होकर खिर जाते हैं। इस औषधि का सेवन करनेवाले को पथ्यमें सिर्फ ताजा मट्ठा ही पीकर रहना चाहिये। दूसरी कोई चीज नहीं खाना चाहिये। अगर इस प्रकार न रहा जाय तो भात और मट्ठा इन दो चीजों पर रहना चाहिये। अगर नमकके बिना न रहा जाय तो थोड़ा बहुत सेंधा नमक लेना चाहिये।

(२) निम्बोली की मगज १ तोला, रसोत आधा तोला, हीरा दखन आधा तोला, गेलिक एसिड आधा तोला, अफीम आधा तोला बोदरसंग पाव तोला (३ माशा) शंख जरात पाव तोला और कपूर पाव तोला। इन सब चीजों को बारीक पीसकर गायके मक्खनमें मिलाकर मलहम बना लेना चाहिये। इस मलहमको शौच जानेके बाद सबेरे शाम बवासीर पर लगानेसे बवासीर की पीड़ा दूर हो जाती है।

उपरोक्त खाने और लगानेके दोनों प्रयोगों को कुछ दिन करनेसे ववासीर की भयंकर व्याधिसे मनुष्य का छुटकारा हो जाता है। (जंगलनी जड़ी बूटी)

नीम और सूतिका रोग—

नीम को मराठीमें बालन्तनिम्ब कहते हैं। इसका यह नाम प्रसूति समयमें इसकी उपयोगिता को जाहिर कर देता है। प्रसूतिके पहिले ही दिन प्रसूता को इसके पत्तों का स्वरस देनेसे गर्भाशय का संकोचन होता है, रजःश्राव साफ होता है, गर्भाशय और उसके आसपास के भागों की सूजन मिट जाती है, भूख लगती है। दस्त साफ होता है। ज्वर नहीं होता और अगर कुछ आया तो उसका वेग अधिक नहीं रहता।

प्रसव होनेके बाद ६ दिनों तक प्रसूता को प्यास लगने पर नीम की छालका औटाया हुआ पानी देनेसे उसकी प्रकृति अच्छी रहती है।

नीमके कुछ गरम जलसे प्रसूता स्त्री की योनिको धोनेसे प्रसवके कारण होनेवाला योनि शूल और शोथ नष्ट हो जाता है। व्रण जल्दी सूख जाता है और योनिशुद्ध तथा संकुचित हो जाती है।

सुआ रोग नाशक वफारा—

नीमके पुराने झाड़ की अन्तर छाल ३ सेर लेकर उसके छोटे २ टुकड़े करके कूटकर ३ भाग कर लेना चाहिये। फिर मिट्टी के ३ बड़े २ हण्डे लेकर उनमें बीस बीस सेर पानी और एक २ सेर कूटी हुई छाल डालकर उनपर ढक्कन लगाकर, ढक्कन की संधियों को घुंदे हुए गेहूँ के आटेसे बन्द कर देना चाहिये, जिससे उसकी भाफ बाहर न निकल सके। उसके बाद उन बरतनों को चूल्हे पर चढ़ाकर नीचे आग जला देना चाहिये। जब उनका पानी खूब खौलने लगे तब सूतिका रोग ग्रस्त स्त्री को बिना बिस्तर की खटिया पर सुलाकर ऊपर से एक कम्बल ऐसा ओढ़ा देना चाहिये जिससे स्त्री का बदन भी ढंक जाय और जो खटिया से लेकर जमीन तक झूलता रहे। उसके बाद खौलते हुए पानी का एक हण्डा लेकर उस खटिया के नीचे जिस जगह स्त्री का सिर हो वहाँ रखकर उसका मुंह खोल देना चाहिये। जब उस बरतन की भाफ का वेग कुछ कम हो जाय तब उस हण्डे को बीमार स्त्री की कमरके नीचे सरकाकर उसके सिरके नीचे दूसरा ताजा खौलता हुआ हण्डा लाकर खोल देना चाहिये। जब दूसरे हण्डे का वेग भी कुछ कम पड़ने लगे तब कमरके नीचे वाला हण्डा पैरोंके नीचे करके सिरके नीचे वाला हण्डा कमरके नीचे करके तीसरा ताजा हण्डा लाकर सिरके नीचे खोल देना चाहिये। इस प्रकार तीनसे लेकर सात दिन तक करना चाहिये और पथ्यमें दूध, भात और घी खाने को और गरम

करके ठण्डा किया हुआ जल पीने को देना चाहिये। इस प्रयोगसे सूतिका रोगका विष पसीनेके रास्ते निकलकर रोगी को लाभ होता है।

नीम और सूजाक—

सुजाक के अन्दर जब लिंगेन्द्रिय सूजकर रोगी का पेशाब बन्द हो जाता है तब नीमके पत्तोंके काढ़ेमें रोगी को बिठानेसे पेशाब बहुत जल्दी होने लगता है।

नीम और प्लेग

नीमकी अन्तर छाल २ तोलाके लगभग जलके साथ पीसकर उसको ५ तोला पानीमें छानकर सवेरे शाम पीनेसे और पथ्यमें सिर्फ दूध पिलानेसे तथा जवाके जोड़में होने वाली गठान पर नीमके पत्तों को बारीक पीसकर पुल्टिस चढ़ानेसे बड़ा लाभ होता है। इससे गठान बिखर जाती है और ज्वरमें शांति मिलती है।

प्लेगके टाइममें जिस कुटुम्बमें नीमके पत्तोंका पीना शुरु रहता है उस कुटुम्बमें प्लेगका प्रवेश नहीं हो सकता। नीमका उपयोग प्लेगके लिये बहुत उपयोगी होता है। यह एक योग वाही वस्तु है जो शरीरके छोटे २ छिद्रों में पहुँचकर वहांके जन्तुओंको नष्ट करती है।

नीमके पंचांगको लेकर, कूटकर, पानीमें छानकर इस पानीको दस २ तोलेकी मात्रामें पन्द्रह २ मिनिटके अन्तरसे पिलानेसे और गठान पर इसके पत्तोंका पुल्टिस बांधनेसे और रोगीके आसपास इसकी धूनी करते रहनेसे प्लेगके रोगमें बड़ा लाभ होता है।

नीमके अन्दर वनस्पतिज गन्धक (Organic Sulfer) काफी मात्रामें रहता है, इसी लिये प्लेगकी गठान और दूसरे चर्म रोगों पर इसका उपयोग बड़ा लाभदायक होता है।

नीम का मद

नीमके कुछ पुराने वृक्षोंमें से—जब वे झाड़ जोशपर आते हैं तब उनमेंसे एक प्रकारका मद या ताड़ी झरने लगती है। कई वृक्षों से यह मद साल २ भर तक झरता रहता है। यह रस स्वादमें मीठा, गन्धमें कड़वा अप्रिय और बहुत गाढ़ा होता है। जिस समय यह मद झरता है उस समय झाड़में से एक प्रकारकी मधुर आवाज निकलती रहती है। इस मदको अंग्रेजीमें नीम ताड़ी (Nim toddy) या (Toddy of Margosa Tree) कहते हैं।

यह रस एक बहुत कीमती औषधि है। चर्मरोगोंके अन्दर (यानें खुजली, फोड़े-फुन्सी, दाद, विस्फोटक, इत्यादि) यह बहुत उपयोगी है। यह खूनको साफ करता है। रक्त विकारमें इस रसको पीनेसे बड़ा लाभ होता है।

वातरक्त और दूसरे कुष्ट रोगोंमें इसको लगातार ६-७ महिने या १ साल तक पीनेसे बहुत

लाभ होता है। क्षयके बुखार, बुखारकी जलन और अजीर्ण रोगमें भी यह उपयोगी है। इसकी मात्राका अभी तक कोई निश्चय नहीं हुआ है। मगर बड़े आदमियोंके लिये साधारण तया १ से ४ तोले तककी मानी जाती है।

डॉक्टर मुडीन शरीफ अपनी मटेरिया मेडिका आफ मद्रास नामक पुस्तकमें इस रसका वर्णन करते हुए लिखते हैं कि—

" the Toddy of the margosa Tree appears to be of great seruice to some Chronic aud long standing cases of Leprosy and other skin diseases, Consumption, atonic dyspepsia and general debility and although, Ihave not prescri bed it myself, i am acquainted with several persons who praise the drug very highly from personal use and observation. It is however extremely searce and This is a great drawback to its use and adoption into general practice. "

अर्थात् नीमकी यह ताड़ी पुराने और अधिक काल तक टिकने वाले गलित कुष्ट और दूसरे चर्मरोग, क्षय, बद हजमी और साधारण कमजोरीके बीमारों पर अच्छा काम करती है। यद्यपि मैंने इसका उपयोग नहीं किया है। मगर ऐसे कई लोगोंसे जिन्होंने व्यक्तिगत रूपसे इसे उपयोगमें लिया है उनके द्वारा मैंने इसकी बहुत प्रशंसा सुनी है।

देहरादूनके फारेस्ट कालेजके रसायन शास्त्रियोंने इस रसकी रासायनिक परीक्षा करके इसमें निम्न लिखित पदार्थ पाये हैं।

(१) माइश्चर (Moisture) ८६.५६ प्रतिशत

(२) प्रोटेइडज (Proteids) .३६ प्रतिशत

(३) गोंद और रंगीन पदार्थ ६.१७ प्रतिशत

(४) द्राक्षशर्करा (जी० ग्लूकोस) २.९९ प्रतिशत।

(५) इक्षुशर्करा (सक्रोस) ३.५१ प्रतिशत।

(६) राख .४१ प्रतिशत।

इसकी राखकी जांच करनेसे उसमें पोटेशियम, लोह, एल्यूमिनियम, केलशियम और कार्बन डायोकसाइड नामक पदार्थ पाये गये हैं।

यूनानी मत—

यूनानी हकीमोंमें किसीके मतसे नीम पहिले दर्जेमें गरम और खुश्क और किसीके मतसे पहले दर्जेमें सर्द और खुश्क है।

खूनको साफ करनेवाली जितनी औषधियां हैं उनमें इसकी जड़की छाल सबसे श्रेष्ठ है। कुष्ट, खुजली और फोड़े फुन्सीमें यह बहुत लाभ पहुँचाती है। यह त्रिदोषनाशक, पाचक, पित्तज्वरको दूर करनेवाला और प्यासको मिटानेवाला है। इसके फूल, फल, और पत्ते समान भाग लेकर २ माशेकी मात्रामें खाना शुरू करें। धीरे २ यह मात्रा बढ़ाकर ६ माशे तक कर देना चाहिये। इसप्रकार ४० दिन तक सेवन करनेसे श्वेत कुष्ठ मिट जाता है।

इसके पत्तोंको पीसकर उनपर गीला कपड़ा लपेट कर, उनका भुरता करके फोड़ों पर बांधनेसे कभी न भरनेवाले फोड़े भी भर जाते हैं। आगसे जले हुए स्थान पर इसका तेल या इसका मरहम बनाकर लगानेसे बड़ी शान्ति मिलती है। इसके पत्तोंको गरम करके स्त्रीकी नाभिके नीचे बांधनेसे मासिक धर्मके समय होनेवाला कष्ट या पुरुषप्रसङ्गके समयमें होनेवाला दर्द मिट जाता है। वसन्तऋतु के टाइममें इसकी कच्ची कोंपलोंको ७ माशेकी मात्रामें ७।८ काली मिरचोंके साथ पीसकर ७ दिन तक पीनेसे और पथ्यमें सिर्फ बेसनकी रोटी और घी मिलाकर खानेसे सालभर तक किसीप्रकारका चर्मरोग और किसीप्रकारका रक्तरोग नहीं होता है। इसके सूखे पत्ते और बुझे हुए चूनेको इसके हरे पत्तोंके रसमें घोटकर नासूरमें भर देने से नासूर भर जाता है।

इसके ताजे पत्तोंका रस नाकमें टपकानेसे सिरका दर्द और कानमें टपकानेसे कानका दर्द मिटता है। इसकी लकड़ीसे दतून करनेसे और इसके काढ़ेसे कुल्ले करनेसे दांत और मसूड़े मजबूत होते हैं। इसके पत्तोंको पीसकर उनकी टिकिया बनाकर तवे पर सेक कर पानी के साथ पीनेसे लिंगेंद्रियके अन्दरका जख्म भर जाता है।

हैजेके अन्दर यदि दस्त और वमन जारी हों और बहुत प्यास लगती हो तो नीमके पत्तोंको पीसकर उनका गोला बनाकर, उस पर कपड़मिट्टी करके भूभलमें दबाकर जब लाल हो जाय तब निकालकर उसकी मिट्टीको हटाकर उसका रस निकालकर थोड़ी २ देरसे एक २ तोलेकी मात्रामें अर्कगुलाबके साथ देनेमें अच्छा लाभ होता है।

नीमके फूल (यूनानीमत)—नीमके फूलका काढ़ा बनाकर उससे कुल्ले करनेसे दांत और मसूड़े मजबूत होते हैं। इसका अर्क खूनके विकार और कुष्ठको दूर करता है। इमली और शक्करके साथ इसके फूल को देनेसे कफ और पित्तके विकार दूर होते हैं। नीमके फूलोंका काजल बनाकर आंखमें आंजनेसे आंखकी धुन्द और फूली कट जाती है तथा ज्योति बढ़ती है।

नीमकी छाल—नीमकी छालका अर्क २ से ४ तोले तककी मात्रामें पीनेसे और २ घण्टेके बाद ताजा रोटी घीके साथ खानेसे लकवा, अर्धाङ्ग, गठिया, जलोदर, कोढ़ दूषितव्रण, तर खुजली और दाद इत्यादि रोगोंमें बहुत लाभ होता है।

नीमकी छाल २ तोला, सोंठ ४ माशे, गुड़ २ तोला। इनका काढ़ा बनाकर पीनेसे रुका हुआ मासिकधर्म चालू हो जाता है।

नीमकी छालका काढ़ा या शीतनिर्यास बनाकर पिलानेसे खून साफ होकर खूनके सब रोग दूर हो जाते हैं।

नीमकी अन्तर छालको सुखाकर उसका चूर्ण लेनेसे बारीसे आनेवाला बुखार घट जाता है। भारतवर्षमें कुनेनके पहिले बुखारको दूर करनेके लिये यही औषधि कममें ली जाती थी।

नीमकामद—यूनानीमतसे नीमका मद खूनको साफ करनेवाला और उपदंश तथा कुष्ठको नष्ट करनेवाला होता है। इसको जखम पर डालनेसे जखमके कीड़े मर जाते हैं। ऐसी उपदंश जो किसी दवासे आराम न होती हो नीमके मदसे आराम हो जाती है।

नीमका गोंद—यूनानी मतसे नीमका गोंद खूनकी चालको तेज करनेवाला और शक्तिदायक होता है।

नीमके बीज—नीमके बीज दस्तावर और कृमिनाशक होते हैं। इन बीजोंमें तेल और गन्धक का कुछ अंश पाया जाता है। पुरानी गठिया, पुराने जहरवाज और तर खुजली पर इनका लेप करनेसे लाभ होता है।

नीमकी सींक—नीमकी सींक जिस पर पत्ते लगे हुए होते हैं दमा, खांसी, पेटके कृमि, पित्त ज्वर और प्लेगके लिये लाभदायक वस्तु है। २१ नीमकी सींकें और ७ काली मिरचको छटांक भर अर्क गुलाबमें पीसकर दो २ घण्टेके अन्तरसे पिलानेसे और प्लेगकी गिल्टी पर बारूद और मिट्टीके तेलको मिलाकर लेप करनेसे प्लेगके रोगीको बड़ा लाभ होता है।

उपयोगः—

जीर्ण ज्वर—जो ज्वर शरीरमें हमेशा बना रहे और दूसरी किसी दवासे लाभ न हो तो नीम की अन्तर छालको एक तोलेकी मात्रामें लेकर १० छटांक पानीमें औटाकर जब १ छटांक पानी शेष रह जाय तब उसको छानकर प्रातःकालके समयमें रोगीको पिला देना चाहिये। इस प्रकार कुछ दिनों तक पिलानेसे रोगीके अन्दर रहनेवाला ज्वरांश निकल जाता है।

मलेरिया ज्वर—मलेरिया ज्वरमें नीमकी छालका काढ़ा दिनमें तीन बार पिलानेसे बड़ा लाभ होता है। इससे बुखारके बादकी कमजोरी भी मिट जाती है।

पित्ती—शरीरमें पित्ती निकलने पर इसके तेलमें कपूर मिलाकर मालिश करनेसे पित्तीमें बहुत लाभ होता है।

बिगड़े हुए घाव—जो बिगड़े हुए फोड़े दूसरी दवाइयोंसे आराम न होते हो उनपर नीमकी पत्तियोंका पुल्टिस बांधनेसे बहुत लाभ होता है।

कुष्ठ और चर्मरोग—नीमकी छालका क्वाथ पीनेसे और नीमके बीजोंके तेलकी मालिश करने से चमड़ेकी तमाम बीमारियां अच्छी होती हैं।

विषैले घाव—नीमकी पत्तियोंका रस, सरसोंका तेल और पानी। इनको पकाकर लगानेसे विषैले घाव अच्छे हो जाते हैं।

दमा—नीमके बीजोंका शुद्ध तेल ३० से ६० बूंद तक की मात्रामें पानमें रखकर खानेसे दमेके रोगमें बहुत लाभ होता है।

बहने वाले फोड़े—जो फोड़े हमेशा बहते रहते हों उनपर नीमकी छालकी राख लगानेसे लाभ होता है।

हैजेकी ऐंठन—हैजेमें हाथ पांवमें जो ऐंठन होती है उसमें नीमके तेलकी मालिश करनेसे बहुत लाभ होता है।

पतले दस्त—नीमकी अन्तर छाल ५ तोले, जौकुट करके २॥ पाव पानीमें औटाकर छानलें। फिर उस छनी हुई छालका उतने ही दूसरे पानीमें औटावें। जब १ पाव पानी रहे, छानलें। छने हुए दोनों काढ़ोंको मिलाकर शीशीमें रख छोड़ें। जिस रोगीको पतले दस्त आते हों, उसका पांच २ तोले काढ़ा दिनमें ३ बार पिलावें।

वायुरोग—नीमके तेलको पानमें रखकर खिलानेसे अथवा इसकी ३० बूंदको रास्नादि क्वाथमें मिलाकर पिलानेसे शरीरकी ऐंठन और कई प्रकारके वायु रोग मिटते हैं।

मोच और गिल्टियोंकी सूजन—चोट लगनेके कारण आई हुई मोच और गिल्टियोंकी सूजनपर नीमकी पत्तियोंका बफारा देनेसे बड़ा लाभ होता है।

नासूर और पीब वाले फोड़े—जिस घावमें नासूर पड़ गया हो और उसमेंसे बराबर पीब निकलता होतो उसपर नीमकी पत्तियोंका पुल्टिस बांधनेसे बड़ा लाभ होता है।

पेटके कृमि—बैंगन या किसी दूसरी सागके साथ नीमकी पत्तियोंको छोंक कर खानेसे पेटके कीड़े मर जाते हैं।

कानसे पीब निकलना—नीमके तेलमें शहद मिलाकर उसमें बत्ती भिगोकर कानमें रखनेसे कानसे पीब निकलना बन्द हो जाता है।

नेत्ररोग—नीमके कोमल पत्तोंका रस निकालकर गरम २ जिस ओरकी आंख दुखती हो उसकी

दूसरी ओरके कानमें डालना चाहिये। यदि दोनों आंखोंमें दर्द हो तो दोनों कानोंमें डालना चाहिये।

पथरी—नीमको पत्तियोंकी राख २ माशेकी मात्रामें बराबर कुछ दिनों तक जलके साथ खाते रहनेसे पथरी गल जाती है।

नकसीर—नीमकी पत्तियाँ और अजवायन दोनोंको पानीमें पीसकर कनपटियों पर लेप करनेसे नकसीर वन्द हो जाता है।

नेत्र रोग—नीमकी पत्तियों का रस निकालकर आँखोंमें टपकानेसे बँफनी, गलना और जलन इत्यादि नेत्र सम्बन्धी विकार नष्ट हो जाते हैं।

मासिक धर्मकी रुकावट—नीमकी छाल ४ माशे, पुराना गुड़ २ तोले और पानी १॥ पाव। इनको औटा कर जब आधा पाव जल रहे तब छानकर पिलावे। इससे रुका हुआ मासिक धर्म फिर चालू हो जाता है।

सिकता और इक्षु प्रमेह—नीमकी छालका काढ़ा बनाकर प्रातः काल कई दिनों तक पिलानेसे सिकता और इक्षु प्रमेह नष्ट होते हैं।

पक्षाघात—नीमके बीजोंका तेल निकाल कर रोगीके पक्षाघात वाले अङ्गों पर मालिश करनेसे धीरे २ पक्षाघातमें लाभ होता है।

नेत्ररोग—नीमके फूलों का छायामें सुखाकर समान भाग कलमी शोरेके साथ पीस लेना चाहिये। इसको कपड़ेमें छानकर आंखमें आंजनेसे आंखकी फूली, धुंध, माड़ा, इत्यादि रोगों में लाभ होता है और आंखों की रोशनी बढ़ती है।

जोड़ोंका दर्द—नीमके पेड़की अन्तर छालको चन्दनकी तरह पानीके साथ पीसकर दर्दके स्थानपर गाढ़ा २ लेप करदें। जब लेप सूख जाय तब उसे उतारदें। इस प्रकार ३।४ बार लेप करनेसे जोड़ोंका दर्द मिट जाता है।

दाद—नीमके पत्तों को दहीमें पीसकर लेप करनेसे दाद मिट जाता है।

लू लगना—नीमके पंचांग और मिसरी दोनोंका एक २ तोला लेकर पानीके साथ पीसकर ठंडाईकी तरह छानकर पिलानेसे लू लगनेके उपद्रव दूर होजाते है।

रक्तार्बुद—नीमकी लकड़ीको पानीमें घिसकर १ इंच मोटा लेप करनेसे रक्तार्बुद मिट जाता है।

बर्र और बिच्छूका विष—नीमके पत्तोंको मसलकर काटे हुए स्थानपर मलनेसे बर्र और बिच्छू के काटे हुए स्थानपर शांति मिलती है।

मन्दाग्नि—नीमकी पकी हुई निम्बोलियों को नित्य प्रति नियम पूर्वक खानेसे मन्दाग्नि में लाभ होता है।

सांपके जहरकी परीक्षा—साँप काटे हुए आदमीको नीमकी पत्तियाँ चबानेको दें। यदि वे कड़वी नहीं मालूम दें तो समझलो कि जहरका असर हो गया है।

बवासीर—नीमकी निम्बोली और एलुवेको मिलाकर ६ माशेको मात्रामें खानेसे बवासीरके मस्से सूख जाते हैं।

प्रसूति कष्ट—नीमकी जड़को गर्भवती स्त्रीकी कमरमें बांधनेसे बच्चा आसानीसे पैदा हो जाता है। मगर बच्चा पैदा होते ही नीमकी जड़को खोलकर तुरन्त फेंक देना चाहिये।

संखियाका जहर—नीमकी पत्तियोंका रस पिलानेसे संखियेका जहर उतर जाता है।

अफीमका जहर—नीमके पत्तोंका खूब तेज अर्क निकाल कर पिलानेसे अफीमके जहर में लाभ होता है।

वमन—नीमकी पत्तियोंका स्वरस पिलानेसे वमन होना बन्द हो जाता है।

उरुस्तम्भ—नीमकी जड़को पानीमें घिसकर गरम २ लेप करनेसे उरुस्तम्भमें लाभ होता है।

उपदंश—पाव भर नीमकी छालको जौ कुट करके १ सेर खौलते हुए पानीमें डालकर रात भर पड़ी रहने देना चाहिये। सुबह उसे कपड़ेसे छानकर उसमें से ५ तोला काढ़ा रोगीको पिला देना चाहिये और बाकी काढ़ेसे गर्मी के घावोंको धोना चाहिये। कई महिनों तक इस प्रयोगको करनेसे उपदंशके रोगमें बड़ा लाभ होता है।

रतौंधी—नीमके तेलको आँखों में आंजनेसे और नीमके ६ तोले स्वरसको २ दिनों तक प्रातः काल पीनेसे रतौंधी दूर हो जाती है। मगर पीनेके प्रयोगको २ दिनसे ज्यादा नहीं करना चाहिये।

सन्तति निरोध—१ तोला नीमके गोंदके चूर्णको आधा पाव पानीमें गला कर कपड़े से छान लें और उसमें १ हाथ लंबा और एक हाथ चौड़ा साफ मल २ का कपड़ा तर करके छाहमें सुखालें जब कपड़ा सूख जाय तब उसके कैंचीसे रुपये २ बराबर गोल टुकड़े काटकर एक शीशीमें रख छोड़ें। पुरुष संसर्गसे पहिले इसमें से एक कपड़ेका टुकड़ा लेकर स्त्री अपनी योनिके जरायु पिंडमें सांट दे। सहवासके एक घंटेके बाद उस टुकड़ेको निकालकर फेंकदें। इस प्रयोगसे जरायुमें विचित्र स्फूर्त्ति पैदा होती है जिसके कारण गर्भ स्थित होने नहीं पाता।

नीमके शुद्ध तेलमें रूई का फोया तर करके सहवाससे पहिले जरायुपिंडमें रख देनेसे शुक्र कीटाणु १ घण्टे के अन्दर ही मर जाते हैं और गर्भ स्थित होने नहीं पाता।

—(नीमके उपयोग)

बनावटें

ज्वर नाशक नीम क्वाथ—

नीम की जड़ की अन्तर छाल १ छटांक लेकर जौकुट करके ६४ तोले पानी में १५ मिनिट तक उबालकर छान लेना चाहिये। मलेरिया ज्वरमें जब कोई दूसरी दवा फायदा नहीं करती हो, तब इस काढ़े को ४ से ८ तोले तक की मात्रामें बुखार चढ़नेसे पहिले २।३ बार पिलानेसे बुखार रुक जाता है। जिन लोगों को क्विनाइन अनुकूल नहीं पड़ता है उन लोगों को भी इस औषधि से अच्छा लाभ होता है।

निम्बारिष्ट—

नीम की अन्तर छाल २॥ सेर जल ६४ सेर। जलमें नीम की छाल को डालकर औटाना चाहिये। जब १६ सेर जल रह जाय तब उसको छान लेना चाहिये। फिर उस क्वाथमें ५ सेर पुराना गुड़, ३२ तोला धायके फूल, २ तोला सफेद जीरा, २ तोला काली मिरच, २ तोला चिरायते के फूल और २ तोला पीपल को कूट पीसकर अच्छी तरह मिला देना चाहिये। फिर एक मजबूत घड़े में घी चुपड़कर, उस बरतनमें इस क्वाथ को भरकर उसका मुंह मजबूतीसे बन्द करके १ महीने तक पड़ा रहने देना चाहिये। उसके बाद उसको पांच २ दिनके अन्तर से तीन बार छान लेना चाहिये। जिससे लाल रंग का सुन्दर निम्बारिष्ट तैयार हो जायगा।

इस निंबारिष्ट को भोजनके १ घण्टा पश्चात् २॥ तोले की मात्रा में पानीके साथ नियम पूर्वक लेनेसे सब प्रकारके चर्मरोग, सब प्रकारके मलेरिया ज्वर और मलेरिया ज्वरसे होनेवाली कमजोरी दूर होती है।

निम्बहरिद्राखंड—

नीम का रस ६४ तोला, शक्कर ३२ तोला दोनों को मिलाकर हलकी आंच पर पकाना चाहिये। जब वह रस ऐसा गाढ़ा हो जाय कि चम्मचके चिपकने लगे तब उसमें चित्रक, हरड़, बहेड़ा, आँवला, नागर मोथा, कालीजीरी, अजवायन, अजमोद, निगुण्डीके बीज, सूंठ, मिरच, पीपर, निसोथ, दंती की जड़, मेंहदी के बीज, नीमके बीज और बावची के बीज दो दो तोला और वायविडंग तथा अनन्तमूल चार २ तोला लेकर। इन सब औषधियों का कपड़ छन चूर्ण करके उसमें मिलाकर कांच की बरनी में भर देना चाहिये।

इस औषधि में से प्रतिदिन सवेरे शाम १ तोले की मात्रा में खाकर ऊपर से ठंडा जल पीनेसे सब प्रकारके कृमिरोग, नहीं भरनेवाले घाव, कुष्ठ, नासूर, भगन्दर, विद्रधि, दाद, खाज, खुजली इत्यादि नष्ट होते हैं। अजीर्ण, कामला, वायुगोला और सूजन की व्याधि में भी यह लाभ पहुँचाती हैं। (नागार्जुन संहिता)

बृहत्पंचनिंबचूर्ण—

नीमके फूल, फल, छाल, जड़ और पत्ते प्रत्येक दो २ तोला। हरड़ बहेड़ा, आंवला, सोंठ, मिर्च, पीपर, ब्राह्मी, गोखरू, चित्रक की जड़, वायविडंग, अनन्त मूल, वराहीकन्द, लोहभस्म, दारू हल्दी, अमलतास, शक्कर, कूट, इंद्रजौ, काली पहाड़ की जड़ और गायके गोबरके साथ औटाकर, शुद्ध किये हुए भिलामें। ये सब चीजें एक एक तोला लेकर, इनको कूट पीसकर खैर की अन्तर छालके काढ़े की ५ भावना देना चाहिये। फिर नीमके अन्तर छालके क्वाथ की ७ भावनाएं देकर इस चूर्ण को खा लेना चाहिये। फिर भांगरेके रस की ५ भावनाएं देकर उसको छायामें सुखा लेना चाहिये उसके बाद इसको कपड़छन करके बोतलमें भर देना चाहिये। वमन, विरेचन इत्यादिसे शरीर को शुद्ध करके इस औषधि को ३ माशे से ६ माशे तक की मात्रा में असमान घी और शहदके साथ चाटनेसे सब प्रकारके चर्मरोग, दाद, खुजली, विस्फोटक, हर प्रकार का कुष्ठ, रतवा, भगन्दर, वातरक्त, व्रण, नासूर, विप विकार, इत्यादि रोग दूर हो जाते हैं। इसी प्रकार प्लेग, हैजा, शीतला, मलेरिया इत्यादि उपद्रवोंवाली ऋतुमें इसका सेवन चालू रखनेसे इन रोगोंके आक्रमण का भय नहीं रहता।

नीम का मलहम—

नीम का तेल १ पाव, मोम आधा पाव नीम की हरी पत्तियों का रस १ सेर, नीम की जड़ की छाल का चूर्ण १ छटाक, नीम की पत्तियों की राख २॥ तोला। एक लोहे की कढ़ाईमें नीम का तेल और नीम की हरी पत्तियों का रस डालकर हलकी आंचसे पकावें। जब रस जलते २ छटाक आधी छटाक रह जाय तब उसमें मोम डाल दें। जब मोम गलकर तेलमें मिल जाय, तब कढ़ाही को चूल्हे से नीचे उतारकर कपड़े से छानकर तेल की गाद को अलग करदें। फिर नीम की छाल का चूर्ण और नीमकी पत्तियों की राख उसमें मिलादें।

यह नीम का मरहम जहरीले तथा दूसरे घावों पर लगानेके योग्य है। इस एक ही वस्तु से घावों का शोधन और रोपण दोनों काम एक ही साथ हो जाते है। सड़े हुए पुराने घाव, नासूर तथा पशुओंके घावों पर भी उसका उपयोग किया जाता है।

निम्बवारुणी—

नीम को ताड़ी ८ सेर, नया गुड़ १। सेर, अदरक १ छटांक, नीम की अन्तरछाल आधा

सेर। एक मिट्टीके घड़े में नीम की ताड़ी डालकर पहिले उसमें अदरक कूटकर डालदें, फिर उसमें गुड़ और बादमें छाल कूटकर मिलादें। उसके बाद उस मिट्टी के घड़े का मुंह बन्दकर कपड़मिट्टी करके २४ दिन तक जमीनके अन्दर गाड़दें। २५ वें दिन उस घड़े को जमीन से निकालकर भफके से उसका अर्क खींचलें। इस अर्क को भोजनके पश्चात ४ तोले की मात्रा में लेनेसे वातरक्त, गठिया, मंदाग्नि, कुष्ट, बवासीर, पुराना बुखार और पोलिया रोग नष्ट होते हैं।

नीम का काजल—

नीम की पीली सूखी पत्तियाँ नग ७, नीमके सूखे फूलोंका चूर्ण १ माशा, नीम का तेल १ तोला, साफ महीन कपड़ा ४ इंच। महीन ४ इंच कपड़े को लेकर उस पर नीम की सूखी पत्तियाँ और नीमके फूलों का सूखा चूर्ण बिछादे और फिर उस कपड़े को हाथसे मसलकर बत्ती बनालें। एक मिट्टीके दीपकमें नीम का तेल डालकर उसमें उस बत्ती को डुबोकर जलादें। जब बत्ती अच्छी तरह जलने लगे तब उस पर एक ढकनी लगाकर काजल तैयार कर लें। इस काजलको आँखमें आंजने से सब प्रकारके नेत्र रोग दूर होकर आँखों की रोशनी बढ़ती है।

मुजिर—

जिनकी कामशक्ति कमजोर हो उन लोगोंको नीम का अधिक सेवन नहीं करना चाहिये। प्रातःकाल उठकर उषापान करनेवाले को भी नीम नहीं खाना चाहिये।

प्रतिनिधि—

नीमके नहीं मिलने की हालत में बकायन की छाल और उसके पत्तों का व्यवहार करना चाहिये। बकायन भी नीम ही की तरह गुणवाला है। मगर इसमें विष का अंश अधिक होता है। इसलिये इसको थोड़ी मात्रामें लेना चाहिये।

दर्पनाशक—

नीमके सेवन से अगर कुछ विकार उत्पन्न हो जाय तो उसको घी, गाय का दूध और सेंधे निमकसे दूर करना चाहिये।

नीम बकायन

नामः—

बृहत् निम्ब, अचाद्रु, गेरिका, गिरिपत्रा, हिमद्रुमा, केदर्य, ककंडा, केशमुष्टि, क्षीरा, महा द्राक्षा, महानिंब, महातिक्ता, पर्वता, पवनेष्टा, शुक्ल सारका, विष मुष्टिका। हिन्दी—बकायननिंब,

महानिब, डेकना, द्रेक, बकेरजा। गुजराती—बकाण लींबड़ो। बंगाल—घोड़ानीम। गढ़वाल—डेंकना। फारसी—अझदेदेरचटा, बकंन। पंजाब—बकेन, चेन, ढेक, जेफ, कचेन। तामील—मलइ वेंबू, मलइव्हेपन, सिगारी निंवम। तेलगू—तुर्फाव्हेप, व्हिर्टाव्हेप। उर्दू—बकायन लेटिन—Melia Azedarach (मेलिया अझेडेरचा)।

वर्णन—

बकायन का पेड़ हिन्दुस्तानमें बहुत स्थानों पर पाया जाता है। इसके झाड़ ३५ से ४० फुट तक ऊंचे होते हैं। इसका वृक्ष बहुत सीधा होता है। इसके पत्ते नीमके पत्तोंसे कुछ बड़े होते हैं। इसके फूल गुच्छोंके अन्दर लगते हैं। ये नीमके फूलोंसे कुछ बड़े और किंचित नीले रंगके होते हैं। इसके फल पकने पर पीले रंग के हो जाते हैं। इसके बीजोंमें से एक प्रकार स्थिर तेल निकलता है जो नीमके तेल की तरह होता है। इस वनस्पति का पंचांग अधिक मात्रामें विषैला होता है।

बकायनके पेड़मेंसे फागुन और चेतके महिनेमें एक प्रकार का दूधिया रस निकलता है। यह रस मादक और विषैला होता है। इसलिये फागुन और चेतके महिनेमें इस वनस्पति का व्यवहार नहीं करना चाहिये।

इसकी छाल, पत्ते और फलों को अधिक मात्रामें लेनेसे शरीर पर एक प्रकार का विषैला प्रभाव पड़ता है। जिससे मनुष्य अचेत हो जाता है। इसके ६।७ बीजों को खिलानें पर मनुष्य के शरीरमें उल्टी, ऐंठन और हैंजेके पूर्ण लक्षण दृष्टिगोचर होने लगते हैं और कुछदेरमें मनुष्य की मृत्यु हो जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वैदिमत—आयुर्वेदिक मतसे बकायन कड़वा, शीतल, रूक्ष, कसेला, मलरोधक तथा कफ, दाह, व्रण, रक्तरोग, पित्त, कृमि, विषमज्वर, हृदय रोग, कुष्ठ, वमन, प्रमेह हैजा, चूहे का विष गुल्म, शीत पित्त, अर्श और श्वास रोग को दूर करने वाला होता है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे इसके बीज कड़वे और कर्फानिस्सारक होते हैं। चढ़ी हुई तिल्लीमें इन का उपयोग किया जाता है। हृदय की शिकायतोंमें भी ये लाभदायक हैं। ये वमन कारक, रक्तश्राव रोधक, नकसीर को रोकने वाले, दांतोंको मजबूत करनेवाले, सूजन को नष्ट करने वाले और गीली तथा सूखी खुजली को दूर करने वाले होते हैं। इसके बीजों का तेल मस्तिष्क को ताकत देने वाला, मृदुविरेचक, कर्णशूल को दूर करनेवाला, रक्तशोधक और बवासीर,

तिल्ली और यकृत की विकृति तथा सूजन को दूरकरने वाला होता है। इसके फूल और पत्ते मूत्रल, ऋतुश्राव नियामक और स्नायविक मस्तकशूल और सर्दी की सूजन को दूर करनेवाले होते हैं।

मुसलमानी देशोंमें इस वनस्पति का उपयोग बहुत बड़े पैमाने पर किया जाता है। परशियन हकीम इसकी जानकारी हिन्दुस्तानसे ले गये थे। उन लोगोंके मतसे इस वृक्ष की छाल, फूल, फल और पत्ते गरम और रूक्ष होते हैं, इसके फूल और पत्तों का पुल्टिस व लेप, लगानेसे स्नानविक मस्तक शूल दूर होता है। इसके पत्तों का रस अन्तः प्रयोगमें लेनेसे मूत्रल, ऋतुश्राव नियामक, रक्तशोधक और सरदी की सूजन को मिटाने वाला होता है।

पंजाबमें इसके बीजोंको संधिवातकी पीड़ा दूर करनेके लिये दिये जाते हैं। कांगड़ामें इसके बीजोका चूर्ण दूसरी औषधियोंके साथ मिलाकर पुल्टिसके रूपमें या लेपके रूपमें गठिया और संधिवातकी पीड़ामें लगाया जाता है।

अमेरिकामें इसके पत्तोंका काढ़ा हिस्टीरिया रोगको दूर करनेवाला, संकोचक और अग्निवर्धक माना जाता है। इसके पत्ते और छाल गलित कुष्ट और कंठमालाको दूर करनेके लिये खाने और लगानेके काममें लिये जाते हैं। ऐसा विश्वास किया जाता है कि इसके फूलों के पुल्टिसमें कृमिनाशक तत्व मौजूद रहते हैं और इसलिये चर्मरोगोंको दूर करनेके लिये यह एक महत्वपूर्ण औषधि मानी जाती है। इसके फलमें जहरीले तत्व रहते हैं। फिर भी यह गलित कुष्ट और कण्ठमालामें उपयोगमें लिया जाता है।

इंडोचायनामें इसके फल और फूल अग्निवर्धक, संकोचक और कृमिनाशक माने जाते हैं। कुछ विशेष प्रकारके ज्वर और पेशाब सम्बन्धी बीमारियोंमें इसके फलोंका उपयोग किया जाता है। इसके बीज टायफाइड फीवर, पेशाबकी रुकावट और पेड़ूके दर्दको दूर करनेके काममें दिये जाते हैं।

कोमानके मतानुसार इसकी छालका काढ़ा कटुपौष्टिक, पार्यायिक ज्वरोंको दूर करने वाला और मन्दाग्नि नाशक समझा जाता है। वास्तवमें यह एक प्रभावशाली कटुपौष्टिक वस्तु है। मगर इसमें मलेरिया कीटाणुओंको नष्ट करनेवाले कोई तत्व नहीं पाये जाते।

डाक्टर देसाईके मतानुसार बकायन नीमके धर्म साधारण नीमकी तरह होते हैं। यह कृमिनाशक चर्मरोगोंको दूर करनेवाला, गर्भाशयके लिये संकोचक व वेदनानाशक और शोधक होता है। इसके प्रयोगसे गोल जन्तु मर जाते हैं। इसकी अधिक मात्रासे दस्त और उल्टी होकर नशा आ जाता है।

कृमि रोग में अथवा कृमियोंकी वजहसे उत्पन्न होनेवाले ज्वरमें यह एक उत्तम गुणकारी वस्तु है।

प्रसूतिकालमें होनेवाले मस्तकशूल और गर्भाशयके शूलपर इसके पत्तों और इसके फूलोंको कुचलकर सिर और पेड़ू पर बांधनेसे लाभ होता है। रक्तपित्त, कण्ठमाला, और रक्तदोपसे पैदा हुए चर्मरोगोंमें इसके बीज या पत्तोंका रस दिया जाता है।

प्रतिनिधि—इसका प्रतिनिधि मजीठ है।

दर्पनाशक—इसका दर्पनाशक सौंफ है।

मात्रा—इसकी छाल की मात्रा ३ से ६ माशे तक और इसके बीजों की मात्रा १ रत्ती से ४ रत्ती तक है।

उपयोग—

कृमिरोग—वकायनके पत्तोंका रस पिलानेसे पेटके कृमि मरते हैं।

शर्कराश्मरी—वकायनके पत्तोंका रस निकालकर उसमें जौखार मिलाकर पीनेसे शर्कराश्मरी मिटती है।

मासिक धर्म सम्बन्धी रोग—इसके रसमें अकलकरेका रस मिलाकर पिलानेसे स्त्रियोंका मासिक धर्म शुद्ध हो जाता है।

सरदीकी सूजन—इसके रसको गरम करके लेप करनेसे सरदीकी सूजन मिटती है।

आवेश रोग—इसके पत्तोंका क्वाथ स्त्रियोंके आवेश रोगमें पिलाया जाता है।

उदर शूल—इसके क्वाथमें सोंठका चूर्ण मिलाकर पीनेसे उदर शूल मिटता है।

कंठमाल—इसके पत्ते और छालका क्वाथ बनाकर पीनेसे कुष्ट और गंडमाला मिटती है। ऊपर से अगर इसका लेप किया जाय तो और भी जल्दी फायदा होता है।

फोड़े फुन्सी—इसके फूलों को पीसकर लेप करनेसे खुजली, फोड़े फुन्सी और दूसरे चर्मरोग मिटते हैं।

गठिया—इसके बीजोंके चूर्णकी फक्की लेनेसे और इसके बीजोंको खुर्बानीके साथ पीसकर लेप करनेसे गठियामें बड़ा लाभ होता है।

चुन्ने—इसके सूखे फलोंको सिरकेमें पीसकर सूक्ष्म मात्रामें पिलानेसे बच्चोंके पेटमें पड़नेवाले चुन्ने और दूसरे कृमि पेटमेंसे निकल जाते हैं।

सिरकी गंज—इसके बीजोंको कड़वे तेलमें जलाकर लेप करनेसे सिरकी गंजमें लाभ होता है।

बवासीर—वकायनकी मगज और सौंफको पीसकर उसमें समान भाग मिश्री मिलाकर दो माशे

की मात्रामें फक्की देनेसे ववासीरमें लाभ होता है। अथवा वकायनके पावभर पत्तोंमें दो तोले नमक मिलाकर, पीसकर, झरवेरके बरावर गोलियां वनाकर खिलानेसे ववासीर मिटता है।

नारू—इसका १ बीज नित्यप्रति ७ दिन तक खिलानेसे नारू गल जाता है।

प्रमेह—इसके बीजोंको चावलोंके पानीमें पीसकर घी मिलाकर पिलानेसे पुराना प्रमेह मिटता है।

गृध्रसी—वकायनके सारको पानीके साथ पीसकर पिलानेसे और इसकी जड़की छालका लेप करनेसे गृध्रसीमें लाभ होता है।

नीम मीठा

नाम:—

संस्कृत—कैडर्य्य, महानिंव, रामण, रमण, गिरीनिंब, महारिष्ट, शुक्लसार, छर्दिघ्न प्रियसाल, वरतिक्त, इत्यादि। हिन्दी—मीठानीम। बंगाल—बोड़ानीम विशेष। मराठी—कलयानिंव, गोड़निंव। गुजराती—मीठो लीमड़ो, कड़ी लीमड़ो। पंजाब—गन्दनिंव। तामील—करुएपिल्ले। तेलगू—करिवेपमु। फारसी—सजंदकरखीकुनाह। लेटिन—Murraya Koenigii. (मुरैयाकोनिजीआइ)।

वर्णन—

मीठे नीम का पेड़ भारतवर्षके सभी हिस्सोंमें पाया जाता है। इसके पेड़की ऊँचाई १२ से लेकर १५ फुट तककी होती है। इसके पत्ते देखनेमें नीमके पत्तोंकी तरह ही होते हैं। किन्तु ये कटी हुई किनारोंके नहीं होते। चैत और वैशाखमें इसके पेड़में सफेद रंगके फूल आते हैं। इसके फल झूमकेदार होते हैं। पकनेके समय इन फलोंका रङ्ग लाल हो जाता है। इसके फल के बीजों में से तेल निकाला जाता है। इसके पत्तों में से भी एक प्रकार का सुगन्धित तेल निकलता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वैदिक मतानुसार मीठा नीम कड़वा, तिक्त, कसेला, शीतल, हलका, और संताप, शोप, कुष्ट, रुधिरविकार, कृमि, भूतबाधा और विषको नष्ट करता है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से यह पाचक, क्षुधाकारक, आमाशयको शक्ति देनेवाला, संग्रहणीमें लाभ पहुँचानेवाला, धातु पैदा करनेवाला, कृमिनाशक, कफको छांटनेवाला और मुँहकी बदबूको मिटानेवाला होता है। यह दूसरे दर्जेमें गरम और खुश्क होता है। इसकी जड़को घिसकर जहरीले कीड़ोंके काटनेकी जगह पर लगानेसे लाभ होता है।

आंवके दस्त मिटानेके लिये इसके हरे कच्चे फल खिलाये जाते हैं। इसके पत्तोंको पानीके साथ पीसकर शरबतकी तरह पिलानेसे वमन बन्द होती है। ज्वरको दूर करनेके लिये इसके पत्तोंको दूसरी कड़वी दवाइयोंके साथ पिलाया जाता है। इसके पत्तोंके चूर्णका लेप करनेसे छोटी छोटी फुन्सियां मिट जाती हैं, खुजलीमें लाभ होता है। इसकी जड़के चूर्णको शहद और पानीके साथ चटानेसे पित्तज उपद्रव मिटते हैं। इसकी जड़के काढ़े पर सोंठका चूर्ण भुरभुराकर पिलानेसे उदर शूल मिटता है।

इसके सूखे और गीले पत्ते कढ़ीमें छोंक लगानेके काममें तथा दालको स्वादिष्ट बनानेके काममें आते हैं। इनको चनेके बेसनमें मिलाकर पकौड़ी भी बनाई जाती है।

रावर्टके मतानुसार सीलोनमें इसके पत्तोंका काढ़ा सर्पदंशमें पिलानेके काममें लिया जाता है और इसकी जड़ काटे हुए हिस्से पर लगानेके काममें ली जाती है।

कार्टर के मतानुसार लखीमपुर आसाममें इसकी जड़का रस मूत्राशयसे सम्बन्ध रखने वाले रोगोंमें उत्तम माना जाता है।

इन्डोचायनामें इसका फल संकोचक माना जाता है और इसके पत्ते रक्तातिसार और आमातिसारमें काममें लिये जाते हैं।

कर्नल चोपराके मतानुसार यह पौष्टिक और अग्निप्रवर्धक है। सर्पदंशमें भी यह उपयोगी माना जाता है। इसमें इसेंशियल आइल,ग्लूकोसाइड और कोइनिगिन (Koeinigin) नामक तत्व पाये जाते हैं।

केस और महस्करके मतानुसार इसके पत्ते, जड़ और छिलका सर्पविषमें बिलकुल निरुपयोगी है।

नीबू

नाम—

संस्कृत—निम्बूक, अम्लजम्भीर, दन्तशठ, जन्तुजित, इत्यादि, हिन्दी—नींबू, बंगाल—लिंबुक, कागजीलेबू, । मराठी—लिंबू, कागदी लिंबू । गुजराती—लिंबू, कागदी लिंबू । तामील—रालमिंच्चे । तेलगू—निम्मपण्ड्र । अंग्रेजी—Lemons लेटिन—Citrus Acida (साइट्रस एसिडा) ।

वर्णन—

नींबू का फल सारे भारतवर्षमें खटाई के काममें आता है। इसको सब कोई जानते हैं। इसलिये इसके विशेष परिचय की आवश्यकता नहीं। इसकी ५।६ जातियां होती हैं। जैसे :—कागजी नीबू, जम्भीरी नीबू, कन्नानीबू, बिजोरा नीबू, मीठा नीबू, इत्यादि । इन सबके स्वरूप और गुणोंमें थोड़ा २ भेद होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत - आयुर्वेदिक मत से नीबू खट्टा, वात नाशक, दीपन, पाचक, हलका, कृमिनाशक, तीक्ष्ण, उदर रोगों को दूर करनेवाला, श्रमहारक, शूलमें हितकारी, अरुचि निवारक और रोचक होता है।

नींबूसे त्रिदोष जन्य रोग, तत्कालके ज्वर, अनेक प्रकार की मन्दाग्नि, मुँहसे पानी का गिरना, कब्जियत, वद्धकोष्टता और विशूचिका रोगमें लाभ होता है।

निघण्टु रत्नाकरके मतानुसार नींबू गरम, पाचक, खट्टा, दीपन, नेत्रों को हितकारी, अतिशय रुचिकारक, कड़वा, कसेला, हलका तथा कफ, वात, वमन, खांसी, कण्ठरोग, क्षय, पित्तशूल, त्रिदोष, मलस्तम्भ, विषूचिका और कब्जियतमें गुणकारी होता है। यह आमवात, गुल्म और कृमि को दूर करता है।

एक आधुनिक चिकित्सक के मतानुसार नींबू का रस दीपन, पाचन, हृदयको बल देने वाला, प्यास निवारक, रक्तपित्तनाशक, पार्यायिक ज्वरों को दूर करने वाला, ज्वर नाशक और मूत्रल होता है। इसकी छाल दीपक होती है।

आधुनिक चिकित्सा विज्ञानमें भी इस वस्तुने अच्छी ख्याति प्राप्त की है। अनेक प्रामाणिक खोजोंसे यह साबित हो चुका है कि नींबू में जीवन पोषक खटाईके तत्व

Vitalizing Acids) दूसरे फलोंकी अपेक्षा अधिक प्रमाणमें रहते हैं। दूसरे फल कच्चे होनेपर खट्टे रहते हैं और पकने पर मीठे हो जाते हैं और बहुत अधिक पकने पर उनमें कई प्रकार की एसिड जैसे—एसिटिक एसिड, लेक्टिक एसिड, ब्यूटीरिक एसिड और आक्सेलिक एसिड इत्यादि शरीर की जीवन क्रियाओं को नुकसान पहुँचाने वाली बहुतसी एसिडस रहती है मगर नीबू की खटाई इस प्रकार की नहीं होती। नीबू अच्छी तरह से पक जानेके पश्चात् भी अपनी खटाई नहीं छोड़ता। इससे ऐसा मालूम होता है जैसे संसार की प्रयोग शालामें प्रकृतिने ने इसका रचना विशेष तत्वोंके मेलसे की है। नीबू की यह खटाई दूसरी खटाईसे बिलकुल भिन्न प्रकार की होती है। इसकी यह खटाई बिलकुल कुदरती है।

अभी तक स्कर्व्ही रोग को दूर करने के लिये नींबू और चूने का पानी एक अव्यर्थ औषधि की तरह काममें लिये जाते हैं। हर एक जहाज और स्टीमर अपने साथ नीबू का ताजा रस हमेशा रखता है। इस रसको नहीं बिगड़ने देनेके लिये इसमें अलकोहल मिल दिया जाता है।

नींबूके रसमें कृमियों को नष्ट करने की ताकत भी बहुत अधिक पाई जाती है। आन्तोंके अन्दर बेक्टिरिया इत्यादि अनेक प्रकारके कीटाणुओं के पड़नेसे टायफाइड, अतिसार, कालरा, इत्यादि जितने रोग होते हैं नीबू के रसमे इन सब रोगोंके कीटाणुओं का नाश हो जाता है।

इसी कृमिनाशक शक्ति की वजहसे नींबू का रस नियम पूर्वक लेते रहनेसे सन्धिवात और आमवातमें लाभ होता है। विज्ञानसे यह सिद्ध हो चुका है कि इस प्रकार के रोग एक जातिके जन्तुओंसे जो कि शरीरके जोड़ों में पैदा होते हैं, उत्पन्न होते हैं। ये जन्तु उन जोड़ोंमें पड़े पड़े एक प्रकार का जहर पैदा करते हैं। यह जहर दूसरे प्रकार के दोषोंके साथ मिल कर कई प्रकार बीमारियां पैदा करता है। नींबू के रसमें इन जन्तुओं को नष्ट करने की ताक़त रहती है।

इस प्रकार की दुखदायक व्याधियों की चिकित्सा में नींबू का प्रयोग वर्धमान पिप्पली की तरह क्रमशः बढ़ाते हुए करना चाहिये। जिस प्रकारके रोगी पर यह प्रयोग करना हो उसको पहिले दिन ३, दूसरे दिन ४, तीसरे दिन ५ इस प्रकार १२ नीबू तक बढ़ाना चाहिये।

उसके पश्चात एक २ नीबू प्रतिदिन घटाते हुए फिर वापस १।२ के ऊपर आजाना चाहिये। अगर कुछ कमी रह जाय तो फिर उसको बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार नींबू २०० पूरे करदेना चाहिये। इस विधिको अंग्रेजीमें Lemon cure कहते हैं। अगर आमाशयमें गंदगी न हो तो

यह प्रयोग लाभदायक होता है अगर आमाशयमें मल भरा हुआ हो तो खानेको सब चीजों को छोड़ कर सिर्फ नींबू पर ही रहना चाहिये।

दुग्धोपचारके साथ नींबूके प्रयाग—

अमेरिकाके विख्यात फिजिकल कल्चरिस्ट मिस्टर वनरि मैक फेड्न अपनी दुग्ध चिकित्सा में नींबूका उपयाग करते हैं। जिन लोगोंको दूध अनुकूल नहीं पड़ता है उन लोगों के लिये नींबू एक वहुत मूल्यवान वस्तु है ऐसा उनका मत है। जब किसी रोगी की दुग्ध चिकित्सा चल रही हो और कुछ दिनोके पश्चात जब उसे दूध पचने न लगे और दूधके प्रति उसको घृणा हो जाय तब उसका दूध वन्द करके उसको नींबूके रसके ऊपर रक्खा जाता है कुछ दिन नींबूके ऊपर रहने पर उसकी पाचन क्रिया वहुत अच्छा काम करने लग जाती है। एसिडके अभावसे जिसका दूध नहीं पचता है। वह नींबूके उपयोगके पश्चात वहुत सरलतासे पचने लग जाता है। नींबूका लेनकी उनकी पद्धति इस प्रकार है।

एक नारंगीका थोड़ासा मुंह खोलकर उसमें नोंबूका रस भर देते हैं। फिर उस नारंगी का और नीबूका रस कपड़ेमें दवाकर एक साथ निचो लेते हैं और वह रोगीको पिलाते हैं। नारंगीकी मिठाससे नीबूकी खटाइ सहजही कम हा जाती है।

शरीर क्रिया प्रणाली पर नींबूका प्रभाव—

शरीरके अन्दरसे जहरोंका निकालनेके जितने द्वार है उन सबके द्वारा नींबू शरीरके अन्दर एकत्रित दोषोंको (Waste Poisons) वहुत खूवीके साथ निकाल देता है। मूत्र पिंड और चर्म छिद्रों के द्वारा नींबू अनेक प्रकारके दोषोंको वाहर निकालता है। यकृतकी शुद्धिके लिये नींबूके समान उत्तम औपधि आज तक दूसरी कोई भी दृष्टि गोचर नहीं हुई है। अजीर्ण, छातीमें जलन होना, अतिसार, कालरा, खट्टी डकारें आना, कफ, जुकाम, श्वास, इत्यादि रोगोंमें नींबूकी खुराक औषधिका काम करती है। पर नींबू हमशा अकेला ही लेना चाहिये। किसी खाद्य पदार्थके साथ नहीं।

जब खाली आमाशयमें नींबूका रस जाता है तब सबस पहिले जिन कृमियोंसे आमाशयमें वादी (fermetation) पैदा होती है, उन कृमियों को नष्ट करना शुरु करता है। इन कृमियोंसे आमाशयमें अनेक प्रकारके हानिकारक एसिड उत्पन्न होते रहते हैं। नीबूका रस इन कृमियों को नष्ट करके ऐसे एसिडस पैदा होना वन्द कर देता है। जब रस रक्तके साथ मिल जाना है और वह यकृत और लिम्फेटिक सिस्टम (Lymphatic System) तक पहुँचता है। तब वहां पर एकत्रित दुष्ट पार्थिव द्रव्योंको (Earthy types of waste matter) को छिन्न भिन्न कर

डालता है। यही दुष्ट पार्थिव द्रव्य शरीरमें एकत्रित होकर संधिवात, ग्रन्थिवात, गठिया इत्यादि रोगोंको पैदा करते हैं।

नींबूके अन्दर सिर्फ खट्टे तत्व (Incombined Acids) ही रहते हों यह बात नहीं है। इनके सिवाय इसमें दूसरे अम्ल प्रतियोगी (Alkaline) खनिज तत्व भी रहते हैं। इन तत्वों को साइट्रेटस, मेलेटस और टारट्रेटस कहते हैं। नींबूके एक औंस रसमें ३२ ग्रेन साइट्रिक एसिड रहता है।

पेटके अन्दर कृमियोंकी क्रियाको रोककर, अवांछित पार्थिव द्रव्योंको नष्ट भ्रष्ट करके नींबू का रस रक्त में मिलता है और रक्तको शुद्ध करके उस दुष्ट पदार्थों के संसर्गसे बचाता है।

इस कामको करनेके पश्चात् नींबू का रस कारबोनिक एसिड और पानी इन दो रूपोंमें परिवर्तित हो जाता है और इसी रूपांतरकी स्थितिमें वह सर्वोत्तम कार्य करता है।

इस प्रकार नींबू पाचन क्रियाको शुद्ध करके रक्तके साथ मिलनेके पश्चात पानी और कारबोनिक एसिडके रूपमें परिवर्त्तित होता है। यह कारबोनिक एसिडरक्तमें रहनेवाले अम्ल प्रतियोगी लवणोंके साथ मिलता है और फिर उसमें से कारबोनेटस (कारबोनिक एसिड और दूसरे तत्वों का मिश्रण) बनता है। इस कारबोनेटसमें खटाई नहीं होती। बल्कि वहुत उग्र अम्ल प्रतियोगी लवण होते हैं। जब रक्त घूमता २ फेफड़ों में जाता है तब यह कारबोनेटस कारबोनिक एसिड को श्वासोच्छ्वासके द्वारा शरीरके बाहर फेंक देता है और शरीरमें सिर्फ अम्ल प्रतियोगी तत्व शेष रह जाते हैं। ये अम्ल प्रतियोगी तत्व शरीरमें रहनेवाले यूरिक एसिड, लेकटिक एसिड इत्यादि अनेक प्रकारके जहरी एसिडोंको बेकार कर देते हैं। ये सब जहरी एसिडस खराब पाचन क्रियाके द्वारा ही शरीरमें उत्पन्न होते हैं और अनेक प्रकारके विकार पैदा करते रहते हैं।

उपरोक्त विवेचनसे हमें यह बात मालूम हो गई कि इन एसिडों पर विजय पानेके लिये और शरीरमें तन्दुरुस्ती कायम रखनेके लिये रक्तमें अम्ल प्रतियोगी तत्वों का होना कितना आवश्यक है। नींबू का रस रक्तमें उन्हीं अम्ल प्रतियोगी तत्वों को पैदा करता है।

उत्तम और स्वास्थ्य दायक भोजन हमेशा अम्ल प्रतियोगी होता है। रक्त और दूसरी कार्य करनेवाली इंद्रियोंके द्वारा जो जहरी एसिडस पसीनेके रूपमें या पार्थिव द्रव्योंके रूपमें शरीरसे बाहर फेंके जाते हैं वे अम्ल प्रतियोगी पदार्थोंके द्वारा ही छिन्न भिन्न होकर प्रवाही पदार्थोंके रूपमें शरीरसे बाहर निकल जाते हैं। जब रक्तमें अम्ल प्रतियोगी तत्व नहीं होते हैं तब यह जहरी एसिडस शरीरमें गदर मचाकर अनेक प्रकारके रोग पैदा करते हैं।

यह बात अनेक प्रकार की खोजोंसे सिद्ध हो चुकी है कि अगर रक्तको अम्ल प्रतियोगी बनाना हो तो प्रतिदिन ४ से लेकर १४ नींबू तक का रस उपयोग में लेना चाहिये। नींबू

चिकित्सा का सारा आधार ही इस बात पर है कि नींबूके सेवनसे रक्त, अम्ल. प्रतियोगी बनता है और अम्ल प्रतियोगी रक्त सब प्रकारके जहरों को शरीरसे धकेल कर बाहर निकाल देता है।

यह बात आवश्यक रूपसे हमेशा ख्याल में रखना चाहिये कि नींबू का रस हमेशा भूखे पेट ही लिया जाय। गर्मी की अपेक्षा सर्दियोंमें नींबू का रस कम लेना चाहिये। क्योंकि जाड़ेमें ठण्डी हवा नीबू के द्वारा त्वचा के रास्ते बाहर निकलनेवाले दुष्ट पदार्थों को रोकती है।

जो भोजन अम्ल प्रतियोगी पाचन क्रियाके ऊपर निर्भर रहता हो उस भोजनके साथ नींबू नहीं देना चाहिये। जहां तक बने नींबू का रस दूसरे फलोंके रसके साथमें लेना चाहिये। अन्यथा पानीके साथ जरूर लेना चाहिये। बिना पानी डाले हुए अकेले ताजा नीबू का रस नहीं लेना चाहिये। खाली नीबू चूसना रोगीके लिये कुछ कठिन होता है। इसलिये अगर साधन हो तो अमेरिका में बनी हुई फलोंके रस निकालने की मशीन का उपयोग करना चाहिये। इस मशीन से नीबूमें से सब रस गाढ़े रूपमें निकल जाता है। उसमें थोड़ा पानी और थोड़ा शहद मिला देनेसे बहुत उत्तम पेय तैयार हो जाता है।

अगर यह मशीन सुलभ न हो तो नीबू को भाफकर उपयोग में लेना उत्तम होता है। बहुतसे रोगोंमें बाफे हुए या सेके हुए नीबू ही लेने का विधान होता है क्योंकि गरमी की वजह से नीबूके अन्दर का मावा एकदम मुलायम बन जाता है और उसमें रहनेवाला सुगन्धित तेल और कटुपौष्टिक लवण आसानीसे बाहर आ जाते हैं।

नींबू और मलेरिया—

सिसली टापू में नींबू मलेरिया के ऊपर बहुत अकसीर प्रयोग माना जाता है। बहुत उग्र काफी बनाकर उसमें नीबू का रस मिलाकर देनेसे मलेरियामें बहुत अच्छा काम होता है। बहुत से पुराने हठीले रोगोंमें भी नीबू का रस देनेसे अद्भुत परिणाम होते हुए देखे गये हैं। नीबूके मावेमें एक जाति का उग्र कृमिनाशक तेल रहता है। जिसे लेमन आँइल कहते हैं। इसके सिवाय, इसमें दूसरे भी अनेक कटुपौष्टिक तत्त्व रहते हैं। सिनकोना झाड़ की छालमें जैसे गुण हैं वैसे ही नींबूके कटुपौष्टिक तत्त्वोंमें भी माने जाते हैं।

नींबू क्षय और केन्सर—

डाक्टर विल्सने लाइफ और हेल्थ नामक मासिक पत्रमे क्षय (Consumpotion) के लिये एक बहुत ही अच्छा नुस्खा लिखा था। केन्सरके लिये भी यह नुस्खा लाभदायक साबित हुआ है। यह नुस्खा इस प्रकार है :—

"थोड़े रसदार पके हुए अच्छे नींबू ठण्डे पानीमें रख देना चाहिये। फिर उस पानी

को गरम करना चाहिये। जिससे नींबू मुलायम हो जायेंगे। इन नींबुओं को या तो ज्यों का त्यों चूस जाना चाहिये अगर चूसे नहीं जायं तो उनका रस निकाल कर शहद मिलाकर पी जाना चाहिये। आग पर वाफ करके भी उनका रस निकाला जा सकता है। रस पीने का उत्तम समय सवेरे और शामको है। दुपहरमें खानेके पश्चात् नींबू का रस नहीं पीना चाहिये। पहले दिन एक नींबू से शुरू करके एक एक नींबू रोज बढ़ाते जाना चाहिये। इस प्रकार १२ नींबू तक बढ़ा कर फिर एक एक नींबू घटाना चाहिये। अगर १२ नींबू तक बढ़ाते हुए कुछ घबराहट हो तो आठही नींबू तक बढ़ा करके फिर घटाना शुरू कर देना चाहिये।

नींबू और मेदवृद्धि—

प्रति दिन २ प्याले नीबूके रसमें १ प्याला पानी मिलाकर पीते रहने से और साथमें उपवास जारी रखने से मेदवृद्धिके ऊपर अद्भुत असर दृष्टिगोचर होता है। उपवास न हो सके तो थोड़ा भोजन करके इस प्रयोग को जारी रखना चाहिये पर एक बात का खयाल रखना चाहिए कि दुपहर की २ बजेके पश्चात् जो भोजन लिया जाता है। वह शरीरके आकार को बढ़ाता है। नींबू का रस शरीर के अन्दर बढ़े हुए पानी को सुखा कर एकत्रित जहरों को नष्ट कर देता है जिससे शरीर का वेडोल मोटापा निकल कर शरीर पतला, सुन्दर और सामर्थ्यवान हो जाता है।

नींबू और कृमिरोग—

नींबू का रस एक शक्तिशाली कृमिनाशक पदार्थ है। आन्तोंके अन्दर नाना प्रकारके जो कृमि पैदा हो जाते हैं और जिनके द्वारा टायफाइड, अतिसार, हैजा, इत्यादि नाना प्रकार के रोगों के होने का डर रहता है, नींबू का रस उन तमाम रोग कीटाणुओं को नष्ट कर देता है।

इसी जन्तु नाशक शक्तिके कारण नींबू का रस अगर बराबर उपयोग किया जाय तो सन्धिवात और आमवात को भी मिटाता है। यह बात साबित हो चुकी है कि इस प्रकार के रोग एक प्रकारके कृमियोंसे जो कि शरीर की सन्धियोंमें उत्पन्न होते हैं, पैदा होते हैं। ये जन्तु शरीर की सन्धियोंमें पड़े पड़े एक प्रकार का विष छोड़ते रहते हैं। यह विष दूसरे दोषों के साथ मिलाकर शरीरमें इस प्रकारके रोग पैदा करता है। नींबू के रसमें इन जन्तुओं को नष्ट करने की ताकत है।

नींबू और स्कर्व्ही रोग—

यह बात तो सर्व सम्मत हो गई है कि नींबू और चूने का पानी स्कर्व्ही रोग को मिटानेके लिये रामबाण औषधि है। इसी कारण जहाज और स्टीमरों के अधिकारी नींबू का ताजा रस अलकोहलके साथ मिलाकर अपने साथ रखते हैं।

स्कर्वी रोगमें नींबू का ताजा रस ४ औंस. क्लोरेट आफपोटास ६० ग्रेन, कुनेन ६ ग्रेन, शक्कर २ औंस और पानी ४ औंस। इन सब चीजों को मिला कर २ औंस की मात्रामें दिनमें ३।४ बार लेनेसे स्कर्वी रोगमें बहुत लाभ होता है। पथ्यमें नींबू, अनार,जामुन, आंवला टमाटर, सन्तरा, इत्यादि फल और हरी वनस्पतियां विशेष मात्रामें देना चाहिये।

नींबू और चर्म रोग—

बाह्योपचार में नींबू का रस चर्म रोगों को नष्ट करनेके लिये एक सफल इलाज है। दाद, खाज, चमड़ी परके काले दाग, इन्द्रलुप्त इत्यादि रोगों पर नींबूको काटकर रगड़ने से बड़ा लाभ होता है।

डाक्टर नाड करनी लिखते हैं कि नींबू का रस कफ उत्पन्न करनेवाले अवयवों की खराबीसे पैदा हुए अतिसारमें बहुत उपयोगी है। बिलकुल आशा छोड़े हुए रोगी को भी दिनभर में तीस तोला की मात्रामें देते रहनेसे आश्चर्यजनक परिणाम नजर आता है।

उपयोग:—

उदरशूल—कच्चे नींबू का छिलका खानेसे पेटमें होनेवाला बादी का उदरशूल मिटता है।

विष विकार—१०-१२ नींबू का रस निकालकर उसमें थोड़ी शक्कर मिलाकर पिलानेसे अफीम और सांपके विषमें लाभ होता है।

वमन—भोजनके बाद होनेवाली वमन को दूर करनेके लिए ताजे नींबू का रस पिलाना चाहिये।

बादी का दर्द—नींबू के रसमें यवाक्षार और शहद मिलाकर पिलानेसे जोड़ों में होनेवाला बादी का दर्द मिट जाता है।

ज्वर—इसके पेड़ की जड़ की छाल का काढ़ा बनाकर पिलानेसे ज्वर में लाभ होता है।

कृमि—इसके बीजोंके चूर्ण की फक्की देनेसे पेट की कृमि नष्ट होते हैं।

खुजली—इसके रसमें बारूद मिलाकर लगानेसे खुजली मिटती है।

तिल्ली—नींबू का अचार बनाकर खानेसे बढ़ी हुई तिल्ली में लाभ होता है।

नीबू बिजोरा

नाम—

संस्कृत—अम्लकेशरा, वेगापुरा, बीजक, बीजफलक, बीजपूर्ण, जन्तुघ्न, महाकरण,

मातुलुंग, फलापुरा, रोचनफला, सुकेशर इत्यादि । हिन्दी—बिजोरा नीबू, बड़ा नीबू, तुरंज । गुजराती—बिजोरूँ, तुरंज । बंगाली—बड़ोनेम्बू छोलोंग नेम्बू, बिजोरा । मराठी—महालुङ्ग, लिम्बू । फारसी—रूरंज । तामिल—कोगिलाचम, मादिफलम् । तेलुगू—लुङ्गाम् । अंग्रेजी—Adam'r Apple, Cedrat (आदम्स एपल, सेड्रेट) लेटिन—Citrus medica. (साइट्रस, मेडिका) ।

वर्णन—

यह नींबूकी जातिका एक वृक्ष होता है । इसका फल बहुत बड़ा होता है ।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—इसकी जड़ कृमिनाशक होती है, कब्जियत और अर्बुद या गांठ के रोगमें इसका उपयोग किया जाता है, यह पेटके दर्दको दूर करती है, वमन, मूत्रसम्बन्धी पथरी रोग और दन्तरोगमें यह उपयोगी है ।

इसकी कलियां और फूल उत्तेजक और आंतोंके लिए संकोचक होते हैं, भूख बढ़ाते हैं, वमनकी शिकायत दूर करते हैं, अर्बुद या गांठमें लाभदायक हैं, पेटकी शिकायतोंमें फायदेमंद हैं, दमा, खांसी, कुकुरखांसी और नशेको दूर करनेमें लाभदायक हैं । इसके कच्चे फल वात, पित्त और कफको बढ़ाते हैं तथा रक्तको भी दूषित करते हैं । पके फल मीठे, कसैले, उत्तेजना देनेवाले, पाचक और पौष्टिक होते हैं । ये कुष्ठको दूर करनेवाले, गलेके घाव अच्छा करनेवाले और कफ, दमा, प्यास, कुकुरखांसी आदिमें मुफीद हैं । ये गलेकी शिकायतोंमें लाभप्रद माने गये हैं । इनका रस कानके दर्दको शान्त करता है । इस फलका छिलका तिक्त, उग्र तैलयुक्त होता है और वात तथा कफका नाशक है । इसके बीज अपथ्य, भारी, शरीरमें उष्णता लानेवाले उत्तेजक और पौष्टिक होते हैं, और ये बवासीर एवं पित्त-विकारमें लाभदायक और जलन तथा कफ विनाशक हैं । इसका छिलका गर्म, खुश्क और बलदायक होता है । इसके फलका गूदा शीतल और खुश्क होता है । इसके बीज पत्ते और फूल गर्म और खुश्क होते हैं । इसका रस ज्वर निवारक तृषाशामक और संकोचक होता है । यह विषविकारमें भी लाभदायक है । इसका भभके से उड़ाया हुआ अर्क उपशामक द्रव्यकी तरह काममें लिया जाता है ।

चरक सुश्रुत और वाग्भट्टके मतानुसार यह वनस्पति अथवा इसकी छाल पत्ते या फल दूसरी औषधियोंके साथमें सर्पविषके उपचारमें काममें आते हैं ।

डाक्टर देसाईके मतानुसार इसका रस दीपन, पाचन औ रक्तशोधक होता है । इसकी

छाल सुगन्धित और कटु पौष्टिक होती है। इसके पत्ते पसीना लानेवाले और कुछ वेदना-नाशक होते हैं। इसके फूल मृदुस्वभावी होते हैं। इसकी जड़ संकोचक और कुछ वेदनानाशक होती है। ज्वरमें इसके पत्तोंकी फांट बनाकर देते हैं। वमन बन्द करनेके लिए इसकी जड़ औंटाकर देते हैं। बच्चों के दूध उगलने की बीमारीमें यह विशेषरूपसे उपयोगी होता है।

नीबू मीठा

नाम :—

संस्कृत—मधु जम्बीर, मधु कुकुटिका। हिन्दी—मीठा नींबू। बंगाल—मीठा नेबू, मीठा जामीर। बम्बई—मीठा लीम्बू। गुजराती—मीठा लिम्बू। पंजाब—मीठा निम्बू। उर्दू—लिमुन शिरी। लेटिन—Citrus Limetta (साइट्रस लिमिटा)।

वर्णन—

यह नीबू की ही एक जाति है, मगर इसके फल मीठे होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे इसका फल ठण्डा, कफकारक, वातनाशक और पित्त प्रकोप का दूर करनेवाला होता है।

यूनानीमत—यूनानी मतसे इसका फल मीठा, तृषा नाशक और ज्वर, पित्तप्रकोप, मस्तिष्क सम्बन्धी तकलीफें और रक्त स्राव की आदत को दूर करनेवाला होता है। इसका छिलका वमन को दूर करनेवाला होता है। इसके बीज कड़वे और खराब स्वाद वाले होते हैं। ये आँतों का संकोचन करते हैं और दांतों तथा मसूड़ों को ताकत देते हैं। इसका फल ज्वर और पीलियामें एक तृषा निवारक द्रव्य की तरह काममें लिया जाता है।

नीम्बू जम्भीरी

नाम—

संस्कृत—महानींबू, मातलुङ्ग। हिन्दी—जंम्भीरी, बड़ानींबू, पहाड़ी नींबू। बंगाल—गोरा नेंबू, करना नेंबू। दक्षिण—बड़ा लिंबू, जंभीरा, पहाड़ी नेंबू। गुजराती—मोटू लिम्बू।

पंजाब—गुलगुल, खट्टा। तामिल—कोदी मयालयी,मड्डुलाम। तेलुगू—वीजापुरम्, गजानिंबा। फारसी—कलिम्बाक। अंग्रेजी—Lemon. लेटिन—Citrus Limonum. (साइट्रस, लिमोनम)।

वर्णन—

यह भी नींबूकी ही एक जाति है। इसका फल नारंगीके समान मगर उससे कुछ छोटा और बहुत खट्टा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे इसके फलका छिलका तूरा, गर्म, तीक्ष्ण और कृमि नाशक होता है। यह वात कफ और फेंफड़ोंकी तकलोफोंमें लाभदायक है।

इसके पके हुए फलका छिलका अग्निवर्धक, पेटके आफरेको दूर करने वाला और शान्ति दायक होता है। इसके तेलको ग्लेसरिनके साथ मिलाकर खुजली और फोडे फुंसियों पर लगानेके काम में लिया जाता है। इसके पके फल का रस शीतादि रोग प्रतिशोधक और शान्तिदायक होता है।

स्कर्वी रोगके अन्दर यह एक उत्तम औषधि साबित हो चुकी है। इस रोगमें, यह रोग और रोगके कारण दोनों को नष्ट करती है। यह कृमिनाशक भी है। ज्वर और अन्य प्रादाहिक पीड़ाओंमें इसके रसको पानीमे डालकर शक्कर मिलाकर पिलाते हैं। यह एक उत्तम शान्तिदायक पेय है। तीव्र सन्धिवातमें और गठियामें और गर्म देशों में होने वाली पेचिश और अतिसार में इसका उपयोग बहुत सफल सिद्ध हो चुका है। अफीम इत्यादि नींद लाने वाले विषोंके प्रभावको भी यह दूर करती है। इस नींबूके रसको बारूदके साथ मिलाकर गीली खुजली पर लगानेसे अच्छा लाभ होता है।

वेस्ट इण्डीजमें इसकी जड़का छिलका ज्वर निवारक और इसके बीज कृमिनाशक और घाव भरने वाले माने जाते हैं।

इसकी छालमें जेरेनिओल (Geraniol), लिनेलुल (Linalool) और साइट्रल (citral) नामक पदार्थ पाये जाते हैं। इसके फलमें ग्लुकोसाइड और हेसप्रेरिडिन पाये जाते हैं।

नींबू करना

वर्णन—

यह एक किस्मका खट्टा नींवू होता है। भारतवर्षके कई स्थानों पर इसका पेड़ लगाया जाता है। इसके पत्ते कागजी नींबूके पत्तेसे चौड़े और बिजोरेके पत्तेसे छोटे होते हैं। इसके बीज भी बिजोरेके बीजसे छोटे होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका छिलका और फूल पहले दर्जे में गर्म और दूसरे दर्जे में खुश्क होते हैं। इसका रस शक्करके साथ मिलाकर देनेसे पित्तविकार और खूनकी तेजी मिटती है। शराबकी खुमारीको भी यह दूर करता है। इसके अन्दरका खट्टापन नजला और खांसीके लिए मुफीद है। सवेरेके टाइममें इसका रस पीनेसे गर्मी से पैदा हुआ पागल पन दूर होता है। इसके बीज ७ माशेकी मात्रामें लेनेसे जहरीले जानवरों का जहर दूर होता है। इसके छिलके को सुखाकर पानीके साथ लेनेसे मतली, वमन और मेदेके कीड़े नष्ट होते हैं। इसकी जड़के बारीक रेशे सर्द जहरोंके लिए बहुत फायदे मन्द हैं। इस कार्य में इसे ७ माशेकी मात्रामें शराबके साथ लेना चाहिए। इसके ६ माशे छिलके को शराबके साथ लेनेसे बिच्छूका जहर उतर जाता है।

नील

नाम :—

संस्कृत—नील पुष्पिका, नीला, नीलिका, रंगपत्री, रंगपुष्पी, रंजिनी, श्यामा, श्रीफली, असिता, भद्रा इत्यादि। हिन्दी—नील, लील, गोली। बंगाल—नील। गुजराती—गली, नील। मराठी—नीली, नील। पंजाब—नील। तेलगू—अविरी, नीली, श्यामा। तामिल—चामुंडी, इरासली, अवरी। फारसी—नील, निल्लाह। अंग्रेजी—Indigo लेटिन—Indigofera Tinctoria (इण्डिगोफेरा टिंक्टोरिया)।

वर्णन—

नीलके पौधे सरपंखेके पौधे की तरह होते हैं। ये बरसातके दिनोंमें सारे भारतवर्ष में बहुत पैदा होते हैं। आजसे कुछ वर्षोंके पहले जब कि विलायती रंग कम तादाद में चले थे इस पौधे की रंग निकालनेके लिये बंगाल और बिहारमें बहुत बड़ी तादादमें खेती की जाती थी। अभी भी बंगाल के अन्दर इसकी थोड़ी बहुत खेती होती है। इसका पौधा २ फीट तक ऊंचा होता है। इसके पत्ते गहरे हरे रंगके आधेसे लेकर १ इंच तक लम्बे और चौथाई से लेकर आधे

इंच तक चौड़े होते हैं। ये पत्ते मेथीके पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ बड़े होते हैं। इसके फूल कुछ ललाई लिये हुए पीले रंग के होते हैं। इसकी फलियाँ पतली, १ से १॥ इंच तक लम्बी और पावसे आध इंच तक चौड़ी होती हैं। इसके पत्ते तोड़कर सुखानेके बाद नीले रंगके होजाते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे इसकी जड़ गर्म, कड़वी, मृदुविरेचक, कफनिस्सारक ज्वरनाशक और बालों को बढ़ानेवाली होती है। यह उदर सम्बन्धी शिकायतों, हृदयरोग, उन्माद और वात रोगोंमें उपयोग में ली जाती है।

अर्बुद या गठान, ज्वर, धवल रोग, तिल्लीकी वृद्धि, और मस्तक सम्बन्धी रोगोंमें भी यह लाभदायक है। यह मूत्र मार्ग की तकलीफों, सर्पदंश, दन्त राग और क्षयमें भी लाभदायक है।

नील पार्यायिक ज्वरों को रोकनेवाली, यकृत को उत्तेजना देनेवाली, मज्जा तन्तुओंके लिए उपशामक, भेदक, मूत्रल और खांसी को दूर करनेवाली होती है। इसका यकृत को उत्तेजना देनेवाला धर्म यद्यपि जोरदार नहीं है पर स्पष्ट है। मज्जा तन्तुओंके ऊपर इसकी उपशामक क्रिया बहुत अनिश्चित है। इसका मूत्रल धर्म बहुत थोड़ा है। पार्यायिक ज्वरों को रोकने की इसकी तासीर दूसरे दर्जे की है। इसका भेदक धर्म बहुत जोरदार और स्पष्ट है। अधिक मात्रामें लेनेसे यह आमाशय में जलन और कष्ट पैदा करती है। छोटी मात्रामें इसके लेनेसे दस्त साफ हो जाता है।

यकृत और प्लीहा की वृद्धिमें और जलोदरमें इसकी जड़ को देनेसे यकृत की क्रिया सुधरती है, पेशाब की मात्रा बढ़ती है और पेटमें जलन की कमी होती है। यकृत की क्रिया अव्यवस्थित होनेसे और यकृतमें रक्ताभिसरण क्रिया बराबर न होनेसे जो बवासीर पैदा होता है, उसमें इसकी जड़को पेटमें देनेसे और इसके तैयार किये हुए रंग को उबालकर अथवा इसके पत्तों को पीसकर लेप करनेसे बवासीर का संकोचन होकर उसका दर्द मिट जाता है। कुक्कुर खांसी और फेफड़े की सूजनमें इसकी जड़ दी जाती है। मज्जा तन्तुओंके ऊपर इसका उपशामक असर होनेसे खांसी की कमी हो जाती है और छोटी रक्तवाहिनियों का संकोचन होनेसे सूजन का जोर भी कम हो जाता है। मज्जातन्तुओं की खराबीसे पैदा हुई हृदय की धड़कनमें भी यह उपयोगी है। पागल कुत्तेके विषमें भी इसकी जड़का काढ़ा उपयोगी होता हुआ देखा गया है। पागल कुत्तेके विषको उतारनेके लिए इसके पत्तों का स्वरस दो औंस की मात्रामें प्रतिदिन सवेरे तीन दिन तक दिया जाता है और इसके पत्तों को पीसकर दंश स्थान पर लेप किया जाता है। इतनी बड़ी मात्रा में इस औषधि को देनेसे रोगी को दस्त होते हैं और उसके सिर में चक्कर आते हैं। पागल कुत्तेके विष की यह चिकित्सा सारे भारतवर्षमें प्रसिद्ध है और इसीसे इसके झाड़ को पागल कुत्ते का झाड़ भी कहते हैं।

चर्मरोगों के अन्दर भी नील एक उपयोगी वस्तु है। शरीर का कोई अंग भंग हो जाने पर नील को पानीमें उबालकर उसका लेप किया जाता है। इस लेपसे जलन और दर्द की कमी होती है और जखम जल्दी भर जाता है। इस लेपसे नवीन चमड़ी पहलेके समान आती है और शरीर पर कोई निशान बाकी नहीं रहता।

एन्सलीके मतसे इसके पत्तों का रस पागल कुत्तों के विष को दूर करनेके लिए बहुत प्रशंसा पा चुका है। इस कार्यके लिए इसका भीतरी और बाहरी दोनों प्रकारसे उपयोग होता है।

इस पौधेसे तैयार किया हुआ एक्स्ट्रेक्ट मृगी और मज्जातन्तुओंके रोगमें दिया जाता है। ब्रोंक्काइटिजमें भी यह उपयोगी है। इससे तैयार किया हुआ लेप फोड़े फुंसी, पुरानेव्रण और खूनी बवासीर पर लाभदायक होता है।

मुण्डा जातिके लोग इसकी जड़के चूर्ण को पानीमें मिलाकर पेशाब सम्बन्धी शिकायतों को दूर करनेके काममें लेते हैं।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे इसके पत्ते पहले दर्जे में खुश्क और दूसरे दर्जे में गर्म होते हैं। यह वनस्पति तिल्ली और जलोदर में लाभदायक है। इसके लगानेसे जखम भर कर सूख जाते हैं। श्वेत कुष्ट पर भी इसका लेप मुफीद है। इसको पानीमें घोलकर बच्चेकी नाभि पर लेप करनेसे दस्त हो जाता है। पेडूपर लेप करनेसे पेशाब हो जाता है। इसको पानीमें मिलाकर गर्म करके बवासीर पर लगानेसे शान्ति मिलती है। बच्चोंको होने वाली जोरदार खांसीमें इसको एक रत्तीकी मात्रामें देनेसे लाभ होता है। इसको एक रत्तीकी मात्रामें ठंडे पानीमें लेनेसे सूजन और फोड़े फुंसी मिटते हैं।

नील और कच्ची धातुओंका विष—

तालीफ शरीफ नामक यूनानीके प्रसिद्ध ग्रन्थमें लिखा है कि अगर किसी व्यक्तिने कच्चा पारा खालिया हो और उसकी वजहसे उसके बदनमें घाव पड़ गये हो और कुष्टकी हालत आ पहुँची हो तो ऐसी हालतमें नीलके एक पेड़को जड़ समेत उखाड़ कर उसके टुकड़े टुकड़े करके पानीमें उबालना चाहिए। जब उसका काढ़ा हो जाय, तब उसमेंसे एक प्याला काढ़ा रोगीको सवेरे भूखे पेट पिला देना चाहिए और उसके पश्चात् प्रति बीस मिनटमें एक एक प्याला पानी उसमें से पिलाते रहना चाहिए। शाम तक उसको इसी प्रकार यह काढ़ा पिलाना चाहिए और खानेको कुछ नहीं देना चाहिए। इस प्रयोगसे उसके शरीरका सब पारा पेशाबके रास्तेसे निकल जाता है। अगर जांच करना हो तो पेशाबको चीनी या तांबेके बर्तनमें एकत्रित करते रहना

चाहिए। थोड़ी देरमें पारा उस बर्तनके नीचे जमा हुआ दिखलाई देगा। इस प्रयोगसे एक ही दिनमें पारेका सब असर नष्ट हो जाता है। मगर यदि जरूरत हो तो दो तीन दिन तक भी इस प्रयोगको कर सकते हैं।

अनाड़ी वैद्योंके हाथसे बहुतसे लोग पारा, रस कपूर, हींगलू इत्यादि वस्तुएं खाकर अथवा चिलमके द्वारा पीकर अपने शरीरकी वेकार हालत कर लेते हैं और अनेक प्रकारके भयंकर चर्म रोग उनके शरीर में पैदा हो जाते हैं। ऐसे लोगों को इस प्रयोगसे जरूरत लाभ उठाना चाहिए।

मात्रा—नीलकी मात्रा आधीसे दो रत्ती तक और इसके घन क्वाथकी मात्रा १ से २ रत्ती तक है।

मुजिर—यह फेंफड़ेके लिए हानिकारक है।

दर्पनाशक—इसके दर्पको नाश करनेके लिए शहद और रुब्बेसूंस (मुलहठीका सत्) उपयोगी हैं।

नीलोफर

नाम—

यूनानी—नीलोफर।

वर्णन—

नीलोफर कमलकी एक जाति है। संस्कृतमें इसको नील कमल कहते हैं। इसका वर्णन इस ग्रन्थके दूसरे भागमें कमलके प्रकरणमें थोड़ा दिया जा चुका है। मगर कुछ यूनानी हकीमों का यह मत है कि बाहरसे जो नीलेफर आता है।उसके गुण कुछ विशेष होते हैं, इसलिए हम यूनानी मतसे इसका थोड़ासा विवेचन यहाँ पर कर देते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मत—यूनानी मतसे इसके तमाम अंग दूसरे दर्जेमें सर्द और तर हैं। सिर्फ इसकी जड़ गर्म और खुश्क होती है। यह दिल और दिमागको ताकत देता है। खांसी और सीनेकी खुश्कीको दूर करता है। इसका फूल सूंघनेसे गर्म प्रकृति वालेके दिल और दिमाग को शान्ति मिलती है, नींद आती है तथा गर्मी से होनेवाला सिर दर्द दूर हो जाता है गलेमें होनेवाले जहर घाज और आंतोंके जखममें भी यह लाभदायक है।

शेख अपने रिसालेमें लिखता है कि गुल नीलो फरका धर्म साधारणत या कपूरके समान है, मगर कपूर खुश्क है और इसमें चिकनापन रहता है। अपनी सुगन्धि की वजहसे यह

दिलको शक्ति देता है और यदि इसको केसर और दालचीनीके साथ दिया जाय तो इसकी यह शक्ति और भी बढ़ जाती है। अगर किसी को स्वप्नदोष होता हो तो इसकी जड़को पीनेसे बन्द हो जाता है। इसके लगातार सेवनसे मनुष्य की कामशक्ति घट जाती है और उसमें नपुंसकता के आसार दिखाई देने लगते हैं। चेचक की बीमारी में भी दाने निकल आनेके बाद इसको देना लाभदायक है, मगर दाने निकलने के पहले नहीं देना चाहिए। दाने निकलने के पहले देने से दाने निकलना बन्द हो जाते हैं और रोगी खतरे में पड़ जाता है।

नीलोफर की जड़ पुराने दस्त और आन्तों के जखममें मुफीद है।

नीलोफरका शर्बत—नीलोफर का शर्बत गर्मीके सिर दर्द, पित्तज्वर और न्युमोनिया में लाभदायक है। यह रोगी की गर्मी को दूर करके उसे शान्ति देता है।

नीलोफर का अर्क—नीलोफर का भभके से खींचा हुआ अर्क गर्मी के सिर दर्द, पित्त ज्वर, चेचक, क्षय, न्युमोनिया, गर्मीसे होनेवाली खांसी, फेफड़े के पर्दे की सूजन और गर्मीसे पैदा हुए पागलपनमें लाभदायक है। नीलोफरके सफेद पत्तों का अर्क दमेके अन्दर बहुत लाभ पहुँचाने वाली वस्तु है।

उपयोग—

अतिसार—नीलोफरके फूल का काढ़ा बनाकर देनेसे अतिसारके दस्त बन्द होते हैं। इसकी जड़का बेलगिरी के साथ काढ़ा बनाकर पिलाने से आंव के दस्त बन्द हो जाते हैं।

हैजा—इसकी जड़ या डण्डी को औटा कर पिलानेसे हैजेमें रुका हुआ पेशाब खुल जाता है।

चर्म रोग—इसके बीजों को पीसकर शहद में मिला कर चाटनेसे पित्तसे पैदा हुए चर्म रोग मिट जाते हैं।

रक्त स्राव—इसके फूल और डंखल को पीसकर फांकने से आंतों या शरीरके दूसरे हिस्सोंसे बहने वाला खून बन्द हो जाता है।

खूनी बवासीर—नीलोफर का शर्बत पिलानेसे खूनी बवासीरमें लाभ होता है।

पसली की सूजन—नीलोफर का शर्बत पिलानेसे पसली की सूजन मिट जाती है।

बालों की सफेदी—नीलोफर के फूलों को दूधमें मिलाकर एक हाण्डीमें भर कर उस हाण्डी का मुंह बन्द करके जमीनमें गाड़ दें। एक महीनेके बाद उसको निकाल कर उस दूध को बिलोकर उसका घी निकाल लें। इस घी को बालों पर लगानेसे सफेद बाल काले हो जाते हैं।

मुजिर—इसका अधिकसेवन मनुष्य की कामशक्ति को नष्ट करता है और दिमाग तथा मसाने को नुकसान पहुँचाता है।

दर्पनाशक—इसका दर्पनाशक गाजर का मुरब्बा और शहद है।

प्रतिनिधि—इसके प्रतिनिधि वनफशा और सफेद खतमी हैं।

मात्रा—इसके फूल की मात्रा १० मासे तक और जड़की मात्रा ३ मासे तक है।

नील निर्गुण्डी

नाम—

संस्कृत—नील निर्गुण्डी, भूतकेशी, इन्द्राणि, मरुपत्नी, नील सिन्दुक, नीभिका, शोफालिका इत्यादि। हिन्दी—नील निर्गुण्डी, उदी सम्भालू काला अडूसा। बंगाल—जगतमदन, जोगमोदन। बम्बई—काला अडूलसा। मराठी—बाकस, काला अडूसा। फारसी—वानजान गश्तेश्याह। तामील—करुनोची, वदेकुट्टी। तेलगू—गन्धरसामृ, नल्लनोचिल्ली। लेटिन—Jy. ticia Gend rus8 (जस्टिकिया, गेण्डेरुसा)।

वर्णन—

यह बहु वर्षायु वृक्ष करीब तीन-चार फीट ऊंचा होता है। यह बगीचोंमें रास्तोंके आस पास लगाया जाता है। इसकी शाखाएं बारीक लम्बी और काले रंग की होती हैं। बरसातमें इसके फूल आते हैं। यह वनस्पति जब छोटी होती है तब बहुत तीव्र होती है। औषधि प्रयोगमें इसके पत्ते काममें आते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक—आयुर्वेदिक मतसे यह वनस्पति गरम, तीक्ष्ण, ज्वरनाशक, कफ निस्सारक, वामक, रेचक, कड़वी, खुश्क और उष्णवीर्य होती है। ब्रोंकाइटीज, सूजन, अजीर्ण, नेत्ररोग, ज्वर, कर्णप्रदाह इत्यादि रोगोंमें यह लाभदायक है।

तीव्र कफ रोगोंमें इसके दो से लेकर चार तक पत्ते डेढ़ मासे अपामार्ग की राख और एक तोला शहदके साथ मिलाकर देते हैं। निमोनियामें इसके चार पत्तों का रस सहंजना की छालके रस, नमक और शहद के साथ मिलाकर दिया जाता है। ज्वर और जीर्ण आमवात में इसको देनेसे पसीना होता है। यह औषधि बहुत उग्र है। इसको देने से दस्त और

उलटी होते हैं। इसलिए वालक बुड्ढे और कमजोर लोगों को यह न देना चाहिए। इसकी शान्तिके लिए चावलों में घी डालकर खाना चाहिए।

इसके पत्ते पसीना लानेवाले होते हैं और ये प्राचीन सन्निपातमें काढ़ा वनाकर दिये जाते हैं। इसके पत्तोंसे एक प्रकारका तेल तैयार किया जाता है और वह एक्जिमा पर बाह्य उपचारके काममें लाया जाता है। इसके पत्तोंका शीतनिर्यास, मस्तकशूल, अर्धाङ्ग, और अर्दित या मुँहके ऊपर होनेवाले लकवेके लिए लाभदायक है।

इसके ताजे पत्तोंका रस कर्णशूलको दूर करनेके लिए कानमें टपकाया जाता है और आधा शीशीको दूर करनेके लिए नाकमें टपकाया जाता है।

मैडागास्करमें यह वनस्पति विशेषकर सन्धियोंकी सूजनमें उपयोगी मानी जाती है इसकी जड़को दूधमें गर्म करके सन्धिवात, रक्तातिसार और कामला रोगमें पिलाते हैं।

नील चम्पक

नाम—

संस्कृत—नील चम्पक, हरा चम्पक। हिन्दी—हरा चम्पा, विलायतीचम्पा। वम्बई—विलायती चम्पा। दक्षिण—मदमाती। तैलगू—मनोरंजनी, दम्। लेटिन—Artabotrys Odoratissimus. (आरटेवोट्रीज् ओडोरेटिसिमस)।

वर्णन—

यह एक झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसके पत्ते १८ सेंटीमीटर लम्वे और ३.८ से ५ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल पीले रंगके खुशवूदार होते हैं। यह वनस्पति दक्षिणी भारत और सीलोन में पैदा की जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक इसके फूल तीक्ष्ण, कड़वे, गरम और वमन, पित्तप्रकोप, रक्तविकार, हृदय रोग, खुजली, प्यास, सिरदर्द, धवल रोग, मूत्राशय सम्वन्धी रोग और अग्निविसर्प रोगमें लाभदायक हैं।

मलायामें इसके पत्तोंका काढ़ा हैजेके रोगीको शान्तिदायक वस्तुकी तरह पिलाते हैं।

नीलकंठी

वर्णन—

यह एक छोटी जातिकी वनस्पति है। इसके पत्ते खुरदरे, फूल नीले और जड़ नीली होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जेमें गर्म और खुश्क है। खून के उपद्रवको मिटाती है, खुजलीको दूर करती है, प्लेगमें इसका काढ़ा बनाकर पिलाना और गिल्टी पर इसका लेप करना मुफीद है। श्वेतकुष्ठ, चर्मरोग, उपदंश, सन्धियोंकी सूजन और पुरातन ज्वरमें यह लाभदायक हैं। रक्तशुद्धि के लिए इसका उपयोग करते समय रोगी को नमक न खाने देना चाहिए।

मात्रा—इसकी मात्रा ४ माशे तक है।

नीलम

वर्णन—

यह एक जवाहिरात होता है, जिससे अंगूठीके नग, गले के हार इत्यादि वस्तुएँ बनती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदके मत से नीलमकी भस्म गर्म, कड़वी और दमा, खांसी, पित्त, कफ, रक्तके उपद्रव, विषम ज्वर और बवासीरमें लाभदायक है। यह वीर्य्यशक्ति और पाचनशक्तिको बढ़ाती है।

यूनानी मत—

यूनांनी मत से यह पहले दर्जेमें गर्म और तीसरे दर्जेमें खुश्क है। इसके सेवन से नेत्रोंकी ज्योति बढ़ती है, विषके उपद्रव दूर होते हैं, मस्तिष्कको शक्ति मिलती है यह भय और पागलपनमें लाभदायक है तथा तबियत में प्रसन्नता पैदा करनेवाली है।

निलाई सेदाची

नाम—

संस्कृत—भिसट्टा, ओखराड़ी, तड़ागामृत । काठियावाड—ओखराड । तामील-नीलाई सेदाची । तेलगू-नेनासरी,राजूमां । लेटिन-Polycarpea Corymbosa. (पोलीकारपिया कोरीम्बोसा)

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे यह वनस्पति मूत्रकृच्छ्र, मूत्रनालीकी पथरी, फोड़ा, जलनयुक्त सूजन और व्रण रोगमें उपयोगी है। इसकी भस्म गोल मिर्चके साथ मिलाकर जखम और व्रण पर लगायी जाती है। इसकी पत्तियां पीसकर गर्म या ठंडी हालतमें, जखम या जलनयुक्त सूजन पर पुल्टिस बांधनेके काममें ली जाती हैं।

पुडुकोटामें यह वनस्पति विषैले सांपोंके दंशके विकारको दूर करने के लिए बाहरी और भीतरी दोनों उपायोंसे प्रयोगमें ली जाती है। पोरबन्दरमें इसकी पत्तियोंको पीसकर जानवरोंके काटे हुए अंगस्थलों पर लगाते हैं और कामला या पाण्डु रोगमें गुडके सीरेके संयोगसे इसकी वटी बनाकर सेवन करते हैं ।

मलाया में इन वनस्पतिके पौधेको दूकानों पर सजावटके रूपमें रखते हैं तथा शान्ति दायक और स्तम्भक औषधिके रूपमें भी इसे लेते हैं।

कैस और महस्करके मतानुसार यह वनस्पति सर्पविषके लिए भीतरी और बाहरी दोनों दृष्टियोंसे बिलकुल निरुपयोगी है।

निसोमली

नाम—

संस्कृत—मिरोमति, निसोमलि, ग्रन्थितृण । हिन्दी—निसोमलि, मचोटी, वनेलिया, इन्द्राणी, केसरी । बंगाल—मचूटी । मराठी—मचूटी । पंजाब—मचूटी, केसरू, वन्दूक । काश्मीर—द्रोब । अंग्रेजी—Knot grass (नाट ग्रास) लेटिन—Polygonum Aviculare (पोलीगोनम, एवीक्यूलेरी) ।

वर्णन—

यह एक क्षुद्र जातिकी वनस्पति होती है। इसकी जड़ कठोर और लम्बी होती है और

इसकी जड़के अन्दर बहुतसी उपशाखाएं रहती हैं। यह वनस्पति जमीन पर फैली हुई रहती है। इसकी शाखाओं में बहुतसे जोड़ होते हैं। हर एक जोड़ पर पत्ते लगे हुए होते हैं। ये पत्ते एक इंचकी अपेक्षा कुछ छोटे, शल्याकृति और अखण्ड होते हैं। इसके फूल रंग-बिरंगे होते हैं। इसके बीज तिकोने, काले और चमकदार होते हैं। इनको सिन्धमें ,बीजबन्द कहते हैं। यह वनस्पति काश्मीरसे कुमाऊँ तक ६ हजार फीटसे १२ हजार फीटकी ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की जड़ें संकोचक, मूत्रल, आनुलोमिक, ज्वरनाशक, कफनाशक और रक्त स्राव रोधक होती है। इसके बीज मृदु विरेचक, मूत्रल, उदरशूल नाशक और मूत्राशयके दर्दमें उपयोगी होते हैं। पथरी और मूत्रकृच्छ्रमें इसकी जड़के रससे और इसके पंचांगके काढ़ेसे बहुत लाभ होता है। इन रोगोंमें यह औषधि बड़ी मात्रा में दी जाती है। प्राचीन अतिसारमें इसके पंचांग का रस उपयोगी होता है। विषम ज्वर में इसकी जड़ का रस मुफीद है। श्वासनलिका की सूजन और कुक्कुर खाँसीमें इसके पंचांग का काढ़ा बनाकर देनेसे लाभ होता है।

चुम्बा में इसकी सुखाई हुई जड़ वेदना या शूल दूर करनेके लिए बाहरी उपचारके तौरसे काममें ली जाती है। काश्मीरमें इसके बीजों को वमनकारक और पेट साफ करनेवाली औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।

इस वनस्पति को यूरोपके लोग संकोचक औषधि मानते हैं। इसका निर्यास अतिसार और बच्चों की गर्मीके दिनों की बीमारी में लाभदायक सिद्ध हो चुका है।

इसका समूचा पौधा चीन देशमें शान्तिवर्धक, वक्ष रोग नाशक, संकोचक, पौष्टिक और मूत्रल औषधिके रूपमें काममें लिया जाता है। मलायाके लोग सुजाक रोगमें इसका प्रयोग करते है।

नुल

नाम: —

मराठी—नुल, पव्वा, पलारा। बंगाल—चिक्रासी, दलमारा, पव्वा। बम्बई—पभा। आसाम—बोगापोमा। तामील—अगिल, कन्दमलाई, कुलीमट्ठी। तेलगू—इट्टपोगाड़ा। लेटिन—Chukrasia Tabularis (चक्रेसिया टेब्यूलेरिस)।

वर्णन—

इसके वृक्ष बहुत बड़े होते हैं और पत्ते डंठल के दोनों तरफ लगे रहते हैं। इसमें नर

और मादा दोनों तरहके फूल लगते हैं। ये फूल बहुत ही सुन्दर होते हैं। यह वनस्पति सिकिम, चटगांव, वरमा और पश्चिमीघाट में पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पति की छाल एक प्रभावशाली संकोचक द्रव्य है। यह अतिसार को बन्द करनेके लिए इण्डोचायना में वहुत उपयोगमें ली जाती है।

नुका चीनी

नाम :—

वम्बई—नुका चीनी। तेलगू—बोदासरम, गुण्टाकमी नामू। लेटिन—Stemodia Viscosa (स्टैमोडिया विस्कोसा)।

वर्णन—

यह वनस्पति मध्य और दक्षिणी भारतमें पायी जाती है। इसके वृक्ष ऊंचे और सुगन्धित होते हैं और इसमें वहुतसी शाखाएं फैलती हैं। इसके पत्ते लम्बे और विखरे हुए रहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

इसका सूखा पौधा कुछ सुगन्धित और लुआवदार होता है। इसका शीतनिर्यास बंगालके अन्दर एक शान्तिदायक औषधि के रूपमें लिया जाता है।

नूलक्षिणा

नामः—
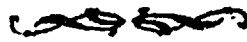
वंगाल—नूलक्षिणा। हिन्दी—ओदाम्रिनी। लेटिन—Smithia Sensitiva (स्मीथिया सेन्सेटिवा)।

वर्णन—

यह वनस्पति सारे भारतवर्षमें पैदा होती है यह एक किस्म का पौधा है जिसकी शाखाएं होती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

मेडागास्करमें इसके पौधे का लोशन बनाकर सिर दर्द को दूर करनेके काममें लिया जाता है।
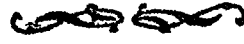
नेत्रबाला (सुगन्धबाला)

नाम :—

संस्कृत—अम्बुनामका, बाला, सुगन्धवाला, बृहिष्ठा, ललनाप्रिय, तोया इत्यादि। हिन्दी—सुगन्धबाला, नेत्रबाला। बंगाली—गंधवाला। गुजराती—कालोवालो। मराठी—कालावाला। फारसी—असारून। लेटिन—Pavonia Odorata (पेवोनिया ओडोरेटा)।

वर्णन—

इसके वृक्ष सिन्ध, कच्छ, गुजरात और लंकामें पैदा होते हैं। इसके पत्ते गोल, तीन खाने वाले और कंगूरेदार होते हैं। इसके फूल शाखाओंके सिरे पर झुमकों में लगते हैं। ये हलके गुलाबी रंगके होते हैं। इसके बीज खाकी रंगके और तेलसे भरे हुए रहते हैं। इसकी जड़ ७ से ८ इंच तक लम्बी और पाच इंच मोटी होती है। इस जड़के ऊपर बारीक बारीक बहुत तन्तु लगे हुए रहते हैं। इस जड़में कस्तूरीके समान गन्ध आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—भावप्रकाशके मतसे सुगन्धवाला शीतल, रूखी, हलकी, दीपन, पाचक और वमन, मतली, अरुचि, हृदय रोग, आमातिसार और विसर्प रोगमें लाभदायक है।

निघण्टु रत्नाकरके मतानुसार सुगन्धवाला शीतल, कड़वी, बालोंको सुन्दर करने वाली पाचक, मधुर, दीपन, हलकी, रूखी तथा कफ, पित्त, वमन, तृषा, कुष्ठ, अतिसार, ज्वर, श्वास, अरुचि, व्रण, विसर्प, हृदयरोग, रक्तविकार, रक्तपित्त, कण्डु और दाहको नष्ट करती है।

इसका पौधा सुगन्धित होता है। इसके अन्दर ठंडे और अग्निवर्धक तत्व मौजूद रहते हैं। यह ज्वर, सूजन और भीतरी अवयवोंसे होने वाले रक्तस्रावको बन्द करता है। रक्तातिसार के रोगमें यह एक संकोचक और पौष्टिक वस्तुकी तरह दिया जाता है।

लास बेलामें इसका पौधा गठिया और सन्धिवातको मिटानेके काममें लिया जाता है।

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जे में गर्म और खुश्क होती है। स्वादमें यह चरपरी, कुछ कड़वी, तेज और खुशबूदार होती है। यह भूख बढ़ाने वाली, पाचक और कफ, पित्त, वमन

और खुजलीको दूर करने वाली होती है। पित्तकी सूजनको भी यह बिखेर देती है। शरीरके भीतरी अंगोंसे होने वाले रक्तस्रावको यह बन्द करती है। इसको बेलगिरीके साथ लेनेसे आंवके दस्त बन्द होते हैं। शक्कर और शहदके साथ इसको चटाकर ऊपर चावलोंका पानी पिलानेसे बच्चोंकी खांसी और खूनके दस्त बन्द हो जाते हैं। दो तोला नेत्रबालाका क्वाथ बनाकर प्रतिदिन पिलानेसे और पथ्यमें अरहरकी दालकी खिचड़ी अथवा चावल खिलानेसे संग्रहणी और अतिसारमें लाभ होता है। इसको बकरीके दूधमें घिसकर कामेन्द्रिय पर लेप करनेसे शिथिलता दूर होती है। चेचक निकलनेके पहले इसको नींबूके रसमें पीसकर चटानेसे चेचक का जोर अधिक नहीं रहता। पित्त ज्वरमें इसको देनेसे शान्ति मिलती है इसके क्वाथमें शक्कर मिलाकर देनेसे पेशावकी जलन बन्द हो जाती है। इसके सेवनसे खूनकी गर्मी भी शान्त होजाती है। गर्मी से होने वाले सिर दर्द में इसका लेप करनेसे और इसको पानीमें भिगो कर उस पानी को पिलानेसे सिर दर्द मिट जाता है। शरीरमें होने वाली जलनको भी यह दूर करती है।

मात्रा—इसकी मात्रा १ माशेकी है।

नेपारी

नाम—

कुमाऊँ—नेपारी। गढ़वाल—कस्तूरी। लेटिन—Delphinium Brunonianum, (डेलफीनियम ब्रूनोनियानम)।

वर्णन—

यह सीधी खड़े रहनेवाली एक वनस्पति है। इसके तने चिकने और नीचेकी ओर झुके हुए रहते हैं तथा ऊपरके हिस्सेमें गांठें रहती हैं। इसके पत्तोंका अग्रभाग नोकदार होता है और उनके डंठल बहुत लम्बे होते हैं। इसके फूल बड़े बड़े, धुन्धले नीले रङ्गके और रोयेंदार होते हैं। अलपाइन अंचल और पश्चिमी तिब्बतमें यह वनस्पति पायी जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इस वनस्पतिकी पत्तियोंका रस कुर्रममें जानवरोंकी खास करके भेड़ोंकी बिमारियोंको नष्ट करनेके काममें लेते हैं। लीहमें लोग इसको विषाक्त समझते हैं और उनका कहना है कि इस वनस्पतिके पत्तोंसे टपकी हुई ओस जिस घास पर पड़ती है उसे खानेसे पशुओं और घोड़ों पर जहरका असर होता है।

नेमुक

नाम—
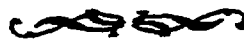
संस्कृत—पाठा, अम्वष्ठा, वनतिक्तिका। हिन्दी—नेमुक। वंगाल—आकनांदि, नेमुक। मराठी—आकनादि। लेटिन—Cissampelos Hexandra. (सिसेम्पेलोस हेक्भाण्ड्रा)।

वर्णन—

यह वेल विशेषकर वंगालमें और कोकण तथा लंकामें भी पैदा होती है। यह वहुत नाजुक और पराश्रयी लता होती है। इसके पत्ते गोल, छाल फीके रंग की, फूल छोटे और हरापन लिये हुए सफेद होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति काली पहाड़ या पहाड़वेलकी ही एक उपजाति है और इसके गुणदोप भी पहाड़वेलके ही समान होते हैं।

नेपाल टुन्थ

नाम—

वंगाल—नेपालटुंथ। दक्षिण—वनदाग। मद्रास—तेनमारम्। तामील—रुद्रसाम, तेनवेचांई टेंगाई। तेलगू—रुद्राक्ष। अंग्रेजी—Honey fruit tree. (हनीफ्रूटट्री) लेटिन—Guazuma Tomentosa. (गभूमा टोमेंटोसा)

वर्णन—

इस वनस्पतिके पत्ते कुछ लम्बाई लिये हुए, गोलाकार, पानके आकारके तथा नोकदार एवं दांतेदार होते है। इसके फूल छोटे और पीले रंगके होते हैं और इनमें ५ पंखड़ियाँ होती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

इसकी छाल पौष्टिक एवं शान्तिदायक औपधिके वतौर काममें ली जाती है। वेस्ट इण्डीज के लोग इसकी भीतरी छालको श्लीपद या फीलपांवके रोगको दूर करनेके काममें लेते हैं। इसकी पुरानी पत्तियोंसे बने क्वाथको लोग पसीना लाने वाला और चर्मरोग तथा छातीकी बीमारीको दूर करने वाला मानते हैं।

नेलापोन।

नाम—

तेलगू—नेलापोना । मुण्डारी—बिरबिरी । संथाल—पट्टुआ घास । लेटिन—Cassia Mimosoides (केसिया मीमोसोइडस) ।

वर्णन—

यह वर्ष जीवी पौधा २० से ६० सेण्टीमीटर तक ऊंचा होता है, साधारणतः सीधे तौर से बढ़ा हुआ पर कभी कभी फैला हुआ भी होता है, इसके डंठलों और शाखाओं में कुछ रोएं भी रहते हैं। डंठलके दोनों ओर पत्ते लगे रहते हैं। जो ५ से १० सेण्टीमीटर तक लम्बे होते हैं। फूल एकसे तीन तक एक साथ लगे रहते हैं। इसके डंठल ऊबड़ खाबड़ १.३ से २.५ सेण्टीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसकी कलियाँ ५ से ६.५ मिली मीटर तक लम्बी होती हैं। फूलकी पंखडियाँ ४.५ से ६.५ सेंटीमीटर तक लम्बी गोलाकार होती हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष और सीलोनमें भी पायी जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

सन्थाल जातिके लोग इसकी जड़ को पेट की मरोड़ अच्छा करनेके काममें प्रयोग करते हैं। छोटा नागपुरके मुण्डा लोग घोंघेके साथ इसकी जड़को पीसकर बेहोशी या मूर्च्छा दूर करने के उपयोगमें लेते हैं।

नेलमचचेला

नाम—

कनाड़ी—नेलमचचेला । लेटिन—Gymnosticyum Febrifugum (जम्नास्टिकम फेब्री फुगम्) ।

वर्णनः—

यह वनस्पति मद्रास प्रान्त, पश्चिमी तट और पश्चिमी घाट, दक्षिणी कनाड़ा, मालाबार और ट्रावनकोरमें पायी जाती है। इसमें तनों का प्रायः अभाव रहता है। इसके पत्ते गोलाकार १६.५ सेंटीमीटर लम्बे और ७.५ सेंटीमीटर चौड़े होते हैं। फूल डण्ठलके दोनों तरफ लगते हैं उनका भीतरी हिस्सा चिकना होता है।

गुण दोष और प्रभावः—

इसकी जड़ ज्वर नाशक औषधि के बतौर काममें ली जाती है।

नौलाईदाली

नामः—

तामील—नीलाई दाली। तेलगू—अनेपू, जनुपोलारी। मराठी—आमटी। लेटिन—Antidosma Bunius (ऐण्टीडेस्मा बुनियस)।

वर्णनः—

यह एक हमेशा हरा रहने वाला छोटी जाति का वृक्ष होता है। इसकी छाल कुछ भूरापन लिये हुए बदामी रंग की होती है। इसके पत्ते ७.५ से १८ सेण्टीमीटर तक लम्बे और ३.२ से ६.३ सेण्टीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल कुछ ललाई लिये हुए रहते हैं। ये नर और मादा दोनों तरह के होते हैं। यह वनस्पति नेपाल, आसाम, बरमा और छोटा नागपुरमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

क्लिण्डलेके मतानुसार इसके पत्ते सर्पदंशके उपचारमें काम आते हैं। इन पत्तों को उबाल कर इनका काढ़ा उपदंशसे होने वाली धातु विकृति को दूर करनेके लिये दिया जाता है।

नौसादर

नामः—

संस्कृत—क्षारश्रेष्ठ, अमृतसार, चूलिका लवण, नरसार इत्यादि। हिन्दी—नौसादर। बंगाल—निसादल। मराठी—नौसागर। गुजराती—नौसार। लेटिन—Amonium Chloridum (एमोनियम क्लोरिडम)।

वर्णन—

यूनानी हकीमोंके मतसे नौसादर तीन प्रकारका होता है।

(१) पहला वह जो खनिज द्रव्यों की तरह खदानोंसे निकलता है। अफ्रीका वगैरह गर्म मुल्कों में इसकी खदानें है और वहाँ से इसके टुकड़े सोरे की तरह निकलते हैं।

(२) अंजुमन अराए नासरीमें लिखा है कि दमदांन शहर में पानीके नालेसे यह पानी के साथ निकलता है। इस पानीको जोश देनेसे इसके सफेद टुकड़े जम जाते हैं। खुरासान बुखारा और समरकन्दमें भी इसके सोते हैं।

(३) टट्टी पेशाव वगैरह की गन्दगी जलाने से भी नौसादर वनता है। यह पहले खाकी रंग का होता है, साफ करने के वाद सफेद और चमकदार हो जाता है।

डाक्टर लोग नमक के तेजाव को पानीमें घोल कर उसमें कार्वोनेट आफ एमोनियम मिलाकर गर्मी के जरिए सुखा लेते हैं अथवा सलफ़ेट आफ एमोनिया और नमक को मिला कर वनाते हैं।

ऊपरके तीनों प्रकार के नौसादरों में खनिज नौसादर को यूनानी हकीम उत्तम मानते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत – आयुर्वेदिक मत से नौसादर तीक्ष्ण, सारक, व्रण विदारक, वहुत उष्ण, गुल्मनाशक और कब्जियत, उदर रोग, शूल, यकृत् रोग, प्लीहा रोग, ज्वर, सिर दर्द, स्तन रोग, रक्तपित्त, खांसी और योनि रोगमें लाभदायक है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जेके आखिरमें गर्म और खुश्क है। गिलानीके मत से तीसरे दर्जेमें गर्म और खुश्क है। यह पाचक है। आमाशयके खराव दोषों को दूर करता है और बढ़ी हुई तिल्ली को ठीक करता है। पेट की वायु और आफरे को मिटाता है। भूख वढ़ाता है शरीरके किसी भी अंगसे होने वाले रक्तश्रावको वन्द कर देता है। इसको आंखमें लगानेसे आंखका जाला फट जाता है, इसके लोशनको जखमपर रखनेसे जखम भर जाता है। इसके लेप जहरवाज पर करनेसे लाभ होता है। किसी भी प्रकारके जहरका असर ४ माशा नौसादर खानेसे दूर हो जाता है। इसको पानीमें घोलकर मकानमें छिड़कनेसे मकानमें सांप नहीं आता।

अधिक मात्रामें यह एक विप है। १० मासे की मात्रामें खानेसे इसका जहरीला असर दिखलाई देने लगता है। इससे मनुष्यका आमाशय और आंतें विकृत हो जाती हैं। इसके विषको दूर करनेके लिए घी और दूध पिलाना, वमन कराना तथा ठण्डी और शान्तिदायक दवाईयां पिलाना और चिकनी खुराक खिलाना मुफीद है।

एलोपैथिक डाक्टरोंके मतसे मोच खाये हुए और लचके हुए स्थानपर, टूटी हुई हड्डी पर, उतरे हुए जोड़ों पर, जमे हुए खून पर और सन्यास (Apoploxy) रोगमें इसका लेप

करनेसे लाभ होता है। खास कर जब स्त्रियोंके स्तनों पर फोड़ा उठने वाला हो तो वहाँ पर इसको लगाने से बहुत लाभ होता है। इसको सुंघानेसे, गला, श्वासनाली और फेफड़े के ऊपर की झिल्लीमें रक्त प्रवाह की गति बढ़ जाती है। गले की पुरानी सूजन, भोजन निगलनें की नलीकी सूजन, तथा खांसी और कानके भीतरकी सूजनमें इसका उपयोग लाभदायक होता है।

उचित मात्रामें यह धातु परिवर्तक, शान्तिदायक, मूत्रल और मासिक धर्म लाने वाला है। हाजमे को बढ़ाता है, यकृत् की वृद्धि, सूजन और शिथिलता को दूर करता है। पुरानी खांसी, और निमोनिया की पिछली स्टेजमें इसको रव्वेसूस और स्प्रिट आफ ईथरके साथ देनेसे लाभ होता है। जुकाम के बाद होने वाली खांसीमें इसके टुकड़े को मुंहमें रखकर चूसने से बहुत लाभ होता है। जोड़ोंके दर्द में भी यह एक उत्तम शान्तिदायक वस्तु है।

हिस्टीरिया और गर्भाशयकी विकृतिसे होनेवाले सिरदर्दमें यह लाभदायक है। यकृत की खराबीसे होनेवाले जलोदरमें इसको दूसरी मूत्रल औषधियोंके साथ देनेसे बड़ा लाभ होता है। स्त्रियोंके रुके हुए मासिक धर्मको खोलनेके लिए इसको १० ग्रेनकी मात्रामें दिनमें तीन बार दिया जाता है। फेंफड़े, आमाशय और गर्भाशयसे होनेवाले रक्तस्रावमें भी इसे देते हैं। स्त्रियोंके स्तनोंमें दूध रुक जानेसे या और किसीं वजहसे सूजन आ जाय तो उसे दूर करनेके लिए भी इसकी प्रयोग लाभदायक होता है। बच्चोंके अण्डकोष (पोतों) में अगर पानी भर जाय तो दो ड्राम नौसादरको एक औंस पानीमें मिलाकर उस लोशन को लगाने से लाभ होता है।

उपयोग:—

नारू—नारूकी सूजन पर इसका लेप करनेसे और इसको ५-६ रत्तीकी मात्रामें खिलानेसे नारू जल्दी निकल जाता है।

श्वासनलिकाके रोग—इसको पानमें रखकर खिलानेसे श्वास नलिकाके रोग मिटते हैं।

आधा शीशी—इसको ५ से १० रत्ती तककी मात्रामें तीन चार दिन तक देनेसे आधा शीशी मिट जाती है।

सिर दर्द—इसको एक माशे की मात्रा में तीन तीन घण्टे के अन्तर से तीन बार लेने से सिर दर्द मिट जाता है।

तिल्लीकी वृद्धि—घीगुवारके गूदा पर नौसादरका चूर्ण भुरभुराकर खिलाने बढ़ी हुई तिल्ली कट जाती है।

आवाजका बैठ जाना—इसको कुलंजनके साथ पानमें रखकर खिलानेसे बैठी हुई आवाज सुधर जाती है।

कुक्कुर खांसी—अडूसेके काढ़े पर इसका चूर्ण भुरभुराकर पीनेसे कुक्कुर खांसी मिटती है।

मूत्रनालीके रोग—इसको गोखुरूके काढ़े पर भुरभुराकर पीनेसे मूत्रनालीके रोग मिटते हैं।

आधा शीशी—इसको कुटकीके साथ पीसकर सिर और कनपटियों पर लेप करनेसे आधा शीशी मिटती है।

यकृत सम्बन्धी रोग—इसको ५ रत्तीकी मात्रामें दिनमें ३ बार देनेसे यकृत् सम्बन्धी कई रोग दूर होते हैं।

दांतका दर्द—इसको ज्वारके दानेके बराबर लेकर रूईमें रखकर दांतके खड्डेमें दबा देनेसे दांतका दर्द फौरन मिट जाता है।

मोतिया बिन्द—इसको बारीक पीसकर सलाईसे आंखमें आंजनेसे मोतियाबिन्द जाता रहता है। नौसादर और फिटकिरी इन दोनोंको बारीक पीसकर आंखमें लगानेसे आंखके सब रोग आराम होते हैं।

ज्वर - तीन रत्ती नौसादर और दो काली मिर्च पीसकर बुखार चढ़नेके पहले देने से बुखार रुक जाता है।

श्वेत कुष्ठ—नौसादरके चूर्णको शहदके साथ पीसकर लेप करनेसे श्वेत कुष्ठमें लाभ होता है।

आधा शीशी—दो रत्ती नौसादरको दो रत्ती काले दानेके साथ पानीमें पीसकर नाकमें टपकानेसे आधा शीशी आराम होती है।

बिच्छूका विष—नौसादरको हड़तालके साथ पीसकर डंक पर लगानेसे बिच्छूका जहर उतर जाता है। नौसादर, चूना और सोहागा इन तीनोंको बारीक पीस कर सूंघनेसे भी बिच्छूका जहर उतर जाता है।

तिल्लीकी सूजन—पौने दो माशे नौसादर को मूलीके रसके साथ पीनेसे तिल्लीकी सूजन कट जाती है।

बनावटें—

एमोनियाकार्ब—

नौसादर और कलीके चूनेको समान भाग लेकर एक मजबूत बूचवाली शीशीमें भरकर अच्छी तरह मिलाकर रख देना चाहिए। इसको एमोनिया कार्ब कहते हैं। इसको सूंघनेसे हर तरहका सिर दर्द, आधा शीशी, हिस्टीरिया, बेहोशी, मूर्छा, उन्माद, भूत बाधा इत्यादि रोगों

में आश्चर्य जनक लाभ होता है। जिन स्त्रियों को भूत बाधाका दौरा आता है उनको यह वस्तु सुंघाते ही दौरा मिट जाता है। बिछूके विषमें भी इसको सुंघानेसे लाभ होता है।

नमक सुलेमानी—नौसादर १ तोला, यवक्षार १ तोला, सेंधा नमक १ तोला, सफेद मिर्च २ तोला, इन सब चीजोंको बारीक पीसकर बोतलमें भरकर रख देना चाहिए। इसको डेढ़ माशेसे २ माशे तककी मात्रामें गर्म पानीके साथ देनेसे हरप्रकारका उदरशूल, वायुगोला, चूंक इत्यादि उदर रोग तत्काल दूर होते हैं।

मुजिर—इसको अधिक मात्रामें अधिक दिन तक सेवन करनेसे यकृत और आंतोंको बहुत नुकसान पहुँचता है।

दर्पनाशक—दूध, गायका घी और बदामका तेल।

प्रतिनिधि—यवक्षार।

मात्रा—४ रत्तीसे १५ रत्ती तक।

नोनगेनम पिल्लु

नाम—

तेलगू—नोनगेनम पेल्लू। लेटिन—Oldenlandia Heynii. (ओल्डेन लेण्डिया हेनी)।

वर्णन—

यह एक छोटी जाति का पौधा होता है जिसकी बहुत डालियां होती हैं। इसके पत्ते १ से लेकर ३.२ सेंटीमीटर तक लम्बे और .८ से ३ मिलीमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति भारतवर्षके मैदानों में पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

कोमानके मतानुसार इस वनस्पतिका काढ़ा अथवा इसका प्रवाही एक्स्ट्रेक्ट मलेरिया ज्वर के साधारण केसों में और स्वल्पविरामी ज्वर में अजमाया गया और उसका परिणाम सन्तोषजनक रहा।

नेर

नाम—

पंजाब—नेर, वेरू, शालंगली । गढ़वाल—नेर । रानीखेत—नेरा । कुमाऊँ—नेहर, गुलपिटा । लेटिन—Skimmia Laureola. (स्कीमिया लौरोला) ।

वर्णन—

यह एक हमेशा हरी रहनेवाली झाड़ी होती है। इसकी छाल बहुत चिकनी और मुलायम होती है । इसके पत्ते शाखाओंके सिरे पर लगते हैं। इसके सभी हिस्से सुगन्धित होते हैं। इसके पत्ते ७.५ से १५ सेंटीमीटर तक लम्बे और २ से लेकर ३.८ सेन्टीमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में काश्मीर से लेकर मिश्मी तक ६०:० फीट से १०००० फीट की ऊँचाई तक और खासिया पहाड़ियों में ५००० से लेकर ६००० फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है ।

गुणदोष और प्रभाव—

काश्मीरके अन्दर इसके जलते हुए पत्तोंका धुँआ हवाको शुद्ध करनेवाला माना जाता है। इस वनस्पति के पत्तों से वाष्पीकरण क्रिया के द्वारा एक प्रकार का उड़नशील तेल प्राप्त किया जाता है।

—

पद्माक

नाम—

संस्कृत—पद्माक, मलय, चारु, तीतरक्त, सुप्रभा, पद्मकाष्ठ, कैदार, शीतवीर्य इत्यादि। हिन्दी—पद्माक। वंगाली—पद्मकाष्ठ। मराठी—पद्मकाष्ठ। गुजराती—पद्माक, पद्मकाठीं पंजाब—चमियारी, अमलगुच्छ, पदम, पाजिया। कुमाऊँ—पदम, पेया। वम्बई—पद्मकाष्ठ। वरमा—पेनी। इंग्लिश—Himalayan Cherry. (हिमालयन चेरी) लेटिन—Prunus Puddum. (प्रूनस पद्म) Prunus Cerasoides. (प्रूनस सेरोसोइडस) ।

वर्णन—

यह एक मध्यम आकारका बड़ा वृक्ष होता है। इसकी छाल गोलाकारमें निकलती है और भीतर की लकड़ी धुँधली ललाई लिये हुए रहती है। पत्तियां चिकनी, गोल और

तीक्ष्णधार वाली होती है। इसके फूल सफेद और कुछ गुलाबी रंग लिये हुए होते हैं और पत्तियोंके सिरे पर खिलते हैं। इसके फल पीले और लाल रङ्ग के होते हैं और १.३ से २ सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं। इनका स्वाद खट्टा होता है। यह वनस्पति हिमालय में सतलज से लेकर सिक्किमतक २५०० से लेकर ७००० फीट की ऊँचाई तक और खासिया पहाड़ियोंमें ४ हजार फीटसे ५००० फीटकी ऊँचाई तक होती है।

पद्माकके नामसे इस वृक्षकी डालियों और जड़ोंके छोटे छोटे टुकड़े बाजारमें बिकते हैं। इनकी छालका रङ्ग काला होता है और इनको हाथ पर घिसनेसे बहुत मधुर सुगन्ध आती है। यह औषधि अधिक दिन तक पड़ी रहनेसे खराब हो जाती है, इसलिए इसको ज़्यादा पुरानी नहीं लेना चाहिए।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे पद्माक कसेला, कड़वा, शीतल, वातकारक, हलका तथा विसर्प, दाह, विस्फोट, कुष्ठ, कफ और रक्त पित्तको नाश करता है, गर्भको स्थापन करता है, रुचिको उत्पन्न करता है, वमन प्यास और घावमें लाभदायक है। इसको घिसकर पीनेसे जिन स्त्रियोंको गर्भ न रहता हो, उनको गर्भ रह जाता है, और जिनका गर्भ गिरता हो, उनका स्थिर हो जाता है।

पद्मकाष्ठकी छालमें हाइड्रोसाइनिक एसिड नामक एक बहुत घातक विषका अंश पाया जाता है। इस विषकी क्रिया मनुष्यके शरीरके सब अवयवों पर और खास करके जीवनीय केन्द्र स्थान पर उपशामक रूपमें होती है, जिसके परिणाम स्वरूप श्वासोच्छ्वासके केन्द्र स्थान पर शामक क्रिया होनेसे सूखी खाँसी और क्षय रोगमें अधिक पसीना आना कम हो जाता है। हृदयके केन्द्र स्थान पर इसकी शामक क्रिया होनेके परिणाम स्वरूप हृदयकी बढ़ी हुई धड़कन कम हो जाती है। और हृदय पर चर्बी चढ़] जानेकी वजहसे जो एक प्रकारकी खाँसी हो जाती है, वह मिट जाती है।

डाक्टर देसाई के मतानुसार पद्मकाष्ठ कटु पौष्टिक, स्तम्भक, वमन और मतलीको दूर करने वाला और वेदना शामक होता है। इससे आमाशयकी श्लेष्मत्वचाकी क्रिया शुद्ध होकर पाचन शक्ति और आमाशयकी शक्ति बढ़ती है, इसका स्तम्भक गुण भी स्पष्ट दृष्टि गोचर होता है। अजीर्ण रोगके अन्दर आमाशयकी श्लेष्मत्वचामें अगर सूजन हो जाय अथवा उसमें घाव हो जाय और उसकी वजहसे वमन और दस्त होने लगे तो ऐसे समयमें इस को देनेसे लाभ होता है। इसकी लकड़ीमें स्तम्भक और कटु पौष्टिक गुण है और इसके अन्दर पाये जाने वाले विषैले तत्वमें वेदना शामक गुण है। इसकी फाँट बनाकर देनेसे मतली और जंभाई आना बन्द होती है।

पद्मकाष्ठ का काढ़ा बनाकर नहीं देना चाहिए। क्योंकि गर्मी पानेसे इसके अन्दरके तत्व उड़ जाते हैं। इस लिए इसकी फाँट या शीत-निर्यास बनाकर ही देना चाहिए। इस औषधि को देनेके पहले सारासार का विचार करलेना चाहिए, क्योंकि इसमें विषैला तत्व रहता है और वह कभी कभी अधिक मात्रा होने पर खतरनाक हो जाता है।

जननेन्द्रिय पर होने वाली सूखो खुजली पर पद्मकाष्ठको ठंडे पानीमें घिसकर लगानेसे त्वचाको क्रिया सुधरती है। सूखी खुजली युक्त चर्म रोगों पर इसका लेप करनेसे त्वचा शुद्ध होकर उसके विकार मिटते हैं।

इसके फलका गूदा पथरी रोगको दूर करनेके काममें लिया जाता है। इसकी छाल गल ग्रन्थि प्रदाह को दूर करनेके काममें लीजाती है और इसकी छोटी शाखाओं के टुकड़े बाजारमें बिकते हैं, जिनको देशी वैद्य हाइड्रोसाइनिक एसिडके प्रतिनिधि रूपमें काममें लेते हैं।

चरक और सुश्रुतके मतानुसार यह वनस्पति दूसरी औषधियों के साथ सर्पविषके उपचारमें काममें लीजाती है।

मात्रा—इसकी मात्रा ५ से लेकर १५ रत्ती तकको होती है।

—

पपीता

नाम—

हिन्दी—पपीता। अंग्रेजी—Ignatius Benas (इग्नेशियस बीन्स) लेटिन—Strychnos Ignasii (स्ट्रिकनोस इग्नेसि)।

वर्णन—

यह कुचले की जातिका एक विषैला वृक्ष होता है। इसके वृक्ष भारतवर्षमें नहीं होते। फिलीपाइन द्वीपमें इसके बहुत वृक्ष होते हैं। यहांसे इसके बीज इस देशमें आते हैं और बड़े शहरोंमें पसारियोंके यहां मिलते हैं। इन बीजों का आकार लम्बगोल होता है। इनकी लम्बाई साधारणतया एक इंच से कुछ कम ज्यादा होती है।

हमारे देशके बहुतसे हिस्सोंमें पपीता अरण्डककड़ीके फल या पपैये को भी कहते हैं, मगर जिस पपीते का वर्णन यहां किया जा रहा है वह दूसरी वस्तु है। अरण्डककड़ी का वर्णन इस ग्रन्थके प्रथम भागमें देखना चाहिए।

गुणदोष और प्रभाव—

पपीते के बीजोंमें भी जहरी कुचले की तरह स्ट्रिकनिया और ब्रूसाइन नामकतत्व भिन्न भिन्न मात्रामें रहते हैं। इसमें १.५ प्रतिशत स्ट्रिकनिया और .५ प्रतिशत ब्रूसाइन रहता है। इसके सिवाय इसमें लोगेनिन नामक तत्व भी पाया जाता है। इसके एक भाग बीजों को १० भाग रेक्टिफाइड स्पिरिटमें मिलाकर एक अर्क तैयार किया जाता है जो टिंकचर इग्नेशिया के नामसे अंग्रेजी औषधि विक्रेताओं के यहां मिलता है और यह २० बूंद से ३० बूंद तक की मात्रामें एक वातनाशक पौष्टिक द्रव्य की तरह दिया जाता है, हैजे में भी इसका उपयोग किया जाता है। इसके बीजों के चूर्ण की मात्रा १ ग्रेन से ५ ग्रेन तक की होती है जो अधिक से अधिक दिनमें तीन बार दी जा सकती है।

प्लेग का रोग और पपीता—

प्लेग की भयंकर व्याधिमें इस औषधिका उपयोग बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। सबसे पहले प्लेगके रोग पर इसका उपयोग होमियोपेथिक डाक्टरोंके द्वारा किया गया। पर उसके पश्चात् बहुतसे वैद्य, हकीम और ऐलोपेथिक डाक्टर भी इस रोगमें इस औषधिका उपयोग करने लगे हैं। सन १८३६ में, टर्की की राजधानी कान्स्टेंण्टीनोपलके आसपासके प्रदेशमें प्लेग का उपद्रव बहुत भयंकर रूपसे फैल गया था। उस समय वहां के पेरा नामक ग्राम की प्लेग हास्पिटलमें होमियोपेथिक डाक्टर होनिनने इस औषधि को मुफ्त में बांट कर उन रोगियों पर अजमाई। जिससे प्लेगके अधिकांश रोगी बच गये और इसके उपलक्ष में उक्त डाक्टर साहब को बहुत बड़ा इनाम मिला। ये डाक्टर होनिन होमिओपैथी चिकित्सा पद्धति के मूल आविष्कारक विश्वविख्यात डाक्टर होनीमेनके शिष्य थे।

एक बार स्वयं इन्हीं डा॰ र साहब को लाहौर जाते हुए पालीमें प्लेग का आक्रमण हो गया। उस समय उन्होंने स्वयं अपने ऊपर भी इसी औषधिको अजमाई जिससे पसीना देकर बुखार उतर गया और प्लेग की गठान, उसकी पीड़ा और उसकी सूजन बिना किसी बाह्य उपचारके अपने आप अच्छी हो गई।

इस प्रकार इस औषधिमें प्लेग विष नाशक गुण मालूम पड़नेके पश्चात् होमियोपैथिक चिकित्सा शास्त्रमें इस औषधि को दाखिल की गयी और उसके पश्चात् दिन दिन इसका प्रचार बढ़ता गया।

इसके पश्चात् होमिओ पैथिक ढंगसे चिकित्सा करनेवाले कलकत्तेके सुप्रसिद्ध डाक्टर महेन्द्रलाल सरकार सी॰ आई॰ ई॰ ने भी अनेक रोगियों पर अजमाइश करनेके पश्चात अपना यह मत जाहिर किया कि यह दवा प्लेग के आक्रमण को रोकनेके लिए और आक्रमण

के पश्चात् उसका विष नष्ट करनेके लिए प्रभावपूर्ण क्षमता रखती है। प्लेग के दौरेके समयमें जिन लोगोंने इसके बीजों को कमर और हाथ पर बांधे थे उनमें से एक पर भी इस बीमारी का आक्रमण नहीं हुआ।

इस अभिप्रायके प्रकट होनेके पश्चात बहुतसे वैद्य और डाक्टर प्लेग के रोगमें इस औषधि का निर्भय होकर उपयोग करते हैं। बहुत सी जगह तो साधारण मनुष्य भी इसके बीजों को अपने हाथ और गले में बांध रखते हैं और अपने घरोंमें इसके बीजोंके टुकड़े करके बिखेर देते हैं। उनका ऐसा विश्वास है कि ऐसा करनेसे घरमें से प्लेगके जन्तु नष्ट हो जाते हैं।

वैद्यशास्त्री श्यामलदास गौर लिखते हैं कि इस औषधि का हमने भी प्लेगके अनेक रोगियों पर अनुभव लिया और प्लेगके उपद्रव को रोकनेके लिए और आक्रमण होने के पश्चात् उसको दूर करनेके लिए यह औषधि बड़ी चमत्कारिक मालूम हुई है। प्लेग का आक्रमण होते ही अगर इसका उपयोग प्रारम्भ कर दिया जाय तो २४ घण्टेके अन्दर ही प्लेगके ज्वर को और उसकी वजहसे होनेवाले सन्धियों के दर्द और गठान को यह मुलायम कर देता है। इस कार्यके लिए इस औपधि का चूर्ण आधी आधी रत्ती की मात्रा में, दो दो घण्टे के अन्तरसे पानीके साथ दिया जाता है। इस प्रयोग से अगर प्लेग का आक्रमण हुए छः घण्टेसे अधिक न हुए हों तो एक ही दिनमें रोग का प्रभाव कम होकर गठान नर्म पड़ने के चिन्ह दृष्टिगोचर हो जाते हैं। प्लेगके आक्रमण को रोकनेके लिए जिन जिन लोगों को प्रतिदिन सवेरे शाम एक रत्तीसे दो रत्ती तक की मात्रामें इस औषधि का चूर्ण पानी के साथ दिया गया वे प्लेगके दिनोंमें भी इस रोगके आक्रमण से बिलकुल मुक्त रहे। इसलिए प्लेगके उपद्रवके समय, इस औपधि का उपयोग करके वैद्य लाभ उठा सकते हैं।

विशूचिका और पपीता—

प्लेगके अतिरिक्त हैजे के ऊपर भी यह औपधि बहुत कारगर सिद्ध हुई है। इस व्याधि के लिए इस औषधि को कपूर, पोदीनेके फूल, जदवार, दरियाई नारियल, जहरी मोहरा, भुनी हुई हींग, अजवाइनके फूल, काली मिर्च और लाल मिर्चके साथ समान भाग लेकर गुलाब जल में घोटकर एक एक रत्ती की गोलियाँ बनाकर दो दो घण्टे में एक एक गोली प्याजके रसके साथ देना चाहिए। इससे तत्काल लाभ दृष्टिगोचर होता है। (जंगलनी जड़ी बूटी)

पतंग

नाम :—

संस्कृत—भार्यावृक्ष, काष्ठ, कुचन्दन, लोहित रंग, पतंग, पत्रांग, रक्तक, रक्तकाष्ठ इत्यादि। हिन्दी—पतंग, तेरी, बकाम। बंगाल—बकाम, पतंग, टेरी। गुजराती—बकाम। मराठी—पतंग। फ़ारसी बकम। तामोल—पतंगम्, रचयंगू। तेलगू—पतंग, वातमू, कपूरमङ्गी। इंग्लिश—Brajil wood (ब्राजिलउड), लेटिन—Caesalpenia Sappan (सिसेलपोनिया सापन)।

वर्णन—

पतंगके वृक्ष की खेती मद्रास जिलेमें बहुत होती है। इसका वृक्ष ६ से ६ मीटर तक ऊंचा होता है, इसका तना कांटेसे भरा रहता है और डालियां भूरे रग की होती हैं। इसकी पत्तियां २० से ३८ सेन्टीमीटर तक लम्बी होती है। इसके फूल ऊपर की पत्तियों पर लगते हैं, कलियां ११ मिलीमीटर लम्बी मुलायम और चिकनी होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—राजनिघण्टु के मतसे पतंग चरपरा, रूखा, खट्टा, शीतल तथा वात, पित्त, ज्वर, विस्फोटक, उन्माद और भूतबाधा को नष्ट करनेवाला है।

निघण्टु रत्नाकरके मतानुसार पतंग कड़वा शीतल, रूखा, अम्ल, मधुर, चरपरा, व्रण-रोधक, कान्तिवर्धक, सुगन्धित तथा पित्त, वात, उन्माद, ज्वर, विस्फोटक, मूत्रकृच्छ्र, व्रण, कफ, पथरी, रुधिर विकार और भूत-बाधा को दूर करता है।

पतंग के अन्दर ग्राही, रक्तसंग्रहक गर्भाशय, के लिए उत्तेजक संकोचक, कफनाशक और व्रणरोपक धर्म विद्यमान रहते हैं।

रक्तस्राव को बन्द करने के लिए पतंग का काढ़ा पिलाया जा सकता है और उस काढ़ेमें कपड़ा भिगोकर रक्तस्राव की जगह पर रखा जाता है। फेफड़ेमें से होनेवाला रक्तस्राव आंतोंसे होने वाला रक्तस्राव और गर्भाशय से होनेवाले रक्तस्राव युक्त रोगोंमें यह एक लाभदायक औषधि है। श्वेत प्रदर में इसके काढ़े की पिचकारी देने से लाभ होता है। अतिसार और संग्रहणी रोग में भी यह लाभदायक है। इसके काढ़े से मांसार्बुद को धोनेसे पीड़ा और दाह की कमी होती है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से इसकी लकड़ी बहुत कड़वी होती है। यह छाती और फेंफड़े से होनें

वाले रक्तस्राव को रोकती है। इसके लगानेसे पीवदार व्रण और घाव भर जाते हैं। सन्धि-वातमें भी यह उपयोगी है।

इण्डो चायनामें इसकी लकड़ी का काढ़ा एक प्रभावशाली ऋतुस्राव नियामक औषधि की तरह उपयोग में लिया जाता है। इसकी लकड़ी का काढ़ा कुछ चर्म रोगों को दूर करनेके लिए भी पिलाया जाता है। चीनमें इसकी लकड़ी जखमों को भरने वाली, रक्तस्राव को रोकनेवाली और रजःस्राव सन्बन्धी बीमारियों को दूर करने वाली मानी जाती है। वहां यह एक संकोचक और उपशामक औषधि की तरह काम में ली जाती है।

कोमानके मतानुसार इसकी लकड़ी का काढ़ा अतिसार और रक्तातिसार को रोकने के लिए बहुत उपयोगी माना जाता है। मैंने भी अतिसार और रक्तातिसार के कुछ साधारण केसों पर इसको उपयोगमें लिया और लाभदायक पाया।

परवल

नाम—

संस्कृत—चिचिंड, पटोल, परवर, पिलुपर्णिका, स्वादुपटोल, राजपटोल, सुशाका, सुपथ्य इत्यादि। हिन्दी—परवल। गुजराती—पटोल। बंगाली—पटोल। पंजाब—पलवल। फारसी—पलोल। तेलगू—कोमूपोटल। तामील—कोम्बूघुदलाई। उर्दू—परवल। लेटिन—Trichosanthes Dioica (ट्रीकोसेंथस डायोइका)

वर्णन—

परवलकी तरकारी उत्तरी हिन्दुस्तानमें सब दूर पायी जाती है। इसकी बेल होती है। इसके पत्ते अखण्ड और कंगूरेदार होते हैं। इसका फल कंदोरीके फलके समान होता है। यह १ इंच तक लम्बा होता है। इसकी जड़के नीचे एक कन्द होता है जिसको संस्कृतमें रम्याक कहते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—भावप्रकाशके मतसे परवल पाचक, हृदयको हितकारी, हलका, अग्नि दीपक, स्निग्ध, उष्ण तथा खांसी, रुधिर विकार, ज्वर, त्रिदोष और कृमियोंको नष्ट करता है। परवलकी जड़ सुख पूर्वक विरेचन करने वाली है। परवलकी नाल कफ नाशक है। परवलके पत्ते पित्तनाशक होते हैं। इसका फल त्रिदोपनाशक होता है।

निघंटु रत्नाकरके मतानुसार परवल बलकारक, स्वादिष्ट, पथ्य, दीपन, पाचक, रुचिकारक, पौष्टिक और ब्रोंकाइटिज, वात, पित, ज्वर, शोष और त्रिदोषको शान्त करने वाला होता है। इसका फल वृष्य, रुचिकारक, मधुर, स्वादिष्ट, हृदयको हितकारी, स्निग्ध, गर्म और रक्त विकार, त्रिदोष खांसी, ज्वर और कृमियों को नष्ट करने वाला होता है। इसके पत्ते पित्तनाशक, जड़ विरेचक और बेल कफ नाशक होती है।

परवलकी जड़का कन्द एक तीव्रविरेचक पदार्थ है। इसकी क्रिया इलेटेरियमके समान होती है। इसके हरे फलका गूदा भेदक होता है। इसके पत्तोंके डंठल कटुपौष्टिक, ज्वरनाशक और आनुलोमिक होते हैं। इसके पत्ते कटुपौष्टिक दीपन, पाचन और बलदायक होते हैं। इसके बीज कृमिनाशक होते हैं।

यूनानी मत—

यूनानी मत से यह पौधा धातुपरिवर्तक, पौष्टिक, हृदयरोग में तथा हठीले ज्वर और फोड़ों में उपयोगी होता है। इसकी जड़ विरेचक होती है। इसके पत्ते कृमिनाशक, व्रणोंको अच्छे करनेवाले और पित्तनाशक होते हैं। इसके फूल पौष्टिक और कामोद्दीपक होते हैं। इसके पके हुए फल खट्टे मीठे पौष्टिक, कामोद्दीपक, कफनिस्सारक और खूनकी खराबीको दूर करनेवाले होते हैं।

गुजरातमें इसके फल अनैच्छिक वीर्यस्रावको रोकनेके लिए उपयोगमें लिये जाते हैं। इसके कच्चे फलोंका ताजा रस एक शीतल और मृदुविरेचक पदार्थकी तरह दूसरी धातु-परिवर्तक औषधियोंके साथ मिलाकर उपयोगमें लिया जाता है। पित्तज्वरमें इसके पत्तोंका काढ़ा ज्वरनाशक और मृदुविरेचक पदार्थके रूपमें लिया जाता है।

इसकी जड़ मूत्रल और विरेचक होती है। यह भी एक ज्वरनाशक और पौष्टिक पदार्थकी तरह उपयोगमें ली जाती है।

सुश्रुत और चरकके मतानुसार इसका फल दूसरी औषधियोंके साथ मिलाकर सर्प विषकी चिकित्सामें काममें लिया जाता है।

पँवार

नाम—

संस्कृत—चक्रमर्द, आयुद्धाम, दादमर्दन, दादमारी, प्रभुनाथ, तागा। हिन्दी—पँवार, फुंवाडया, चकुण्डा, चकवत। बङ्गाल—चकुण्डा, पनेवार। बम्बई—कुँवाडया, कुवारिया।

मराठा—टाकला, टांकली । गुजराती—कुँवाड़ियो । पंजाब—पँवार, चकुण्डा । तेलगू—तागिरिस । तामील—तगरे । फारसी—संगसवोयाह—इंग्लिश—Fetid Cassia. (फेटिड केसिया) लेटिन—Cassia Tora. (केसिया टोरा) ।

वर्णन—

यह वर्षजीवी क्षुपा वर्षाऋतुमें वहुत पैदा होता है। इसके पत्ते मेथीके पत्तोंकी तरह होते हैं। इसके फूल पीले रङ्गके होते हैं। इसकी फलियां करीव चार इंच लम्बी और वहुत पतली होती हैं। इन फलियोंमें से भूरे रङ्गके छोटे २ मेथीके दानेके समान वीज निकलते हैं। इस पौधेको मसलनेसे उसमें एकप्रकारकी अग्राह्य दुर्गन्ध आती है ।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—भावप्रकाशके मतानुसार पँवार हलका, स्वादिष्ट, सरल, पित्त वात नाशक, हृदयको लाभदायक, शीतल, तथा कफ, श्वास, कुष्ठ, दाद और कृमिको नष्ट करनेवाला होता है। इसके वीज गरम और कड़वे होते हैं तथा कुष्ठ, कण्डू, दाद, विष, वात, गुल्म खांसी, कृमि, तथा श्वास रोगमें लाभदायक हैं ।

निघण्टु रत्नाकरके मतानुसार पँवार स्वादिष्ट, रूखा, हलका, कड़वा, चरपरा, हृदयको हितकारी, शीतल, खारी तथा वात, पित्त, कफ, दाद, कोढ़, कृमि, श्वास, ववासीर, घाव, मेदरोग, पामा, त्रिदोष, अरुचि, ज्वर, मलमूत्रावरोध, प्रमेह और खांसीमें लाभदायक है। पँवारके वीज मलरोधक, गरम, चरपरे, तथा कफ, कोढ़, श्वास, खांसी दाह, खुजली, विष, सूजन, गुल्म और वातरक्तको नष्ट करनेवाले हैं।

पँवारके पत्तोंका शाक हलका, पित्तजनक, अम्ल, गरम तथा कफ, वात दाद, कोढ़, पामा, कण्डु, खांसी और श्वासको दूर करनेवाला होता है।

पंवारके पत्तोंमें सनायके समान विरेचन द्रव्य और लाल रंग रहता है। इस वनस्पति की प्रधान क्रिया त्वचाके ऊपर होती है। त्वचा के सव प्रकारके रोगों में, त्वचा के मोटी हो जाने पर इसका विशेष उपयोग होता है। चर्म रोगोंमें इसके पत्तों का शाक देनेसे और इसके वीजों को नीवूके रसमें पीसकर लेप करनेसे वहुत लाभ होता है।

इसकी पत्तियोंका काढ़ा रेचक औषधिकी तरह काममें लिया जाता है। इसकी पत्तियों और वीजों, दोनों में ही चर्मरोगों—विशेषतः दाद और खुजली को दूर करनेवाले गुण मौजूद हैं। चीन देशके अधिवासी सव प्रकारके नेत्र रोगोंके वाहरी और भीतरी उपचारोंमें इसके वीजोंको उपयोगमें लाते हैं। वे लोग व्रण फोड़ा और सूजन आदि में भी इसके वीजोंसे दवा तैयार करते हैं। इण्डोचायना के लोग संग्रहणी आदि पेट की वीमारियों और नेत्र रोगोंमें इसकी फली को

काम में लेते हैं। नाइगेरिया में इसकी पत्तियां हलकी रेचक-औषधिके रूपमें व्यवहृत होती हैं। यह वनस्पति रेचक औषधि के लिए विशेपतया काम में ली जाती है। मेडागास्करमें इसकी जड़ों को लोग पुष्टिकर, तिक्त और अग्निवर्धक मानते हैं और पत्तियों से पर्याय ज्वरनिवारक, मृदु विरेचक और कृमिनाशक औषधि तैयार करते हैं।

महस्कर और केसके मतानुसार सर्प और बिच्छू के विषमें इसकी जड़ निरुपयोगी है।

पलाश लता

नाम :—

संस्कृत—लता पलाश। हिन्दी—पलाशलता। बंगाली—लता पलाश। गुजराती—वेल खाकरा। मराठी—पलाश वेल। लेटिन—Butea Superba (ब्यूटिया सुपर्बा)।

वर्णन—

यह एक बहुत बढ़ने वाली लता है। इसकी धड़ बाईं ओरसे दाहिनी तरफ ०.६ से लेकर ०.६ के घेरेमें बढ़ती है। पत्तियों का आकार ३० से ४५ सेंटीमीटर तक होता है पर नयी लताओं की पत्तियां कभी कभी ५० सेंटीमीटर तक बढ़ जाती हैं। फूल लताश्रेणी के अन्य फूलों की अपेक्षा बड़े ४.५ से ६.३ सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं। अवध और बुन्देलखण्ड के जंगलों, छोटा नागपुर, बर्मा, कोकण, उत्तरी कनाड़ा तथा मध्य और दक्षिण भारतमें यह लता उत्पन्न होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसकी पत्तियों का रस बच्चों की फुन्सियों को दूर करनेके लिए दही और हलदीके साथ उपयोग में लिया जाता है।

इसकी जड़, छाल, फूल सभी सर्पदंश की औषधिके रूपमें काममें लिये जाते हैं। सुश्रुत के मतानुसार बिच्छूका डंक लगने पर इसके फूलों का उपयोग करना चाहिए।

महस्कर और केसके मतानुसार इस पौधे का कोई भी अंश सर्प या बिच्छूका विष दूर करनेमें उपयोगी नहीं है।

कम्बोडिया में लोग इसके डण्ठल और पत्तियों के काढ़े को चमड़े को मुलायम करने वाली औषधि मानते हैं और बवासीर को दूर करने के लिए भी इसका प्रयोग करते हैं। इस पौधे से भीगे हुए जलको शान्तिप्रद माना जाता है।

पलाश

पलाश का वर्णन ढाकके नामसे इस ग्रन्थ के चौथे भाग में दिया गया है।

पहाड़ी कन्द

नाम—

हिन्दी—पहाड़ी कन्द। गुजराती—नानो जंगली कांदो। पंजाव—फफोर। मराठी—पहाड़ी कन्द। कुमाऊं—घेसुव। तामील—शिरुनरीवेंगयम। लेटिन—Ledebomia Hyacinthoides. (लेडेवोमिया हाइसिन्धोइडिस)

वर्णन—

यह वनस्पति जंगली प्याज या कोली कांदे की ही एक छोटी उपजाति होती है। यह दक्षिणी हिन्दुस्तान की पहाड़ी जमीनों में पैदा होती है। इसका पौधा कोलीकांदे के पौधे की तरह ही मगर उससे कुछ छोटा होता है। इसका स्वाद कुछ कड़वा और तीखा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

पहाड़ी कन्दके गुण धर्म कोलीकांदे के ही समान मगर उससे कुछ हलके दर्जे के होते हैं। कोलीकांदा न मिलने से उसके वदले में यह दिया जा सकता है। कोलीकांदे के गुण धर्म इस ग्रन्थके दूसरे भाग में विशेष रूप से दिये गये हैं। घोड़ों को आने वाले ज्वरमें यह वनस्पति दी जाती है, जिससे उनको अधिक पेशाव होकर ज्वर उतर जाता है।

मात्रा—मनुष्य के लिए इसकी मात्रा १ रत्ती तक है।

पर्वती

नाम :—

गुजराती—पर्वती। पंजाव—इल्लर विल्लर, पर्वती, वेलुर। सिन्ध—उल्लर विल्लर। तेलगू—दसरातिगे। लेटिन—Cocculus pendulus (कोकुलस पेण्डुलस।)

वर्णन—

यह एक तरह की झाड़ी है जो लता की भांति चढ़ती हुई बढ़ती जाती है। इसकी डालियां भूरे रंग की चिकनी होती हैं और छोटी छोटी टहनियां पतली होती हैं। इसकी पत्तियां १८ से ३८ मिलीमीटर तक लम्बी तथा ६ से १८ मिलीमीटर तक चौड़ी होती है, इसके फूल छोटे छोटे होते हैं।

सिन्ध, बलूचीस्तान, वजीरिस्तान, पंजाब, कठियावाड़, दक्षिण भारत, अफगानिस्तान अरब और अफ्रिका में यह वनस्पति पायी जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

इसके गुण दोष प्रभाव गिलोय के समान होते हैं। सिन्ध देशमें विषम ज्वरों को दूर करनेके लिए यह वनस्पति गिलोय के बदले में दी जाती है।

पनकूल

नाम—

कोकण—पनकूल, पटकली। तामील—चेत्ति। कनाडी केपल। लेटिन—Ixora Grandiflora (इक्सोरा ग्रेण्डीफ्लोरा।)

वर्णन—

यह एक झाड़ी नुमा वेल होती है। इसकी छाल बाहरसे काली और भीतरसे लाल होती है। इसके फूल लाल रंगके चार पंखड़ियां वाले होते हैं। ये गुच्छोंमें लगते हैं। इसकी डालीमें लाल रंगका दूध निकलता है जो सूखने पर लाखकी तरह जम जाता है। वर्षा ऋतुके पहले यह झाड़ फूलोंसे लदकर बहुत सुन्दर हो जाता है। औषधिके काममें इसकी जड़ें आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति उत्तम दीपक, पाचक, मूत्रल, सूजनको नष्ट करने वाली, व्रण रोपक तथा कुछ स्तम्भक होती है।

अतिसारमें इसके दो तोले फूल लेकर इनको घीमें तलकर, उनमें ४ रत्ती जीरा, ४ रत्ती नाग केसर और कुछ शक्कर मिलाकर दिनमें दो बार देते हैं। आमाशयकी शिथिलताको दूर करनेके लिए तथा सुजाकमें इसकी छाल उपयोग में ली जाती है।

इसकी छालको ठंडे पानीमें पीसकर फोड़े फुन्सियोंपर लेप करनेसे फायदा होता है।

पाताल तुम्बी

नाम—

संस्कृत—भूतुम्बी, वल्मीकसम्भवा, नागतुम्बी इत्यादि । हिन्दी—पातालतुम्बी । गुजराती—पाताल तुमड़ी । मराठी—नागतुम्बी । लेटिन—Bovista Spisis (बोविस्टा स्पीसिस) ।

वर्णन—

पाताल तुम्बी खेतों में और मैदानों में होती है । इसके ऊपर बहुत बारीक और पीले रंगके छींटे वाले बिच्छूके डंकके समान कांटे होते हैं । इसकी वेल होती है । वेलकी शाखाओंके बीच तुम्बीके समान फल लगते हैं । इसीको पाताल तुम्बी कहते हैं । यह वनस्पति सांपके बिलों के आसपास विशेष पैदा होती है । काठियावाड़में यह बहुत पायी जाती है ।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे यह वनस्पति कड़वी, चरपरी, त्रिदोषनाशक तथा प्रसूतिके समयका अतिसार, दांतोंकी जड़ता और सूजन और पसीना तथा प्रलापयुक्त ज्वरको दूर करती है ।

यह एक दिव्य औषधि है । क्योंकि इसमें कई ऐसे चमत्कारिक गुण हैं, जो दूसरी औषधिमें नहीं पाय जाते । स्त्रियोंको प्रसव होनेके पश्चात् कभी कभी ताणें आने लगती हैं, दाँत भिड़ जाते हैं और धनुर्वातके लक्षण दिखलाई देने लगते हैं । ऐसे संकट पूर्ण समयमें इस औषधिका देनेसे आश्चर्य जनक लाभ होता है । सूतिका रोगमें होनेवाले अतिसार, सूजन इत्यादि उपद्रवों में भी यह एक महौषधिका काम करती है । बालकों को होने वाले धनुर्वात (टेटीनस) में भी यह एक अव्यर्थ औषधि है । प्रलापयुक्त सन्निपात ज्वरमें, जब रोगी बेहोशी की हालतमें बकता रहता है उस समय भी इसके समान लाभ दिखाने वाली दूसरी वनस्पति नहीं है ।

कभी कभी रोगीको चढ़ा हुआ तीव्र ज्वर पसीना देकर एकदम उतार दिया जाता है । ऐसी हालतमें ज्वरके एकदम शरीरसे निकल जानेसे रोगी बहुत कमजोर हो जाता है, उसके हाथ पैर ठंडे हो जाते हैं, गलेमें घर घर शब्द होने लगता है और रोगीकी बेहोशी बढ़ती जाती है । ऐसे समयमें भी यह वनस्पति हेम गर्भकी तरह ही चमत्कारिक कार्य कर दिखाती है । इसकी पहली मात्रासे ही रोगीके शरीरमें गर्मी दौड़ने लगती है ।

कई प्रकारके विष विकारोंको दूर करनेकी शक्ति भी इस वनस्पति में है । इसकी मात्रा २ रत्तीसे लेकर ६ रत्ती तक होती है ।

यद्यपि यह वनस्पति बहुत प्रभाव शाली और चमत्कारिक है, मगर बाजारमें असली वस्तु न मिलनेके कारण लोग इसके गुणों के सम्बन्धमें भ्रममें पड़ जाते हैं। इस लिए इसको लेनेके पहले यह असली है, इस बातका पूरा विश्वास कर लेना चाहिए।

पाडल

नाम—

संस्कृत—पाटला, पटोली। हिन्दी—पाडर, पाडल, पाडरी। बंगाल—पेरुली, धरमार। बम्बई—पाडल, पाडरी, परेल। गुजराती—पाडेली। मराठी—पाडल, किरसल, कुसगा। नेपाल—परेरी। तामील—अम्बु, पाडलम्। तेलगू—कालीगोटू, भगावेपा। लेटिन—Streospermum Tetragonum. (स्टीरिओसपरमम टेट्रेगोनम)।

वर्णन—

यह एक बड़ी जातिका वृक्ष दक्षिणके पहाड़ी भागों और सीलोनमें पैदा होता है। इसकी बहुतसी शाखाएँ फैलती हैं। इसकी छाल मोटी पीले रंगकी होती है। पत्ते ३० से ४५ सेन्टीमीटर लम्बे दोनों ओर फैले रहते हैं। इसके फूल सुगन्ध देनेवाले होते हैं और बहुत जल्द गिर जाते हैं। कलिया ६ मिलीमीटर तक लम्बी होती हैं। फूलका भीतरी हिस्सा २ सेन्टीमीटर लम्बा पीले रंगका कुछ ललाई लिये हुए रहता है। बीज २.५ से ३.२ सेन्टीमीटर तक लम्बे होते हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदके मतसे यह वनस्पति दशमूलमें पड़नेवाली पाडर नामक वनस्पतिकी प्रतिनिधि है।

इसकी जड़, पत्ते और फूलोंका काढ़ा ज्वर नाशक औषधिकी तरह उपयोगमें लिया जाता हैं। इसके पत्तोंका रस नीम्बूके रसके साथ मिलाकर उन्मादके अन्दर दिया जाता है।

यह वनस्पति शीतल वातनाशक और ज्वरनाशक होती है। मस्तिष्क और मज्जा तन्तुओंके ऊपर इसकी उपशामक क्रिया होती है। चरक, सुश्रुत और वाग्भट्टके मतानुसार इस वनस्पतिका पंचांग सर्पविषमें उपयोगी है। सुश्रुतके मतानुसार इसके फूल और फल बिच्छूके विषमें भी उपयोगी हैं।

पाडर

नाम :—

संस्कृत—अलिप्रिया, अलिवल्लभा, अम्बुवासी, वसन्तदूती, कोकिला, कुवेराक्षी, कुम्भी, पाटला इत्यादि। हिन्दी—पाटला, पाड, पाडर, पांडरी इत्यादि। बंगाल—घंटा, मुग, पारुल। मध्यप्रान्त—पांड्री। पंजाब—पाडल। गुजराती—पाडल। तामील—अम्बुवासिनी, पाडिरी। तेलगू—अम्बुवासिनो, कालीगोल्लू, पाटला। लेटिन—Stereospermum Suabeolens (स्टीरिओसपरमम सुआबिओलन्स)।

वर्णन—

यह मध्यम कदका बड़ा वृक्ष उत्तरी भारतमें बहुत पैदा होता है। बंगालमें यह बहुत प्रसिद्ध है। इसकी छाल खाकी रंगकी ऊबड़ खाबड़ होती है। इसके पत्ते संयुक्त और आमने सामने लगे हुए रहते हैं। इसके संयुक्त पत्ते बहुत लम्बे होते हैं। इसके फूल बड़े, तांबेके रंगके और बहुत सुगन्धित होते हैं। इसकी फलियाँ हाथ भर लम्बी होती हैं। इसकी लाल और सफेदके भेदसे दो जातियाँ होती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे पाडल कड़वी, चरपरी, गरम, कफनाशक तथा सन्निपात, श्वास, वमन, सूजन और आफरेको दूर करती है। इसके फूल स्वादिष्ट, कसेले, हृदयको हितकारी, शीतवीर्य तथा रक्तदोष, दाह, कफ, पित्त रोग और पित्तातिसारको हरने वाले हैं। इसके फल शीतल, भारी, कसेले, कड़वे, मधुर तथा मूत्र कृच्छ्र, रक्तपित्त, हिचकी और वातका नाश करने वाले होते हैं।

सफेद पाडर कड़वी, भारी, वातनाशक तथा वमन, हिचकी, कफ, श्रम और सूजनको दूर करने वाली है।

यह वनस्पति आयुर्वेदके सुप्रसिद्ध दशमूल क्वाथका एक अंग है। इसके फूलोंको कुचल कर शहदमें मिलाकर हिचकी को रोकनेके लिए देते हैं। यह शीतल, मूत्रल और पौष्टिक है। कफ और वात प्रधान रोगों में यह बहुत उपयोगी है। इसके पंचागसे निकाला हुआ क्षार मधुमेह और मूत्राघातमें दिया जाता है। इसकी छालकी फाँट बनाकर अम्ल पित्तरोगमें दी जाती है। इसके फूलोंका गुलकन्द पौष्टिक होता है। इसकी जड़का घन क्वाथ तेलमें मिलाकर अग्निसे जले हुए स्थानपर लगानेसे शान्ति मिलती है।

तंजोरमें इसके फूलोंका गुलकन्द बनाकर कामोद्दीपक वस्तुकी तरह सेवन किया जाता है।

पाखाण भेद (पत्थर चूर)

नाम—

संस्कृत—पाषाणभेदी। हिन्दी—पत्थरचूर, पाखान भेद। बंगाल—पत्थरचूर। मराठी—पत्थरचूर, पानांचाओंवा। बम्बई—ओवा, पत्थरचूर। लेटिन—Coleus Amboinicus (कोलियस एम्बोइनिकस)।

वर्णन—

यह एक बहुवर्षायु छोटी जाति का पौधा होता है। यह बगीचोंमें लगाया जाता है। इसके पत्ते मोटे दांतेदार और रुएंदार होते हैं। इसका स्वाद तीक्ष्ण होता है। इसकी गन्ध बहुत मनोहर होती है। इसके फूल छोटे डंठलोंमें लगते हैं जो ३ मिलीमीटर लम्बे होते हैं। कली का ऊपरी हिस्सा गोल पर नीचे का नोकीला होता है। फूल का भीतरी भाग कुछ धुंधले नीले रंग का होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे पाषाणभेद पथरी को भेदनेवाला, शीतल, कड़वा, कसेला, वस्ति शोधक, भेदक तथा त्रिदोष, बवासीर, गुल्म मूत्रकृच्छ, पथरी, हृदयरोग, प्रमेह, प्लीहा, शूल और व्रण रोग को नष्ट करता है।

क्षुद्र पाषाण भेद व्रण, मूत्रकृच्छ्र और पथरी को नष्ट करता है।

मूत्रकृच्छ्र और पथरीके ऊपर यह एक लोकप्रिय औषधि है।

दमा, पुरानी खांसी और श्वास नलिकाके संकोच विकास प्रधान रोगोंमें इसका उपयोग होता है। नेत्राभिष्यन्द रोगोंमें आंखोंके पलकों पर इसके रसका लेप किया जाता है। अजीर्ण, उदरशूल और मन्दाग्निमें भी यह लाभदायक है।

इसके पत्तोंका मूत्राशय या मसानेके ऊपर सीधा असर होता है और इसलिए यह पेशाब सम्बन्धी सब रोगों पर उपयोगी माना जाता है। बच्चों को होनेवाले कॉलिक उदरशूलमें इसका ५-६ बूंद रस शक्करमें मिलाकर दिया जाता है जिससे तत्काल असर होकर शान्ति हो जाती है।

इसमें उत्तेजक प्रभावके रहते हुए भी बंगालके अधिवासी कॉलिक उदरशूल और मन्दाग्नि तथा अजीर्ण रोगमें इसका प्रयोग करते हैं।

सीलोनमें इसकी पत्तियों का काढ़ा दमा और कठिन कफके रोगियोंको औषधि रूपमें दिया जाता है।

कोचीनमें इसकी पत्तियों का रस मोटापन दूर करनेवाला समझा जाता है और बच्चोंके पेटकी मरोड़में दिया जाता है। दमाके रोगियों और ब्रोंकाइटिज के बीमारों तथा संन्यास (Apilapsy) रोग ग्रस्त व्यक्तियोंको भी यह काढ़ा पिलाया जाता है।

पानड़ी

नाम—

संस्कृत—पाची। हिन्दी—पनड़ी, सुगन्धित पनड़ी। मराठी—पांच। गुजराती—सुगन्धित पानड़ो। लेटिन—Pogostemon Pachouli (पोगास्टेमोन पाचोली)।

वर्णन—

यह एक सुगन्धित पत्तों का पौधा होता है। इसका पौधा ४-५ फीट तक ऊंचा पड़ जाता है। इसके पत्ते गोल, तीखी नोंकवाले और कटी हुई किनारोंके होते हैं। इसके फूल बहुत छोटे होते हैं इस वनस्पतिके पांचों अंग बहुत खुशबूदार होते हैं। इसके पत्तोंमेंसे इत्र निकाला जाता है। राजपूतानेकी स्त्रियां अपने कपड़ोंके बक्समें इसके सूखे हुए पत्तोंको रखती हैं जिससे कपड़े भी खुशबूदार रहते हैं और उनमें किसीप्रकार का कीड़ा नहीं लगने पाता।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति मूत्रल, रक्तस्राव रोधक और वायुनाशक होती है। पेशाबके साथ रक्त जाने की बीमारीमें इसके दो तोले पत्तोंका रस थोड़ी भांगके साथ मिलाकर दिया जाता है।

पांगला

नाम:—

संस्कृत—फणिज्झक। मराठी—पांगला, फांगला। लेटिन—Pogostamon Parviflorus. (पोगोस्टेमन पर्वीफ्लोरस)।

वर्णन—

यह वनस्पति विशेषकर कोकणमें बहुत पैदा होती है। इसका पौधा ३ फीटके करीब लंबा होता है। इसके पत्ते करीब ६ इंच लम्बे, लम्ब गोल और नोंकदार होते हैं। इसके फूल बहुत घने लगते हैं, और गुच्छोंमें लटके रहते हैं। इसकी कलियां ४ मिलीमीटर लम्बी होती हैं।

फूलका भीतरी भाग ३ मिलीमीटर लम्बा होता है और ऊपर का हिस्सा सफेद तथा लाल पीले रंगके छींटोंसे युक्त रहता है ।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति रक्तसंग्राहक, विषनाशक, उत्तेजक और व्रणरोपक होती है।

इसके ताजा पत्ते कुचल कर पुल्टिस की तरह घाव को साफ करके उसपर बांध देते हैं। जिससे स्वस्थ मांसांकुर पैदा होकर घाव भर जाता है। सतारामें इसका रस कालिक उदरशूल और ज्वर को दूर करनेके लिए दिया जाता है।

इसकी जड़ रक्तस्राव को रोकनेके लिए एक मशहूर औषधि है और गर्भाशय सम्बन्धी अत्यधिक रजस्रावमें इसका सफलता पूर्वक उपयोग किया जाता है।

रत्नागिरि जिलेमें इसकी जड़ एचिसकेरिनेटा (Achis Carinata) नामक सर्प जिसको सिन्धमें कपर कहते हैं, के विषपर दी जाती है। इस विषको दूर करनेके लिए इसकी जड़ का टुकड़ा पानीमें औटाकर तीन वार पिलाया जाता है और पानीमें घिस कर जखममें लगाया भी जाता है। इस प्रकार सात दिन तक यह प्रयोग चालू रखा जाता है। इससे विष की वजह से आने वाले चक्कर कम हो जाते हैं और शरीर के किसी भी हिस्से से निकलने वाला रक्त वन्द हो जाता है। इस कार्यके लिए इसकी ताजी जड़ें लेना ही उत्तम होता है। क्योंकि ताजी जड़ोंमें ही रक्त संग्राहक धर्म विशेष रहता है। लम्बे अनुभव से वहांके लोगों का विश्वास हो गया है कि इस औषधि को देने के पश्चात् रोगी की एकाएक मृत्यु नहीं होती।

सुश्रुत के मतानुसार यह पौधा दूसरी औषधियों के साथ मिलाकर सर्प और विच्छू के विषके उपचारमें लिया जाता है।

पांगरा (फरहद)

नाम—

संस्कृत—पारिभद्र, बहुपुष्पा, कण्टकी, पलाश, मन्दार, पालित मन्दार, पारिजात, प्रभद्रक, रक्तपुष्पक, कृमिघ्न इत्यादि। हिन्दी—दादप, पांगरा, पंजीरा, फराद। बंगाली—पालित मन्दार। मराठी—पांगारा, मन्दार, फांदरा। गुजराती—पांगरो, पनेरवो, पाण्डरवो। बरार—पांगरा। नेपाल—दपदप, फालेदो। तेलगू—बादीसा, बारीदामू, मूचीकेटा, परिभद्र कामू। तामील—

कावीर, मुरक्कू, पलासू, सिनसुगम इत्यादि। इंग्लिश—Indian Corae Tree. (इण्डियन कोरेलट्री) लेटिन—Erythrina Indica. (एरिथ्रिना इण्डिका)।

वर्णन—

इसके वृक्ष १८ मीटर तक ऊँचे होते हैं. छाल पतली चिकनी और भूरे रंगकी होती है। इस वृक्ष पर छोटे २ नोकीले काले रंगके कांटे लगे रहते हैं। इसके पत्ते १५ से ३० सेन्टीमिटिर तक लम्बे होते हैं। फूल बहुत अधिक और गुच्छेदार होते हैं। कलियां नलीके आकारकी होती हैं। फूलका भीतरी हिस्सा लाल होता है।

यह वनस्पति बम्बई और मालाबारके पहाड़ों और बंगालके सुन्दर वनमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे इसकी जड़ ऋतुस्राव नियामक होती है। छाल कफ, वातनाशक और अतिसारको दूर करनेवाली होती है। इसके पत्ते कड़वे, गरम, अग्निवर्धक, कृमिनाशक, भूख बढ़ानेवाले, सूजनको दूर करनेवाले और मूत्रसम्बन्धी रोगोंमें लाभदायक हैं। इसके फूल पित्तनाशक और कर्णपीड़ाको दूर करनेवाले होते हैं।

सुश्रुत के मतसे यह पौधा सर्पविषमें लाभदायक है।

इसकी छाल शान्तिदायक, पित्तनाशक और कृमिनाशक होती है और यह चक्षु रोगों को दूर करनेके लिए अंजन के काममें भी ली जाती है।

कोकणमें इसके ताजे पत्तों का रस कृमियुक्त घावों के कृमियों को मारने के लिए लगाया जाता है और इसके सफेद फूल वाली जाति की जड़ कुचल कर ठण्डे दूधके साथ कामोद्दीपक वस्तु की तरह दी जाती है।

इसके पत्ते उपदंश की वजह से होनेवाली बदगांठ पर पीस कर लगाये जाते हैं। सन्धिवात की पीड़ा में भी इनका लेप मुफीद होता है। इसके पत्तों का ताजा रस पिचकारी के द्वारा कान में छोड़ने से कान का दर्द दूर होता है। इस रसको पानीमें मिलाकर कुल्ले करनेसे दांत का दर्द भी दूर होता है।

कोमानके मतानुसार तामील के वैद्य पुराने अतिसार को दूर करनेके लिए इसके पत्तोंके रस को समान भाग अरण्डी के तेल में मिला कर १ ड्राम की मात्रामें दिनमें तीन बार देते हैं। हमने भी करीब आधे दर्जन केसों पर इस उपचार को किया मगर इससे कुछ लाभ नहीं हुआ।

डाक्टर देसाई के मतानुसार इसकी छाल ज्वरनाशक, कफ निस्सारक, सूजन को दूर करने वाली और कृमिघ्न होती है। मस्तकके केन्द्रस्थान पर इसकी अवसादक क्रिया होती है। इस वजह से इसमें वेदना शामक गुण पाया जाता है। मज्जातन्तुओंके ऊपर कुचले की जो क्रिया होती है उससे विलकुल विरुद्ध इसकी होती है। हृदयके ऊपर भी इसकी अवसादक क्रिया होती है। इसके प्रयोगसे कुचले के विपकी शक्ति नष्ट हो जाती है। इसके पत्ते व्रण शोधक, आनुलोमिक, मूत्रल, दुग्धवर्धक और मासिक धर्म को साफ करने वाले होते हैं।

रक्तातिसार में इसकी छाल का प्रयोग किया जाता है। नेत्राभिष्यन्द रोगमें पलकोंके ऊपर इसकी छालका लेप किया जाता है। ज्वरमें नींद आनेके लिए इसकी छाल दी जाती है। उपदश और उपदंश से होनेवाले सन्धिवात, सूजन और ,वदगांठ पर इसका रस पिलाया जाता है और इसके पत्तों का लेप किया जाता है। नारियलके रसके साथ इसके पत्तों को उबालकर प्रसूति के समय गर्भाशय की शुद्धिके लिए और दूध वढ़ानेके लिए दिया जाता है।

पाकर

नाम—

संस्कृत—चारुदर्शिनी, गर्दभण्डा, करपारी, क्षीरी, परकटी, प्लक्ष, कन्दरालु इत्यादि। हिन्दी—पाकर, पाकरी, पाकुर, पिलखन, राम अंजीर, कहिमाल इत्यादि। गुजराती—पीपरी। मराठी—वेसारी, गन्धा उम्बरा। पंजाव—पाखर, जंगली पिपली, वटवार, पालखी, पिलखन। वंगाल—पाकर। तेलगू—वादि जुव्वी। तामील—जोभी, गुरुगु। लेटिन—Faious lacor (फाइकस लेकर)।

वर्णन—

यह एक वड़ी जाति का पीपल के वर्ग का वृक्ष होता है इसकी ऊंचाई ४० से ५० फीट तक होती है। इसकी पत्तियां वीच वीच में झड़ती रहती हैं। इसके सभी हिस्से चिकने होते हैं, छाल भूरे रंग की चिकनी होती है और छिलकों में निकाली जा सकती है। पत्तियां लम्वी कुछ गोलाकार लिये होती है और नोकदार भी होती है। इसका फल चौथाई इंच तकके घेरे में होता है। इसका आकार कोटके गोल वटन की तरह होता है। पकने पर इस फल का रंग सफेद होता है।

यूनानीके प्रसिद्ध ग्रन्थ तालीफ शरीफमें लिखा है कि इसकी एक जाति ऐसी भी होती है, जिसका फल पैदाइशके वक्त उड़दके बराबर होता है और पकनेके बाद विलायती सेवके बराबर हो जाता है। ऐसा कहा जाता है कि इसका एक वृक्ष देहलीके बादशाही किले में अब तक मौजूद है। इस किलेके बननेके पहले भी यह वृक्ष यहां मौजूद था। किले वाले इसकी जड़ में दूध डलवाते थे और इसके फल मुरब्बा तैयार करवाते थे। यह तिल्लीकी सूजनके लिए बहुत मुफीद होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदके मतसे पाकर कड़वा, कसेला, शीतल, रक्तदोषनाशक तथा मूर्च्छा, भ्रम, प्रलाप, योनिरोग, दाह, पित्त, कफ, रुधिरविकार, सूजन और रक्तपित्तको दूर करनेवाला होता है। छोटे पत्ते वाला पाकर अधिक गुण वाला होता है।

यूनानी मत—

यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जेमें सर्द और तर होता है। फोड़े फुन्सी सूजन और रक्त विकारमें यह मुफीद है। फैलनेवाली फुन्सियों पर भी यह लाभदायक है। इसका दूधिया रस कब्जियत पैदा करता है। इसके पत्ते और छालको पानीमें भिगोकर सवेरे उस पानीको छानकर शक्कर मिलाकर पीनेसे फोड़े फुन्सी, खुजली और दूसरे चर्मरोगोंमें फायदा होता है। कफ और पित्तकी खराबीसे होनेवाले ज्वरमें इसकी छालका काढ़ा लाभ पहुँचाता है। इसकी छालके काढ़े से कुल्ले करनेसे दांतोंका दर्द मिट जाता है।

स्त्रियोंके श्वेतप्रदरमें इसकी छालके काढ़ेसे योनिमें पिचकारी लगाना चाहिए। इसके फल का रस निकाल कर पीनेसे हृदयको ताकत मिलती है, जठराग्नि प्रबल होती है, और भूख बढ़ती है। इसकी बड़ी जातिके फलका मुरब्बा तिल्लीकी बीमारीमें मुफीद है। यह मेदेको शक्ति देता है तथा खून और पित्तके विकारको शान्त करता है।

इसके फल खट्टे होते हैं और इसके बीज ब्रोंकाइटिज, पित्त प्रकोप तथा गीली खुजलीमें मुफीद होते हैं।

इसकी छाल को बड़, पीपल, गूलर और नीम की छालके साथ मिलाकर एक क्वाथ बनाया जाता है जिसको आयुर्वेद में पंच वल्कल क्वाथ कहते हैं। यह क्वाथ व्रणोंको धोने और श्वेत प्रदरमें पिचकारी देनेके काममें लिया जाता है और इससे बहुत लाभ पहुँचता है।

पाथरी

नाम :—

संस्कृत—गोलोमिका। बम्बई—पाथरी। गुजराती—भोंपाथरी। हिन्दी—पाथरी, वनकाऊ। मराठी—पाथरडी, भोंपातरी। काठियावाड़—कोरमानी। सिन्ध—बनकाहू। लेटिन—Launaea Pinntifida (लानिया पिनेटीफिडा)।

वर्णन—

यह छोटी जाति की वनस्पति सब दूर रेतीली जमीनमें पैदा होती है। यह जमीन पर फैली हुई रहती है। इसकी जड़ें और पत्ते थोड़े थोड़े अन्तर पर रहते हैं। पत्ते गुच्छोंमें रहते हैं। इसके फूल पीले रंग के होते हैं। इसकी जड़ें मांसल और ताजी हालत में पीले रंग की रहती हैं।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिकमत—आयुर्वेदिक मतसे पाथरी कड़वी, शीतल, ग्राही और दुग्धवर्धक होती है। इसके पत्तों की तरकारी बनाकर देनेसे प्राचीन चर्मरोग, यकृत् वृद्धि और अजीर्ण रोग दूर होते हैं। शरीरके अन्दर इसकी क्रिया भांगरेके समान होती है। इसके स्वरसमें मुलेठी मिलाकर देनेसे स्त्रियों का दूध बढ़ता है और खांसी मिटती है।

लासवेलामें यह औषधि ज्वर निवारक मानी जाती है। इसके पत्तों को पीसकर मस्तक पर लेप किया जाता है। जिससे सिर दर्द भी दूर होता है और ज्वर में भी कमी होती है।

पापरी

नाम :—

संस्कृत—पर्पटी, तिर्यक फल, निशान्धा, सुपत्रिका इत्यादि। हिन्दी—पापरी। मराठी—पापड़ी। बंगाली—कुकुर्चर। लेटिन—Ixora Paniculata (एक्सोरा पेनीकुलेटा)।

यह एक झाड़ीनुमा पौधा पहाड़ी जमीनोंमें पैदा होता है। इसकी जड़ें ऊबड़ खाबड़ होती हैं। इसकी जड़ को छाल सख्त होती है मगर इसकी बाह्य त्वचा कागजके समान

पतली और भूरे रंग की होती है। इस पौधे का स्वाद कड़वा और तीखा होता है। इसके अन्दर बहुत मनोहर गन्ध आती है।

गुणदोष और प्रभाव—

यह वनस्पति कड़वी और आनुलोमिक होती है। इसकी जड़ को सोंठके साथ मिलाकर देनेसे पेटके रोग और कब्जियत दूर होती है। बवासीर पर इसके पत्तों का सेक करने से लाभ होता है।

पाटली

नाम—

संस्कृत—अपियद्रुम, भूरिफल, पाण्डुफली, श्वेतकम्बोज, पाटली। हिन्दी—पाटली। मराठी—पांढरफली। गुजराती—शेंणवी। काठियावाड़—तुमड़ी। पंजाब—भाटी, गार्गस, गिर्क, गिर्यान, काकुन बनूथी। तामील—इस बुलाई, मुदबुलंगी। तेलगू—चेल्लामोंटा, पुली। लेटिन—Fluegga Leucopyrus. (फ्लुईगा ल्युकोपाइरस)।

वर्णन—

यह एक बड़े आकारकी झाड़ी होती है। इसकी डालिया अलग अलग बिखरी रहती हैं। इसकी टहनियां त्रिकोणाकार, पतली और पत्तियोंसे भरी रहती है। इसके पत्ते लम्बाईमें १.६ से २.५ संटीमीटर तक लम्बे और १.३ से १.६ तक चौड़े होते हैं। इसके फूल गुच्छेदार होते हैं। नरजातिके फूल अधिक लम्बे होते हैं। इसके फल गोलाकार होते हैं पकने परसे बिलकुल सफेद और चिकने हो जाते हैं।

यह वनस्पति पंजाब, सिन्ध, सीलोन और बर्मामें पायी जाती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मतसे पाटली मधुर, बलकारक, वीर्यवर्धक, शीतल तथा मूत्राघात, पित्तरोग, मूत्रकृच्छ और रुधिरके विकारोंको दूर करनेवाली होती है।

राजनिघन्टुके मतानुसार पाटली शीतल, बलवर्धक, पित्तनाशक और मूत्राघातको दूर करनेवाली होती है। इसके पत्तोंका रस अथवा इसके पत्तोंका तम्बाकूके साथ पीसकर तैयार किया हुआ लेप कष्टयुक्त घावोंपर लगानेसे लाभ होता है। यह पौधा मछलियोंके लिए विष है।

पानी आंवला

नाम—

संस्कृत—प्राचीनामलक, पानीआमलक। हिन्दी—पानी आंवला, पनियाला। गुजराती—पाणी आंवला, तालीस पत्री। बंगाली—पनिआल। मराठी—पान आंवला, ताम्बट। बम्बई—जंगम, ताम्बट। देहरादून—जमनुआ, पचनाला। कोकण—जगोमी। फ़ारसी—तालीसपत्र। तामील—सेरालु, तालिसम। तेलगू—कुरागई लेटिन—Flacourtia Cataphracta. (फ्लाकोर्टिया केटफ्रेक्टा)।

वर्णन—

यह एक बड़ी और हमेशा हरी रहनेवाली झाड़ी अथवा एक छोटी जातिका फैलनेवाला वृक्ष होता है। इसकी ऊँचाई नौ मीटर और इसके पिण्डकी गोलाई ७५ सेण्टिमीटर होती है। यह वृक्ष बङ्गालमें लगाया जाता है और दक्षिण भारतके जङ्गलोंमें पानीके किनारे अपने आप भी पैदा होता है। इसके पत्ते पांचसे लेकर दस सेण्टीमीटर तक लम्बे और २.३ से ३.८ सेण्टीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फलोंको आकृति आंवलेके समान होती है। प्रत्येक फल में पांच छ बीज रहते हैं। यह वनस्पति कुमाऊँ, उड़ीसा, लोअर बंगाल, आसाम और चटगांव तथा दक्षिणी भारतमें पैदा होती है।

गुणदोष और प्रभाव—

आयुर्वेदिक मत—निघण्टु रत्नाकरके मतानुसार पानी आंवला मधुर, रुचिकारक, भारी, गरम, त्रिदोपनाशक, तथा कफ तृषा और वातका नाश करनेवाला है। इसका पका हुआ फल कफ और पित्तको बढ़ानेवाला है।

राजनिघण्टुके मतानुसार पानी आंवला मलरोधक, अम्ल, रुचिकारक और मुखशोधक होता है।

भावप्रकाशके मतानुसार यह त्रिदोषनाशक और ज्वरको हरनेवाला है।

इसका स्वाद पहले कुछ मीठा और फिर खट्टा होता है। यह अग्निवर्द्धक, पाचनशक्तिको सहायता देनेवाला, प्यासको बुझानेवाला और पित्तके उपद्रवोंको शान्त करनेवाला होता है। त्रिदोष, ज्वर और वातमें भी यह लाभदायक है।

यूनानी मत—

यूनानी मत से इसके पत्ते और छाल कुछ कड़वी और खट्टी होती है। यह अतिसार,

ववासीर, और कमजोरीको दूर करता है। ममूड़ोंसे निकलनेवाले खून दन्तशूल, मुखशोथ, में यह लाभदायक है।

इसका फल दूसरे खट्टे फलोंकी तरह पित्त प्रकोपके अन्दर उपयोगी समझा जाता है और वमन इत्यादि पित्तके प्रकोपसे होनेवाले उपद्रवोंमें वास्तवमें यह बहुत लाभ पहुँचाता है। इसके पत्तोंमें संकोचक और अग्निवर्द्धक तत्व रहते हैं और ये अतिसार और कमजोरीमें सफलतापूर्वक दिये जाते हैं। इसके पत्तोंमें पसीना लानेवाले तत्व भी रहते हैं।

ला—रियूनियनमें इसकी छाल मूत्रल और संकोचक वस्तुकी तरह उपयोग में ली जाती है।

इसका उपयोग साधारणतया आलूबुखारेके समान किया जा सकता है।

पापरी (२)

नाम :—

संस्कृत—वक्रा, गिरिपर्पट, हंसपद, वैशाख सेव। हिन्दी—पापरी, भवनवकरा, वकरा चिम्याक, निविषी, पीलीजाति। गुजराती—वेनीवेल। मराठी—पड़वेल, पाप्रा। काश्मीर—वनवैंगन पंजाव—वनककरी, बनकाकरा, चिम्याक, च्याकरी, गुलककरी, काकरा, वनवैंगन। लेटिन—Podophyllum Emodi (पोडोफिलम एमोड़ी) अंग्रेजी—may Apple, (मे एपल)।

वर्णन—

यह छोटी जातिकी क्षुद्र वनस्पति हिमालयमें हजारा और कश्मीरसे सिकिम तक पैदा होती है। कुनवार और काश्मीरमें इसके पौधे बहुत होते हैं। गरमीके दिनोंमें इसके सफरचंद के समान लाल रंगके किन्तु छोटे अनेक बीजों वाले फल लगते हैं जो खानेके काममें आते हैं। इसकी जड़में एक गठान रहती है। यह गठान कुछ पीले और भूरे रंगकी होती है। गठान औषधि प्रयोगमें कामरों आती है। इसका स्वाद कड़ुवा और तीखा होता है।

गुणदोष और प्रभाव—

पापरी पित्त सारक और विरेचक होती है। इसके देनेसे पेटमें काट होकर बहुतसे पतले और पीले रंगके दस्त होते हैं।

डा० देसाईके मतानुसार यह वनस्पति ... त प्रकृति वाले मनुष्योंको होनेवाली कब्जियतमें दी जाती है। इससे यकृतका ... और उसकी सूजन उतर जाती है। इसको लेनेसे पेटमें मरोड़ चलती है इसलिए इसको ... तानी अजवायन अथवा दूसरे और किसी सुगन्धित द्रव्यके साथ लेना चाहिए। विषम ज्व ... जब यकृत बढ़ जाता है और दस्त साफ नहीं होता है तब इस वनस्पतिका जुलाव दिया ... है। आमवात, वातरक्त, और दूसरे चर्मरोगोंमें पेटकी शुद्धिके लिए इसका उपयोग किया जाता है।

कोमानका कथन है कि इस औषधिको टिंक्चरके रूपमें छः बीमारोंको दी गई और इस टिंक्चरमें वे सब तत्व पूर्ण कर दिये गए थे जो ब्रिटिश फर्माकोपियामें सम्मत पोडोफिलनमें रहते हैं। इसके प्रयोगसे मालूम हुआ कि यह यकृतको उत्तेजना देती है और पित्तको विरेचन के द्वारा बाहर निकाल देती है।

रासायनिक विश्लेपण—

इसके रासायनिम विश्लेपणसे पता चलता है कि भारतमें पाई जानेवाली इस वनस्पति में और अमेरिकामें पाई जानेवाली इसी जातिकी वनस्पतिमें एक समान तत्व रहते हैं। इसके अन्दर पाया जानेवाला प्रधान तत्त्व पोडोफिलोटोक्सिन (Podophyllotoxin) है। जो इसमें २ से ५ प्रतिशत तक पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें एक प्रकारकी बिना रवेकी राल (Resin) और पोडोफिलोरजिन नामक तत्व भी पाये जाते हैं।

मात्रा—इसकी मात्रा २ से ५ रत्ती तक है।